Impact Factor : 7.834

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037
July-August 2025
Volume 13, Issue 7-8

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :
Dr. Rekha Soni

Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

www.ginajournal.com

संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 13 | अंक : 7–8 (3) | जुलाई – अगस्त : 2025 | आई एसएसएन : 2321–8037

सम्पादक :

डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि.,
श्रीगंगानगर – 3 3 5001 (राज.)

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. लक्ष्मी जोशी
त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।

डॉ. सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स
एंड कम्युनिकेशन,
सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर
गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्री श्रेष्ठ चौधरी,
सीनियर मैनेजर,
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया,
साहिबजादा अजित सिंह नगर,
मोहाली, पंजाब।

कानूनी सलाहकार :
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप
ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट
हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी
सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरू, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,
अंकारा विश्वविधालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग,** एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज,** पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी–127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerece, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा।
सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07–08
2.	वर्तमान समय में भारत के युवाओं की समस्याओं का एक अध्ययन	डॉ. चन्द्रशेखर सिंह	09–16
3.	मानव वन्य जीव सह-अस्तित्व एवं संघर्ष	डॉ. नीरज कारगवाल	17–20
4.	विविध समस्याओं का समाधान : एक परामर्श आधारित दृष्टिकोण	प्रो. बी. एल. जैन, डॉ. अमिता जैन	21–25
5.	క్రైస్తవ మిషనరీ – వైద్యరంగం	డా..జూరెడ్డి నిర్మల,	26–30
6.	ପରଜା ଆଦିବାସୀ ଲୋକଗୀତର ସାମାଜିକ-ସାଂସ୍କୃତିକ ଦିଗ (The Socio-Cultural Dimensions of Paraja Tribal Songs)	Dr. Prahallad Khilla	31-41
7.	मुगलकाल में महिलाओं का सामाजिक जीवन एवं स्त्रियों की स्थिति	आरती ओरिया	42–45
8.	समाज, संस्कृति और साहित्य का पारस्परिक संबंध	डॉ. प्रियंका कुमारी	46–52
9.	वैदिक काल में स्त्रियों की दशा : एक अवलोकन	सुनीता कुमारी	53–57
10.	विद्यालयी शिक्षा के साथ चित्रकला- सोने पे सुहागा	सितेंद्र रंजन सिंह	58–61
11.	EVOLUTION OF MADHUBANI ART : UNFOLDING THE PETALS	SABHYATA RANI SINGH	62-66
12.	टेराकोटा : आधुनिक दुनिया में एक प्राचीन सामग्री	समरेंद्र रंजन सिंह	67–70
13.	मधु कॉंकरिया के उपन्यास 'सेज पर संस्कृत' में चित्रित स्त्री चेतना	अनिता रानी, डॉ. मीनू	71–76
14.	नासिरा शर्मा के रचनाओं में स्त्री चेतना	रचना चौधरी, डॉ. तेलेम कमलावती देवी, डॉ. मो. मजीद मियाँ	77–81
15.	जीवनानुभवों के आरंभिक पक्ष को उभारती आत्मकथा 'आत्मस्वीकृति'	डॉ. सपना शर्मा, प्रीति शर्मा	82–86
16.	महिलाएं एवं आर्थिक निर्भरता (कुमाऊँ मण्डल के विशेष सन्दर्भ)	डॉ. श्वेता चनियाल	87–93
17.	PROPERTY RIGHTS OF MUSLIM WOMEN UNDER MUSLIM LAW	Tabassum Baig Dr. Farhat Khan	94-99
18.	महिला आत्मकथाकारों के आत्मकथा में स्त्री शोषित जीवन	प्रा. डॉ. गायके मुंजाजी मारोतराव	100–103

19.	**A.D.R. Mechanism in Resolving Matrimonial Dispute**	**Adv. Mrunal Ghate, Dr. Farhat Khan**	**104-116**
20.	**Transfer Pricing in India : Litigation Trends and Policy Recommendations for Dispute Resolution**	**Mamta Bhawanishanker Khandelwal**	**117-120**
21.	**Artificial Intelligence in Education : Transforming Teaching and Learning**	**Dr. Beena Sharma**	**121-125**
22.	विद्यालयों में ड्रॉप आउट के कारण और उपाय	राजीव प्रियदर्शनिम	126–130
23.	दक्षिण भारत की कोरागा जनजाति : एक अंतदृष्टि अध्ययन	नयना जैन, डॉ० सुमन कौशिक	131–135
24.	माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक-बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन	डॉ. राजपाल सिंह यादव, केदार सिंह	136–142
25.	आधुनिक परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता	ममता सुशील, डॉ. एकता भारद्वाज	143–147
26.	बक्सर जिला के दलसागर गांव में ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने में आधुनिक संचार तकनीक की भूमिका	नीतीश वर्धन	148–159
27.	डिजिटल मीडिया और युवा : सामाजिक संबंधों का बदलता स्वरूप	संदीप पारीक	160–163
28.	भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत और आधुनिक समाज : एक दार्शनिक अध्ययन	डॉ. झंवर राम	164–166
29.	गया जी जिला के नेपा गांव के आधुनिक समय में बदलते हुए समाज का एक समाजशास्त्रियों अध्ययन	डॉ. संध्या कुमारी	167–174
30.	**Gandhi and Ahimsa : The Power of Truth and Love**	**Dr Ravi**	**175-180**
31.	**Impact of Digital Media on the Aspirations of Young Rural Women : A Study of Villages in Samastipur District, Bihar**	**Dr. Punam kumari**	**181-189**
32.	कोविड-19 महामारी का शिक्षा व्यवस्था पर प्रभाव - अवसर और चुनौतियाँ	**Dr. Praveen Sharma**	**190-195**
33.	उच्च शिक्षा में आयुर्वेद, योग और कल्याण	**Dr. Ravat Ram Pareek**	**196-203**

सम्पादक की कलम से.....

साहित्य और समाज : समय के संग संवाद

वर्तमान दौर में जब समाज बहुआयामी संकटों और संभावनाओं के द्वंद्व में फंसा हुआ है, साहित्य की भूमिका और भी अधिक प्रासंगिक हो जाती है। साहित्य केवल कल्पनाओं का ताना–बाना नहीं है, यह समाज की आत्मा का आईना है। 'गीना शोध संगम' के जुलाई–अगस्त अंक में हम इसी आत्मा की पड़ताल करने का विनम्र प्रयास कर रहे हैं – एक ऐसे विमर्श की ओर जो न केवल ज्ञानवर्धक हो, बल्कि संवेदनाओं को भी स्पर्श करे।

यह अंक साहित्य, समाज और संस्कृति की त्रिवेणी में डुबकी लगाने का आमंत्रण है, जहां विचार, संवेदना और विवेक के साथ विभिन्न लेखकों ने समसामयिक विषयों की पड़ताल की है। आज जब तकनीक ने सूचनाओं को तेजी से फैलाना शुरू कर दिया है, तब यह जरूरी हो गया है कि हम इस प्रवाह में मूल्य, मर्यादा और मौलिकता को बनाए रखें। गीना शोध संगम का यह विशेषांक उसी प्रयोजन की एक कड़ी है – जहाँ शोध, समीक्षा और सृजन के तीनों स्तरों को संतुलित दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है।

साहित्य : समय की चेतना :–

साहित्य महज अक्षरों का संकलन नहीं, बल्कि एक कालबद्ध चेतना है जो युगों को पार कर संवेदना की मशाल थामे चलती है। कबीर, तुलसी, मीरा से लेकर प्रेमचंद, अज्ञेय, नागार्जुन और समकालीन कवियों तक हर युग में साहित्य ने न केवल सामाजिक विसंगतियों को रेखांकित किया, बल्कि वैकल्पिक सोच को जन्म भी दिया। इस अंक में प्रकाशित शोध आलेखों और समीक्षाओं में यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि साहित्य आज भी मनुष्य को मनुष्यता की ओर लौटने का आमंत्रण देता है।

शोध की दृष्टि से सृजन की गहराई :–

पत्रिका के इस अंक में शामिल शोधार्थियों और लेखकों ने भारतीय साहित्य के विविध पक्षों – जैसे दलित विमर्श, नारी चेतना, ग्रामीण यथार्थ, शिक्षण में साहित्य की भूमिका, और वैश्विक साहित्य में भारतीयता पर अत्यंत गंभीर और संतुलित विवेचन किया है। उनकी यह विशेषता रही कि उन्होंने न केवल सैद्धांतिक विमर्श किया, बल्कि व्यावहारिक पहलुओं को भी सामने रखा। यह शोध न केवल विद्वानों के लिए उपयोगी हैं, बल्कि विद्यार्थियों और सामान्य पाठकों को भी दिशा देने में सक्षम हैं।

समाज और साहित्य : एक अविभाज्य रिश्ता :–

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि साहित्य समाज से कटकर जीवित नहीं रह सकता और न ही समाज साहित्य से विमुख होकर अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ा रह सकता है। इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ इस तथ्य की पुष्टि करती हैं। चाहे वह ग्रामीण परिवेश की समस्याओं पर आधारित लघु कथाएँ हों या स्त्री–विमर्श पर केंद्रित आलोचनात्मक लेख, सभी में यह अनुभव किया जा सकता है कि साहित्यकार अपने समय की नब्ज को पहचान रहा है।

युवा कलम और नवोन्मेष :–

हमें यह कहते हुए गर्व हो रहा है कि इस अंक में अनेक नवोदित लेखकों और शोधकर्ताओं की रचनाएँ भी शामिल की गई हैं। युवा पीढ़ी की यह कलम नई दृष्टि, नई संवेदना और नवीन सोच के साथ उभर रही

है। इनकी रचनाओं में आधुनिक जीवन की उलझनें, तकनीकी युग की जटिलताएँ और सामाजिक संरचनाओं की टूटन साफ दिखाई देती है। यह इस बात का संकेत है कि आने वाला समय साहित्यिक दृष्टि से और भी समृद्ध और सजग होगा।

शोध, सृजन और संवाद : तीन ध्रुवों की एकता :-

'गीना शोध संगम' का यह अंक केवल एक साहित्यिक संकलन नहीं, बल्कि एक संवाद है – शोध और सृजन के मध्य। यह संवाद न केवल पाठक और लेखक के बीच होता है, बल्कि समाज और विचार के मध्य भी एक सेतु का कार्य करता है। इस अंक की विशेषता यह भी है कि इसमें रचनात्मक साहित्य के साथ–साथ विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक दृष्टिकोण को भी समान महत्व दिया गया है।

सतत् यात्रा की एक और कड़ी :-

हर अंक हमारे लिए एक नए पड़ाव की तरह होता है। नयी चिंताओं, नए विमर्शों और नए उत्तरदायित्वों से भरपूर। यह अंक भी इसी क्रम की एक कड़ी है। हम यह स्वीकारते हैं कि साहित्यिक और शोध क्षेत्र की यह यात्रा कभी पूर्ण नहीं होती। यह एक सतत प्रयास है – समाज, शिक्षा, संस्कृति और चिंतन के बीच संतुलन स्थापित करने का।

अंत में, हम गीना शोध संगम के सभी लेखकों, शोधार्थियों, संपादन सहयोगियों और पाठकों का आभार प्रकट करते हैं, जिनकी सहभागिता इस अंक को समृद्ध बनाती है। हम आशा करते हैं कि यह अंक आपको न केवल विचारों में नवीनता देगा, बल्कि आपको आपके सामाजिक सरोकारों के प्रति भी और अधिक सजग करेगा।

साहित्य–संधान–संवाद की यह परंपरा यों ही चलती रहे। – इसी मंगलकामना के साथ...

संपादक

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 9-16

वर्तमान समय में भारत के युवाओं की समस्याओं का एक अध्ययन

डॉ. चन्द्रशेखर सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, समाज कार्य विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

परिचय (Introduction)

भारत एक युवा देश है, जहां की कुल जनसंख्या का लगभग 65% हिस्सा 35 वर्ष से कम आयु का है। यह जनसांख्यिकीय लाभांश (Demographic Dividend) देश के विकास के लिए एक अपार संभावना प्रस्तुत करता है, लेकिन साथ ही यह युवाओं के सामने खड़ी अनेक चुनौतियों को भी उजागर करता है। वर्तमान समय में भारत के युवा एक ओर आधुनिकता, वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और डिजिटल युग की सुविधाओं से जुड़े हैं, तो दूसरी ओर वे बेरोजगारी, मानसिक तनाव, शिक्षा की गुणवत्ता, सामाजिक असमानता, नशाखोरी, रिश्तों की अस्थिरता, और भविष्य की अनिश्चितताओं जैसी कई समस्याओं से भी जूझ रहे हैं। युवाओं के जीवन की जटिलताएं केवल आर्थिक या शैक्षिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी गहराई से अनुभव की जा रही हैं। पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक जीवनशैली के बीच टकराव, परिवार और समाज से अपेक्षाओं का दबाव, सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव, और कैरियर निर्माण की प्रतिस्पर्धा – ये सभी वर्तमान पीढ़ी के युवाओं को एक अनिश्चित मानसिक स्थिति में डाल रहे हैं। भारत विश्व का सबसे युवा देश माना जाता है, जहां की औसत आयु लगभग 29 वर्ष है। युवा जनसंख्या किसी भी राष्ट्र की रीढ़ होती है जो देश के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास की दिशा तय करती है।

वर्तमान समय में भारत के युवा न केवल परंपरागत मूल्यों से जुड़े हैं, बल्कि वे वैश्विक सोच, डिजिटल युग, और नवाचार की ओर भी तेजी से अग्रसर हैं। इसके बावजूद, भारत के युवाओं को अनेक प्रकार की समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जो उनके सर्वांगीण विकास में बाधा उत्पन्न कर रही हैं।

1. बेरोजगारी और शिक्षा के बीच असंतुलन :-

युवाओं की सबसे बड़ी समस्या आज भी बेरोजगारी है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद रोजगार की कमी, या योग्यता के अनुरूप रोजगार न मिल पाना, युवाओं में निराशा का कारण बनता जा रहा है। शिक्षा प्रणाली और उद्योग जगत के बीच तालमेल की कमी, कौशल विकास की अपर्याप्तता और सरकारी योजनाओं का सीमित प्रभाव इस समस्या को और गहरा बना रहे हैं।

2. मानसिक स्वास्थ्य और तनाव :–

प्रतिस्पर्धा, असुरक्षा, और सामाजिक अपेक्षाओं के दबाव के कारण मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएं युवाओं में तेजी से बढ़ रही हैं। अवसाद, चिंता, अकेलापन, आत्महत्या की प्रवृत्ति आदि अब सामान्य होते जा रहे हैं। मानसिक स्वास्थ्य पर खुलकर चर्चा न होना और चिकित्सा सुविधाओं की कमी स्थिति को और गंभीर बना रही है।

3. नशे की लत और सामाजिक भटकाव :–

शहरी और अर्ध–शहरी क्षेत्रों में युवाओं में नशाखोरी, ड्रग्स, शराब और तंबाकू के सेवन की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इसके पीछे बेरोजगारी, मानसिक तनाव, अनुचित संगति और परिवार का कमजोर नियंत्रण जैसे कई कारण हैं। यह सामाजिक अपराधों की ओर भी युवाओं को आकर्षित कर रहा है।

4. डिजिटल डिवाइड और सोशल मीडिया का प्रभाव :–

हालांकि इंटरनेट और सोशल मीडिया ने युवाओं को वैश्विक स्तर पर जोड़ा है, लेकिन इसके दुष्प्रभाव भी उतने ही गंभीर हैं। स्क्रीन टाइम में अत्यधिक वृद्धि, सोशल मीडिया की आभासी दुनिया में खो जाना, असत्यापित सूचनाओं का प्रभाव, और आत्म–सम्मान की हानि जैसी समस्याएं गहराई से जुड़ी हुई हैं।

5. सांस्कृतिक द्वंद्व और पहचान का संकट :–

युवाओं के सामने एक सांस्कृतिक संघर्ष भी है जहां वे पारंपरिक मूल्य और आधुनिक जीवनशैली के बीच संतुलन बनाने में संघर्ष कर रहे हैं। पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण, पारिवारिक संबंधों में दूरी, और विवाह–संतान जैसे परंपरागत विचारों से विमुखता, युवाओं में अस्मिता (Identity) के संकट को जन्म दे रही है।

6. राजनीतिक सहभागिता और वैचारिक भ्रम :–

जहाँ एक ओर युवा लोकतंत्र की दिशा तय कर सकते हैं, वहीं दूसरी ओर उनकी राजनीतिक जागरूकता, वैचारिक स्थिरता और सहभागिता में कमी देखी जा रही है। सोशल मीडिया के प्रचार–प्रसार ने राजनीतिक सोच को विकृत भी किया है।

सैद्धांतिक पृष्ठभूमि (Theoretical Background) :–

किसी भी सामाजिक समस्या को समझने के लिए उसका विश्लेषण विभिन्न सामाजिक–सैद्धांतिक दृष्टिकोणों से किया जाना आवश्यक होता है। भारत के युवाओं की वर्तमान समस्याओं की गहराई में जाने के लिए हम समाजशास्त्र, मनोविज्ञान तथा विकास अध्ययन की प्रमुख सैद्धांतिक अवधारणाओं का उपयोग कर सकते हैं। नीचे कुछ प्रमुख सैद्धांतिक ढाँचों को प्रस्तुत किया गया है जो इस अध्ययन के आधार स्तंभ हैं :–

1. एरिक एरिक्सन का 'मनोसामाजिक विकास सिद्धांत' (Erikson's Psychosocial Development Theory) :–

एरिक्सन के अनुसार, युवा अवस्था (Adolescence to young adulthood) की प्रमुख चुनौती होती है : 'पहचान बनाम भ्रम' (Identity vs- Role Confusion)। इस चरण में व्यक्ति अपनी पहचान की खोज करता है – चाहे वह सामाजिक हो, सांस्कृतिक, या व्यक्तिगत। यदि यह खोज स्पष्ट न हो, तो युवा भ्रम, असुरक्षा और मानसिक तनाव का शिकार हो सकता है। भारत में वर्तमान युवा इसी द्वंद्व का अनुभव कर रहा है, जहाँ वह पारंपरिक मूल्यों और आधुनिकता के बीच उलझा है।

2. रॉबर्ट के. मर्टन का 'अवसर संरचना सिद्धांत' (Strain Theory) :–

मर्टन के अनुसार, जब समाज में स्वीकार्य लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समान अवसर उपलब्ध नहीं होते, तब सामाजिक तनाव उत्पन्न होता है, जिससे व्यक्ति अवांछनीय रास्ते अपनाने लगता है। भारत में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी रोजगार की कमी, अवसरों में असमानता, और सामाजिक न्याय की अनुपलब्धता, युवाओं में हताशा, आक्रोश और असंतोष को जन्म देती है।

3. युवावस्था का संक्रमण काल (Transition to Adulthood Theory) :–

यह सिद्धांत बताता है कि युवा एक ऐसे संक्रमण से गुजरते हैं जिसमें उन्हें शिक्षा, रोजगार, आत्मनिर्भरता, और पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच संतुलन स्थापित करना होता है। यदि यह संक्रमण सुचारु न हो, तो युवा अस्थिरता, असफलता और सामाजिक दूरी का अनुभव करता है। भारत में यह संक्रमण कई स्तरों पर अवरुद्ध है – जैसे शिक्षा से रोजगार की दूरी, आत्मनिर्भरता के लिए संसाधनों की कमी आदि।

4. एंथनी गिडेन्स का 'आधुनिकता का सिद्धांत' (Theory of Modernity and Reflexivity) :–

गिडेन्स ने आधुनिक समाज में आत्म–परावर्तन (self-reflexivity) की भूमिका को महत्वपूर्ण बताया है। युवा अब अपने जीवन के निर्णयों को बार–बार मूल्यांकित करते हैं, जैसे : शादी करना या नहीं, कैरियर बदलना, प्रवासी जीवन अपनाना आदि। यह सतत आत्म–मूल्यांकन कई बार मानसिक उलझनों और पहचान संकट को जन्म देता है। यह प्रवृत्ति भारत के शहरी युवाओं में विशेष रूप से देखी जा रही है।

5. डिजिटल युग और 'नेट–जेनरेशन थ्योरी' (Net Generation Theory) :–

यह सिद्धांत बताता है कि आज का युवा डिजिटल रूप से जन्मा और पला है, जिसके सोचने, सीखने और संवाद करने के तरीके पारंपरिक पीढ़ियों से भिन्न हैं। हालांकि डिजिटल मीडिया ने उन्हें वैश्विक नागरिक बनाया है, परंतु साथ ही यह आभासीता, आत्म–तुलना, डिजिटल असुरक्षा और सतही संबंधों जैसी समस्याओं को भी जन्म दे रहा है।

6. भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य :–

भारतीय संदर्भ में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जाति व्यवस्था, क्षेत्रीय विषमता, लिंग आधारित भेदभाव और संसाधनों की असमानता : सभी युवाओं के समक्ष विशेष समस्याएं उत्पन्न करते हैं। ग्रामीण–शहरी विभाजन, महिला और पुरुष युवाओं की समस्याओं में अंतर, तथा राज्यवार विकास असंतुलन : ये सभी भारत में युवा मुद्दों की विशिष्ट जटिलताएं हैं।

मुख्य शोध उद्देश्य (Main Research Objectives) :–

1. भारत के वर्तमान युवाओं की प्रमुख समस्याओं की पहचान करना।

–जैसे : बेरोजगारी, मानसिक तनाव, नशाखोरी, शिक्षा–अवसर असमानता, डिजिटल प्रभाव, सामाजिक अस्थिरता आदि।

2. इन समस्याओं के सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कारणों का विश्लेषण करना।

–उदाहरण : पारिवारिक दबाव, असमान संसाधन वितरण, रोजगार बाजार की जटिलता, और तकनीकी परिवर्तन।

3. समाज, सरकार और परिवार की भूमिका का मूल्यांकन करना।

–युवाओं को सहयोग देने में इन संस्थाओं की भूमिका कितनी प्रभावी है?

4. शहरी एवं ग्रामीण युवाओं की समस्याओं की तुलना करना।
–अवसरों, संसाधनों, सोच एवं चुनौतियों में क्या भिन्नता है?

5. युवाओं के दृष्टिकोण, अपेक्षाओं और संघर्षों को समझना।
–वे क्या सोचते हैं? उनकी प्राथमिकताएं क्या हैं? वे अपने भविष्य को किस रूप में देखते हैं?

6. वर्तमान नीतियों और योजनाओं की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
–जैसे : कौशल भारत योजना (Skill India), स्टार्टअप इंडिया, शिक्षा नीति आदि का प्रभाव।

7. समस्याओं के समाधान हेतु संभावित सुझाव और नीतिगत अनुशंसाएं देना।
–शिक्षा सुधार, मानसिक स्वास्थ्य सेवाएं, रोजगार नीति, डिजिटल साक्षरता आदि के संदर्भ में।

समीक्षा साहित्य (Review of Literature) :–

किसी भी सामाजिक अध्ययन की वैज्ञानिक वैधता और गहराई, पूर्व में किए गए शोधों और विद्वानों के विश्लेषण से मिलती है। भारत में युवाओं से संबंधित समस्याओं पर अनेक शोध, रिपोर्ट्स, नीतिगत दस्तावेज एवं सामाजिक चिंतकों द्वारा समय–समय पर कार्य किया गया है। इस खंड में उन प्रमुख अध्ययनों, सिद्धांतों और आंकड़ों का उल्लेख किया गया है जो वर्तमान अध्ययन को वैचारिक व पद्धतिगत आधार प्रदान करते हैं।

1. कोली, वी.आर. (2015) :

अपने शोध "Impact of Modernization on Family Values in Urban India" में कोली ने दर्शाया कि आधुनिकता ने पारिवारिक मूल्यों, विशेषतः बुजुर्गों और युवाओं के संबंधों में दरार पैदा की है। उन्होंने यह पाया कि शहरी युवा अधिक व्यक्तिगत स्वतंत्रता चाहते हैं और परंपरागत जिम्मेदारियों से बचने की प्रवृत्ति रखते हैं।

2. योजना आयोग एवं NITI Aayog रिपोर्ट्स (2010–2020) :

सरकारी योजनाओं जैसे Skill India, Digital India, Startup India आदि की विभिन्न रिपोर्टों में यह स्वीकार किया गया है कि युवाओं में बेरोजगारी, कौशल की कमी और डिजिटल साक्षरता की दर में असमानता देश की प्रमुख चुनौतियाँ हैं।

3. UNESCO Youth Report (2021) :

यह रिपोर्ट बताती है कि भारत में युवा शिक्षा तो प्राप्त कर रहे हैं, परंतु वह शिक्षा उन्हें वर्तमान आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप रोजगार प्राप्त नहीं करवा पा रही है। रिपोर्ट में मानसिक स्वास्थ्य, तकनीकी निर्भरता और सामाजिक अलगाव को भी युवाओं के लिए गंभीर समस्या माना गया।

4. डॉ. योगेंद्र यादव (CSDS, 2017) :

CSDS द्वारा किए गए "Lokniti – Youth Survey" में पाया गया कि 65 प्रतिशत युवा राजनीतिक व्यवस्था से निराश हैं और उनमें स्थायी करियर और आजीविका को लेकर चिंता प्रबल है। साथ ही, युवाओं में सामाजिक गतिशीलता की इच्छा तो है, परंतु अवसरों की असमानता उनके विकास में बाधा बनी हुई है।

5. अरोड़ा, सीमा (2018) :–

अपने शोध "Digital Impact on Urban Youth" में उन्होंने पाया कि सोशल मीडिया ने युवाओं के आत्म–विश्वास और संप्रेषण क्षमता को तो बढ़ाया है, पर साथ ही उनके मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव

डाला है, जैसे : अवसाद, तुलनात्मक भावना, और अकेलापन।

6. नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) :

एनसीआरबी के अनुसार 2020 और 2021 में युवाओं में आत्महत्या की दर में तीव्र वृद्धि दर्ज की गई, जिसका मुख्य कारण परीक्षा का दबाव, करियर की असफलता, प्रेम–संबंधों में तनाव और पारिवारिक दबाव था।

7. अंतरराष्ट्रीय सैद्धांतिक योगदान :

- Erikson (1968) के Psychosocial Theory के अनुसार युवाओं का "identity crisis" एक सामान्य परंतु संवेदनशील चरण है, जिसे अगर सामाजिक सहयोग न मिले तो यह गहरे मानसिक संकट में बदल सकता है।
- Robert K. Merton के Strain Theory के अनुसार जब सामाजिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए वैध साधनों की अनुपलब्धता होती है, तो युवा अक्सर विचलित हो जाते हैं।

निष्कर्ष :–

इस अध्ययन में विभिन्न साहित्य, आंकड़ों, सैद्धांतिक ढाँचों और प्रासंगिक रिपोर्ट्स के आधार पर भारत के युवाओं से संबंधित समस्याओं का समग्र विश्लेषण किया गया। विश्लेषण के आधार पर निम्नलिखित प्रमुख निष्कर्ष सामने आए हैं :–

1. बेरोजगारी युवाओं की सबसे बड़ी चिंता है :

अधिकांश युवा शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद रोजगार प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं, या जो अवसर हैं वे उनकी योग्यता और आकांक्षाओं के अनुरूप नहीं हैं। इसके पीछे कारण हैं–कौशल प्रशिक्षण की कमी, उद्योगों की जरूरत से शिक्षा प्रणाली का तालमेल न होना, और अवसरों में क्षेत्रीय असमानता।

2. मानसिक स्वास्थ्य एक उभरती हुई गंभीर समस्या है :

प्रतियोगिता, पारिवारिक अपेक्षाएं, सोशल मीडिया प्रभाव, और आर्थिक असुरक्षा ने युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित किया है। अवसाद, चिंता, आत्महत्या की प्रवृत्ति और आत्म–अवमूल्यन जैसी समस्याएं विशेष रूप से शहरी युवाओं में देखी गई हैं।

3. शिक्षा और कौशल विकास में अंतराल :

हालांकि उच्च शिक्षा का प्रसार हुआ है, परंतु व्यावसायिक और व्यवहारिक कौशल की कमी युवाओं को रोजगार के लिए अयोग्य बना रही है। ग्रामीण युवाओं में यह अंतराल और भी अधिक है।

4. डिजिटल मीडिया के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव हैं :

सोशल मीडिया और इंटरनेट ने युवाओं को अभिव्यक्ति, नेटवर्किंग और जानकारी के नए अवसर दिए हैं। लेकिन इसके अत्यधिक उपयोग से आत्म–संदेह, सतही संबंध, और ध्यान केंद्रित करने में समस्या जैसे प्रभाव भी सामने आए हैं।

5. पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक जीवनशैली के बीच द्वंद्व :

युवा पीढ़ी पारंपरिक सांस्कृतिक मूल्यों और आधुनिक स्वतंत्र जीवनशैली के बीच संघर्ष कर रही है। विवाह, परिवार, करियर और सामाजिक भूमिका को लेकर उनकी सोच में तेजी से बदलाव आ रहा है, जो सामाजिक अस्थिरता का कारण बन सकता है।

6. युवतियों के समक्ष लिंग आधारित समस्याएं अधिक जटिल हैं :

महिला युवाओं को न केवल समान अवसरों की कमी, बल्कि सामाजिक बाधाओं, असुरक्षा, और पारिवारिक नियंत्रण का भी सामना करना पड़ता है। शिक्षा और रोजगार में उनकी भागीदारी अभी भी अपेक्षा से कम है।

7. युवाओं की राजनीतिक चेतना में वृद्धि, परंतु सहभागिता सीमित :

आज का युवा राजनीतिक मुद्दों के प्रति अधिक जागरूक है, परंतु सक्रिय भागीदारी, मतदान, या नेतृत्व में उनकी भागीदारी अभी भी सीमित है। यह सोशल मीडिया आधारित षविचार चेतनाष अधिक है, पर जमीनी सहभागिता कम है।

8. ग्रामीण एवं शहरी युवाओं की समस्याएं भिन्न हैं :

जहाँ शहरी युवा मानसिक स्वास्थ्य और प्रतिस्पर्धा से जूझ रहे हैं, वहीं ग्रामीण युवा शिक्षा, इंटरनेट सुविधा, और मूलभूत अवसरों की कमी से परेशान हैं। यह अंतर सामाजिक असमानता को और बढ़ा रहा है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए युवा वर्ग केवल जनसंख्या का हिस्सा नहीं, बल्कि उसकी सबसे बड़ी शक्ति है। यह वर्ग राष्ट्र की दिशा और दशा को तय करने में केंद्रीय भूमिका निभाता है। किंतु वर्तमान अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि भारत के युवा आज जिस संक्रमण काल से गुजर रहे हैं, उसमें उन्हें कई प्रकार की जटिल, बहुआयामी और परस्पर जुड़ी हुई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। सबसे प्रमुख समस्या बेरोजगारी है, जो केवल आर्थिक चिंता ही नहीं बल्कि आत्मविश्वास, सामाजिक संबंधों और मानसिक स्वास्थ्य पर भी गहरा असर डाल रही है। इसके अतिरिक्त शिक्षा प्रणाली और रोजगार के बीच की खाई, मानसिक स्वास्थ्य संबंधी उपेक्षा, सामाजिक अपेक्षाओं का दबाव, और डिजिटल माध्यमों की भूमिका ने युवाओं के जीवन को जटिल बना दिया है। शहरी और ग्रामीण, पुरुष और महिला, संपन्न और वंचित – इन सभी वर्गों के युवाओं की समस्याएं अपने–अपने संदर्भ में अलग–अलग हैं, परंतु उनकी जड़ें एक समान सामाजिक–आर्थिक संरचनाओं में निहित हैं। सामाजिक परिवर्तन, पारिवारिक ढांचे में बदलाव और सांस्कृतिक गतिशीलता ने युवाओं की पहचान, मूल्यों और प्राथमिकताओं को प्रभावित किया है।

सुझाव (Recommendations) :-

भारत के युवा वर्ग को सशक्त, सक्षम और संतुलित बनाने के लिए केवल समस्या–विश्लेषण पर्याप्त नहीं है, बल्कि ठोस, व्यावहारिक और दीर्घकालिक समाधान प्रस्तुत करना भी अनिवार्य है। इस अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं जो नीति–निर्माताओं, शिक्षण संस्थाओं, सामाजिक संगठनों और स्वयं युवाओं के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं :

1. रोजगार और कौशल विकास को प्राथमिकता देना :

- स्थानीय स्तर पर युवाओं के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किए जाएं।
- शिक्षा के साथ–साथ इंटर्नशिप, अप्रेंटिसशिप और उद्यमिता कौशल को भी बढ़ावा दिया जाए।
- Skill India, Startup India जैसी योजनाओं का सक्रिय और प्रभावी क्रियान्वयन हो।

2. मानसिक स्वास्थ्य के लिए संरचनात्मक प्रयास :

- विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में काउंसलिंग केंद्रों की स्थापना अनिवार्य हो।

- मानसिक स्वास्थ्य पर सामाजिक जागरूकता अभियान चलाए जाएं ताकि अवसाद, आत्महत्या जैसी समस्याएं कम हों।
- सोशल मीडिया और मोबाइल के अत्यधिक उपयोग को नियंत्रित करने हेतु डिजिटल संतुलन पर शिक्षा दी जाए।

3. शिक्षा प्रणाली में सुधार और यथार्थ से जोड़ना :

- पाठ्यक्रमों को रोजगार उन्मुख, कौशल आधारित और जीवन–कौशल (life skills) के साथ जोड़ना आवश्यक है।
- शहरी और ग्रामीण विद्यालयों/कॉलेजों के बीच संसाधनों की समानता सुनिश्चित की जाए।
- डिजिटल साक्षरता और भाषा की बहुलता को बढ़ावा दिया जाए, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में।

4. युवाओं में सामाजिक उत्तरदायित्व और नैतिक मूल्यों का विकास :

- युवा संगठनों, NSS, NCC, Scouts आदि के माध्यम से स्वयंसेवी कार्यों में भागीदारी को बढ़ाया जाए।
- विद्यालय स्तर पर नैतिक शिक्षा, सामाजिक जागरूकता और सांस्कृतिक अध्ययन को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाए।

5. महिला युवाओं के लिए विशेष रणनीतियाँ :

- लैंगिक समानता को सुनिश्चित करने हेतु सुरक्षित परिवेश, छात्रवृत्ति, नेतृत्व प्रशिक्षण आदि को बढ़ावा दिया जाए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों की शिक्षा, आत्मरक्षा प्रशिक्षण और स्वास्थ्य सुविधाओं पर विशेष ध्यान दिया जाए।

6. युवा नीति और भागीदारी आधारित शासन प्रणाली :

- युवाओं की समस्याओं के लिए राष्ट्रीय युवा आयोग जैसे निकाय को और अधिक प्रभावी बनाया जाए।
- नीति निर्माण में युवाओं की भागीदारी को संस्थागत रूप दिया जाए : जैसे युवा संसद, युवा परामर्श समूह।
- क्षेत्रीय असमानता को देखते हुए राज्य–स्तरीय रणनीतियाँ तैयार की जाएं।

7. डिजिटल तकनीक का संतुलित उपयोग :

- डिजिटल शिक्षा के साथ–साथ मूल्य आधारित उपयोग, डिजिटल डिटॉक्स, और साइबर सुरक्षा की शिक्षा दी जाए।
- सोशल मीडिया के माध्यम से सकारात्मक विचार, प्रेरणा, और नवाचारों को बढ़ावा दिया जाए।

संदर्भ सूची :-

Erikson, E. H. (1968). Identity : Youth and Crisis. New York : W. W. Norton & Company.

1. Merton, R. K. (1957). Social Theory and Social Structure. New York : Free Press.
2. Giddens, A. (1991). Modernity and Self-Identity : Self and Society in the Late Modern Age. Stanford University Press.
3. Koeli, V. R. (2015). Impact of Modernization on Family Values in Urban India. International

Journal of Social Sciences and Humanities Research, 3(4), 22–31.
4. Arora, S. (2018). Digital Impact on Urban Youth : A Sociological Study. Journal of Youth Studies, 6(2), 55–70.
5. UNESCO. (2021). Youth and the Future of Work : Insights from Around the World. United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization.
Retrieved from https://unesdoc.unesco.org
6. NITI Aayog. (2020). Strategy for New India @ 75. Government of India.
Retrieved from https://niti.gov.in
7. Lokniti–CSDS. (2017). Indian Youth and Democracy : Attitudes, Aspirations and Political Participation. New Delhi: Centre for the Study of Developing Societies.
Retrieved from https://www.lokniti.org
8. National Crime Records Bureau (NCRB). (2021). Accidental Deaths & Suicides in India 2020. Ministry of Home Affairs, Government of India.
Retrieved from https://ncrb.gov.in
9. Ministry of Skill Development and Entrepreneurship. (2021). Annual Report 2020–21. Government of India.
Retrieved from https://www.msde.gov.in

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 17–20

मानव वन्य जीव सह–अस्तित्व एवं संघर्ष

डॉ. नीरज कारगवाल
सह आचार्य भूगोल, राजकीय महाविद्यालय बीबीरानी, अलवर।

परिचय :–

पृथ्वी केवल मनुष्यों का ही घर नहीं है, बल्कि असंख्य जीव–जंतुओं और वनस्पतियों का भी निवास स्थान है। सदियों से मानव और वन्यजीव एक–दूसरे के साथ रहते आए हैं। यह संबंध कभी सामंजस्यपूर्ण रहा है तो कभी संघर्षपूर्ण। हाल के दशकों में, यह संघर्ष चिंताजनक रूप से बढ़ा है, जो न केवल मानव जीवन और आजीविका के लिए खतरा बन गया है, बल्कि वन्यजीवों के अस्तित्व पर भी संकट के बादल मंडरा रहे हैं। इस जटिल मुद्दे को समझने और इसका समाधान खोजने के लिए मानव–वन्यजीव संघर्ष के कारणों, परिणामों और सह–अस्तित्व की संभावनाओं पर गहराई से विचार करना आवश्यक है। वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर के अनुसार, मानव–वन्यजीव संघर्ष को ''मनुष्यों और वन्यजीवों के बीच किसी भी तरह की अंतःक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसके परिणामस्वरूप मानव सामाजिक, आर्थिक या सांस्कृतिक जीवन, वन्यजीव आबादी के संरक्षण या पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है''। यह संघर्ष तब उत्पन्न होता है जब वन्यजीवों की उपस्थिति या उनका व्यवहार मानव हितों के लिए खतरा बन जाता है, जिससे लोगों, जानवरों, संसाधनों और आवासों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

मानव-वन्यजीव संघर्ष के बढ़ते कारण :–

मानव और वन्यजीवों के बीच बढ़ते संघर्ष के पीछे कई जटिल और एक–दूसरे से जुड़े हुए कारण हैं। इनमें से प्रमुख कारण मानवीय गतिविधियों का विस्तार और प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन है।

- **प्राकृतिक आवासों का विनाश और विखंडन :** बढ़ती मानव जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृषि, औद्योगीकरण, शहरीकरण और बुनियादी ढांचा परियोजनाओं (जैसे सड़क, रेल नेटवर्क) का तेजी से विस्तार हो रहा है। इसके कारण वनों की अंधाधुंध कटाई हो रही है, जिससे वन्यजीवों के प्राकृतिक आवास सिकुड़ रहे हैं और खंडित हो रहे हैं। आवास की हानि वन्यजीवों को भोजन और पानी की तलाश में मानव बस्तियों और कृषि क्षेत्रों की ओर आने के लिए मजबूर करती है, जिससे संघर्ष की संभावना बढ़ जाती है। एक अनुमान के अनुसार, भारत में लगभग तीस प्रतिशत बाघों का क्षेत्र– संरक्षित क्षेत्रों से बाहर है।
- **वन्यजीव गलियारों का अवरुद्ध होना :** वन्यजीव गलियारे वे प्राकृतिक रास्ते होते हैं जिनका उपयोग जानवर एक जंगल से दूसरे जंगल में जाने के लिए करते हैं। सड़कों, रेलवे लाइनों, नहरों और अन्य विकास परियोजनाओं के निर्माण से ये गलियारे अवरुद्ध हो गए हैं। इससे जानवरों की आवाजाही बाधित होती है और

वे अक्सर मानव बस्तियों में भटक जाते हैं, जो संघर्ष का एक प्रमुख कारण बनता है।

- **वन्यजीवों की आबादी में वृद्धि :** संरक्षण के प्रयासों के परिणामस्वरूप, कुछ प्रजातियों, जैसे कि बाघ और हाथी, की आबादी में वृद्धि हुई है। जबकि यह एक सकारात्मक विकास है, यह सीमित और खंडित आवासों में संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा को भी बढ़ाता है, जिससे संघर्ष की घटनाएं बढ़ती हैं।
- **भूमि उपयोग पैटर्न में बदलाव :** फसल पैटर्न में बदलाव भी वन्यजीवों को आकर्षित कर सकता है। उदाहरण के लिए, गन्ने जैसी फसलें हाथियों और अन्य शाकाहारी जानवरों के लिए आकर्षक हो सकती हैं, जिससे फसलों को भारी नुकसान होता है।
- **मानवीय हस्तक्षेप :** वनों में अवैध शिकार, लकड़ी की कटाई और अन्य मानव निर्मित दबाव वन्यजीवों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं और उन्हें अधिक आक्रामक बना सकते हैं।
- **जलवायु परिवर्तन :** जलवायु परिवर्तन भी पारिस्थितिक तंत्र को बदल रहा है और वन्यजीवों के व्यवहार, वितरण और भोजन की उपलब्धता को प्रभावित कर रहा है। इससे जानवरों की गतिविधियों में परिवर्तन हो सकता है, जिससे मानव के साथ उनके संपर्क की संभावना बढ़ जाती है।

संघर्ष के विविध रूप और उनके परिणाम :-

मानव–वन्यजीव संघर्ष के कई रूप हैं, जो स्थान और इसमें शामिल प्रजातियों के आधार पर भिन्न होते हैं।

- **फसल और संपत्ति का नुकसान :** हाथी, जंगली सूअर, नीलगाय और बंदर जैसे शाकाहारी जानवर अक्सर खेतों में घुसकर फसलों को नष्ट कर देते हैं, जिससे किसानों को भारी आर्थिक नुकसान होता है। हाथी घरों और अन्य संपत्तियों को भी नुकसान पहुंचा सकते हैं।
- **पशुधन पर हमले :** बाघ, तेंदुए और भेड़िये जैसे मांसाहारी जानवर अक्सर मवेशियों, बकरियों और अन्य पालतू जानवरों का शिकार करते हैं, जिससे पशुपालकों की आजीविका प्रभावित होती है।
- **मानव जीवन को खतरा :** सबसे गंभीर परिणाम मानव जीवन की हानि है। हाथी, बाघ, तेंदुए और भालू जैसे बड़े जानवरों के हमलों में लोग घायल हो जाते हैं और कभी–कभी उनकी मृत्यु भी हो जाती है। आंकड़ों के अनुसार, 2018–19 और 2020–21 के बीच, हाथियों के हमलों में 1,500 से अधिक लोगों की जान गई। इसी अवधि में, बाघों के हमलों में सौ से अधिक लोगों की मौत हुई।
- **वन्यजीवों पर प्रतिशोध :** संघर्ष की घटनाओं के जवाब में, लोग अक्सर प्रतिशोध यानि बदले की भावना में वन्यजीवों को मार देते हैं। यह अवैध शिकार या जहर देने के रूप में हो सकता है, जो पहले से ही संकटग्रस्त प्रजातियों की आबादी को और कम कर देता है।
- **मनोवैज्ञानिक प्रभाव :** वन्यजीवों के साथ लगातार संघर्ष और मुठभेड़ों से प्रभावित समुदायों में भय, चिंता और तनाव का माहौल बन जाता है।
- **संरक्षण प्रयासों में बाधा :** मानव–वन्यजीव संघर्ष संरक्षण के प्रति स्थानीय समुदायों के समर्थन को कम कर सकता है, जिससे संरक्षण के प्रयास जटिल हो जाते हैं।

भारत में मानव-वन्यजीव संघर्ष : एक गंभीर चुनौती :-

भारत, अपनी विशाल जैव विविधता और घनी मानव आबादी के साथ, मानव–वन्यजीव संघर्ष के लिए एक

हॉटस्पॉट है। यहां हाथियों, बाघों, तेंदुओं, भालुओं, साँप और अन्य जानवरों के साथ संघर्ष की घटनाएं आम हैं।

- **मानव–हाथी संघर्ष :** यह भारत में संघर्ष का सबसे व्यापक और गंभीर रूप है। हाथी फसलों को बड़े पैमाने पर नुकसान पहुंचाने और मानव मृत्यु के लिए जाने जाते हैं। आंकड़ों से पता चलता है कि कर्नाटक, असम, केरल, ओडिशा, झारखंड और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में हाथियों के हमलों से सैकड़ों लोगों की मौत हुई है।
- **मानव–बाघ संघर्ष :** बाघों की आबादी बढ़ने के साथ, विशेष रूप से संरक्षित क्षेत्रों के बाहर, मानव–बाघ संघर्ष भी बढ़ा है। सुंदरबन, मध्य भारत और पश्चिमी घाट के कुछ हिस्सों में यह एक बड़ी चिंता का विषय है।
- **मानव–तेंदुआ संघर्ष :** तेंदुए अक्सर मानव बस्तियों के पास पाए जाते हैं, जिससे पालतू जानवरों और कभी–कभी मनुष्यों पर भी हमले होते हैं।

संघर्ष से सह–अस्तित्व की ओर : समाधान और रणनीतियाँ :–

मानव–वन्यजीव संघर्ष को पूरी तरह से समाप्त करना संभव नहीं हो सकता है, लेकिन इसे प्रबंधित करने और कम करने के लिए एक बहुआयामी और एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। लक्ष्य संघर्ष को कम करके सह–अस्तित्व की स्थिति को बढ़ावा देना होना चाहिए।

- **आवास संरक्षण और बहाली :** वन्यजीवों के प्राकृतिक आवासों की रक्षा करना और उन्हें बहाल करना सबसे महत्वपूर्ण कदम है। इसमें वनों की कटाई को रोकना, वनीकरण को बढ़ावा देना और खंडित आवासों को फिर से जोड़ना शामिल है।
- **वन्यजीव गलियारों का निर्माण और सुरक्षा :** जानवरों के सुरक्षित आवागमन के लिए वन्यजीव गलियारों की पहचान, निर्माण और सुरक्षा सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है। इससे जानवर मानव बस्तियों में प्रवेश किए बिना एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जा सकेंगे।
- **प्रभावी मुआवजा योजनाएं :** सरकार द्वारा फसल और पशुधन के नुकसान के लिए त्वरित और पर्याप्त मुआवजा प्रदान करने से प्रभावित लोगों को राहत मिलती है और प्रतिशोध में जानवरों को मारने की घटनाओं को कम करने में मदद मिलती है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना जैसी योजनाओं के तहत फसल क्षति के लिए मुआवजे का प्रावधान एक सकारात्मक कदम है।
- **प्रौद्योगिकी का उपयोग :** आधुनिक तकनीक संघर्ष को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। पूर्व चेतावनी प्रणाली, सैटेलाइट कॉलरिंग, ड्रोन निगरानी और कैमरे के जाल का उपयोग करके जानवरों की गतिविधियों पर नजर रखी जा सकती है और स्थानीय समुदायों को समय पर सचेत किया जा सकता है।
- **सामुदायिक भागीदारी :** संघर्ष के प्रबंधन में स्थानीय समुदायों की भागीदारी महत्वपूर्ण है। संरक्षण प्रयासों में उन्हें शामिल करने, जागरूकता अभियान चलाने और उनकी पारंपरिक जानकारी का उपयोग करने से बेहतर परिणाम मिल सकते हैं। छत्तीसगढ़ में 'हाथी मित्र' जैसी पहल सामुदायिक भागीदारी का एक सफल उदाहरण है, जो मानव–हाथी संघर्ष को कम करने में मदद कर रही है।
- **बाधाएं और निवारक उपाय :** खेतों के चारों ओर बाड़ लगाना, विशेष रूप से सौर ऊर्जा से चलने वाली बाड़, और मधुमक्खी के छत्ते जैसी बाड़ लगाना (क्योंकि हाथी मधुमक्खियों से डरते हैं) जैसे उपाय जानवरों को फसलों से दूर रखने में प्रभावी हो सकते हैं।

- **भूमि–उपयोग की योजना :** प्रभावी भूमि–उपयोग की योजना बनाकर यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि विकास परियोजनाएं वन्यजीवों के आवासों और गलियारों को न्यूनतम रूप से प्रभावित करें।
- **सरकारी नीतियां और कानून :** वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 जैसे कानूनों का सख्ती से कार्यान्वयन और मानव–वन्यजीव संघर्ष को संबोधित करने के लिए विशिष्ट नीतियों का निर्माण आवश्यक है। सरकार ने मानव–वन्यजीव संघर्ष के प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय वन्यजीव बोर्ड की स्थायी समिति के माध्यम से सलाह जारी की है, जिसमें ग्राम पंचायतों को सशक्त बनाने जैसे उपाय शामिल हैं।

निष्कर्ष :–

मानव–वन्यजीव संघर्ष एक जटिल और बढ़ती हुई चुनौती है जिसके गहरे सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक परिणाम हैं। यह केवल वन्यजीवों की समस्या नहीं है, बल्कि मानव विकास और पर्यावरण के बीच बिगड़ते संतुलन का प्रतिबिंब है। इस संघर्ष का समाधान केवल जानवरों को दोष देने या उन्हें खत्म करने में नहीं है, बल्कि एक ऐसे दृष्टिकोण को अपनाने में है जो मानव और वन्यजीव दोनों की जरूरतों को संतुलित करता हो।

सह–अस्तित्व की राह कठिन हो सकती है, लेकिन यह असंभव नहीं है। आवास संरक्षण, सामुदायिक भागीदारी, वैज्ञानिक प्रबंधन और सहानुभूतिपूर्ण नीतियों के माध्यम से, हम एक ऐसा भविष्य बना सकते हैं जहां मनुष्य और वन्यजीव शांतिपूर्वक सह–अस्तित्व में रह सकें। यह न केवल हमारी नैतिक जिम्मेदारी है, बल्कि हमारे अपने अस्तित्व और इस ग्रह के स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक है। हमें यह समझना होगा कि पृथ्वी पर जीवन का ताना–बाना इन सभी प्रजातियों के एक साथ रहने से ही बना है और किसी एक धागे के टूटने से पूरी संरचना कमजोर हो सकती है।

संदर्भ :–

1. MAN - ANIMAL CONFLICTS IN INDIA by C. SEKHAR, K. BARANIDHARAN
2. Resolving Human -Wildlife Conflicts by Michael R. Conover
3. Human–Wildlife Interactions (Turning Conflict into Coexistence) Edited by F. Beatrice
4. https%//wildlifedrones.net/preventing-human-wildlife-conflict/
5. https%//visionias.in/current-affairs/2024/environment/human-animal-conflict
6. https%//thefurbearers.com/our-work/living-with-wildlife/what-is-co-existence/
7. https%//www.hwctf.org/about
8. https%//en.wikipedia.org/wiki/Human%E2%80%93wildlife_conflict
9. https%//www.drishtiias.com/hindi/daily-news-analysis/human-wildlife-conflict-2

Email : neeraj.karagwal@gmail.com

मोबाइल – 9460132100

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 21-25

विविध समस्याओं का समाधान : एक परामर्श आधारित दृष्टिकोण

प्रो. बी. एल. जैन (विभागाध्यक्ष)
डॉ. अमिता जैन (सह आचार्य)
शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूं।

सारांश :-

परामर्शदाता, परामर्शप्रार्थी की इस प्रकार सहायता करता है कि परामर्शप्रार्थी स्वयं अपनी समस्या का निर्णय ले सके और अपनी समस्या का समाधान कर सके। जीवन में अनेक समस्याएं आती है, जैसे– किसी की शादी नहीं हो रही है, किसी की नौकरी नहीं लग रही है, किसी के बच्चे नहीं हो रहे हैं, किसी का बच्चे का पालन–पोषण नहीं हो रहा है, किसी के बुढ़ापे में बच्चे सेवा नहीं कर रहे हैं, किसी का बच्चा कहना नहीं मान रहा है, किसी बच्चे का पढ़ने में मन नहीं लगता है, किसी के बच्चे दिनभर टीवी या मोबाइल देख रहे है या घूमने आदि क्रिया में रत रहते हैं। इस स्थिति में परामर्शदाता उनकी समस्याओं के समाधान में सलाह देता है और वह व्यक्ति अपनी समस्याओं का समाधान अपनी विवेक से करना सीख जाता है।

मुख्य शब्दावली – परामर्शदाता, परामर्शप्रार्थी, समस्या का समाधान, समायोजन।

प्रस्तावना :-

जब व्यक्ति किसी समस्या से ग्रस्त हो जाता है या समस्या से घिर जाता है, उस समय वह अपनी समस्या के समाधान के लिए किसी दूसरे से सलाह लेता है, उसे परामर्श कहते हैं। परामर्श देने वाला परामर्शदाता व परामर्श लेने वाला परामर्शप्रार्थी कहलाता है। जब व्यक्ति अपनी समस्या के लिए दूसरों से सलाह लेता है, वह परामर्श कहलाता है। परामर्श बात करना, व्याख्यान देना नहीं है। परामर्श दो व्यक्तियों के मध्य व्यक्तिगत संपर्क से अलग है। दो व्यक्तियों में एक व्यक्ति बुद्धिमान या होशियार एवं अनुभवी भी होता है एवं दूसरा व्यक्ति प्रथम व्यक्ति के अनुभव से लाभ उठाता है। वह अपनी समस्या का समाधान ढूंढता है, जिसे परामर्श कहा जाता है। परामर्श वह प्रक्रिया है, जिसमें परामर्शदाता की समस्या के संबंध में सभी तत्व एकत्रित कर उसकी समस्या का विश्लेषण कर निर्देशनार्थी को उस समस्या का समाधान करने के लिए प्रत्यक्ष एवं व्यक्तिगत सहायता दी जाती है। परामर्श में समस्या का समाधान निर्देशनार्थी ही खोजता है। परामर्श में आदेश, उपदेश, संकेत, प्रलोभन नहीं होते हैं। आदेश, उपदेश एवं संकेत में निर्देशक स्वयं विचार कर अपनी समस्या का समाधान ढूंढता है, जैसे– किसी भवन में निर्देशनार्थी को आमंत्रित किया जाता है या स्वतंत्र रूप में निर्देशनार्थी के पास जाता हैं और अपनी

समस्या का समाधान पाने का प्रयत्न करते हैं, जैसे– रोगी औषधालय में बिना हिचक के उपचार हेतु जाता है। एक दूसरे के सहयोग से समस्या का समाधान पाता हैं। साक्षात्कार द्वारा परामर्श किया जा सकता है। निःसंकोच होकर अपनी बात बतावें, समस्या के सभी पहलुओं पर विचार–विमर्श करना चाहिए। शिक्षा में गुरु को मार्गदर्शक माना जाता है, उसी से परामर्श लिया जाता है।

परामर्श के सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिकों के विचार अधोलिखित है :-

आर्बकल के अनुसार- परामर्श में तीन तत्त्वों का समावेश है :

1. परामर्श में दो व्यक्ति शामिल होते है।
2. इसका उद्देश्य छात्र अपनी–अपनी समस्याओं का स्वतंत्र समाधान कर सकें।
3. छात्रों को परामर्श एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा दिया जाना चाहिए।

क्रो एवं क्रो के अनुसार : "परामर्श सेवाओं का लक्ष्य सदैव एक शिशु, एक नवयुवक या एक वयस्क को अपने सामूहिक सम्बन्धों में अधिक सूक्ष्म आत्माभिव्यक्ति और अधिक रचनात्मक मूल्य प्राप्त करने में सहायता देता है।"

कैटल के अनुसार – परामर्श में पांच तत्त्वों का समावेश है :–

1. परामर्श में दो व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बन्ध होता है।
2. परामर्श प्राप्तकर्ता के बीच विचार विनिमय के कई तरीके हो सकते है।
3. परामर्शदाता को अपने कार्य की जानकारी होती है।
4. आवश्यकता के अनुसार परामर्श में परिवर्तन किया जा सकता है।
5. परामर्श साक्षात्कार पर आधारित होता है।

परामर्श की मुख्य बातें :-

- परामर्श दो व्यक्तियों का सम्पर्क है।
- मदद करना या सहायता प्रदान करता है।
- अपने परिवेश के साथ समायोजन करना।
- पारस्परिक सम्बन्ध है।
- समस्याओं का हल है।
- परामर्श एक प्रशिक्षित व्यक्ति देता है।
- परामर्शदाता व परामर्शप्रार्थी दो व्यक्ति होते है।
- दो व्यक्ति के बीच विचार विनिमय है।
- आवश्यकता के अनुसार परामर्श में परिवर्तन किया जाता है।
- परामर्श साक्षत्कार पर आधारित होता है।
- यह निर्देशन का अभिन्न अंग है।
- यह व्यक्तिगत होता है।
- परामर्शप्रार्थी स्वयं समस्या का समाधान खोजता है।

विविध समस्यायें एवं समाधान :-

अध्ययन में अरूचि – गीता अपने साथियों के साथ असहज रहती है। उसे कक्षा की बातें बुरी लगती है। उसे पढ़ना बिल्कुल अच्छा नहीं लगता है। वह अन्य बालकों की तरह खेलकूद, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक गतिविधियों में भाग नहीं लेती है। विद्यालय उस बालिका को कैसे सहज वातावरण में लावे? विद्यालय के शिक्षक, शिक्षकेतर कर्मचारी तथा प्रबंधन उसके साथ कैसे जुड़े? वह अन्य छात्राओं की भांति शिक्षा से जुड़ सके।

यौन अपराध – कक्षा आठवीं की छात्रा समाज के किसी लड़के की घिनौनी हरकत से बलात्कार की शिकार हो जाती है। वह इस विषय में कुछ भी जानकारी नहीं रखने के बाद यौन अपराध का शिकार बन गई। लंबी अवधि से अस्पताल में रहकर घर आई है। उसके मानसिक आघात, तनाव, अवसाद को कैसे दूर करें? कि वह समझ में अपने आप को सहज महसूस कर सके। इस कार्य हेतु उसकी कौन मदद करेगा और किस प्रकार मदद करेगा?

अधिगम गतिमंद – दस वर्षीय पायल कठोर मेहनत और लगन से पढ़ने के बाद भी वैसा परिणाम नहीं दे पा रही है, जैसा उसकी सहेली दे रही है। अधिगम में उसकी गतिमंद है। सभी शिक्षक, अभिभावक उसकी आलोचना, भर्त्सना तथा डांट फटकार करते रहते हैं। वह अपने आप को हीनभावना से ग्रस्त बनाती जा रही है। ऐसी स्थिति में उसके साथ कैसे बर्ताव करें? कैसे ध्यान दें? कि वह कक्षा में उचित सफलता हासिल कर सके।

प्रेम प्रसंग में फंसना – रमा कक्षा 11 की छात्रा है वह अपने 12वीं के साथी के प्रेमप्रसंग में फंस गई। उसके इस प्रेमप्रसंग का पता शिक्षक, अभिभावक एवं पड़ोसियों को भी लग गया है। अब उसका मन पढ़ाई में बिल्कुल नहीं लगता है। हर व्यक्ति उसे दृष्टिहीन से देख रहा है। ऐसी स्थिति में वह परेशान हो रही है। वह कैसे वापसी करे, जिससे अपने जीवन को सही दिशा में ला सके?

समलिंगी विवाह – गीता एवं मीरा दोनों घनिष्ठ सहेली है। वह अपने आप को इतना प्रेम करती है कि दोनों विवाह करना चाहती हैं। उनके विवाह को समाज मान्यता नहीं देता है। अब वह क्या करें कि समलिंगी विवाह की उन्हें मान्यता मिले। अन्यथा वह आत्महत्या करने की सोचती है। ऐसी स्थिति में कौन उन्हें समझाएगा और कैसे समझाएगा?

तनावग्रस्त – कोई छात्रा अपने साथी के साथ अश्लील फोटो खींचवा लेती है। वह पुरुष साथी अपने मित्र को फोटो भेज देता है। वह उस फोटो को फेसबुक पर अपलोड कर देती है। जब उसे पता लगता है तो वह अवसाद/तनावग्रस्तता में आ जाती है। ऐसी घटनाओं से वह छात्रा अपने आपको कैसे बचाएं और किस प्रकार से मदद ली जानी चाहिए?

अनगिनत समस्याएं – जितने लोग उससे ज्यादा समस्याएं और हर व्यक्ति के साथ समस्याएं बनी रहती हैं। जितने विद्यार्थी और जितनी कक्षाएं उतनी ही अधिक समस्याएं आज देखने में आ रही है। जाति, लिंग, धर्म, प्रांत आदि की समस्याएं ने समाज को चौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है। ऐसी समस्याओं में वह व्यक्ति, विद्यार्थी, प्रबंधक, प्राचार्य, शिक्षक, डॉक्टर, धर्मगुरु, परिजनमित्रों विशेषज्ञ से सहायता मांगता है। ये समस्या बहुत जटिल होती है। इनका जल्दी से समाधान नहीं हो पाता है तो व्यक्ति अधिक परेशान रहता है। कैसे जल्दी से जल्दी इन समस्याओं का समाधान हो सकता है?

जीवन ढोना – व्यक्ति परिवार में रहते हुए भी नहीं रहता है, जैसा उसे प्रतीत होता है। व्यक्ति के जीवन में जब समस्याएं आती हैं तो उसका जीवन दूभर हो जाता है। उसके जीने की इच्छा समाप्त हो जाती है। वह अपने जीवन को जीत नहीं पाता है। वह जीवन को ढोता है। उसका क्या उपाय करें कि वह अपना जीवन आनन्द में जी सकें।

परिवार श्रृंखला का टूटना – किसान स्वयं खेती कर रहा है और उसका बेटा शिक्षण कार्य कर रहा है और एक बेटा पुलिस में कार्यरत है। परिवार की इकाई पूर्णतया टूट रही है। पहले सभी मिलकर एक ही कार्य करते। अब सब अलग–अलग कार्य कर रहे हैं। सबका चिंतन और सोच अलग–अलग है। इसी कारण परिवार में मतभेद बढ़ रहे हैं। धन कमाने, कार्य करने, बोलने, चलने की क्षमता एवं योग्यता में अंतर आ गया है।

अपने व्यवसाय छोड़कर दूसरे व्यवसाय में जाना – सब अलग–अलग प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर अलग–अलग व्यवसाय में जाने लग रहे हैं। अपने व्यवसाय छोड़कर दूसरे व्यवसाय अपना रहे हैं। पहले मुखिया की बात मानते थे। अब सभी अपनी इच्छा अनुसार कार्य करते हैं। इस कारण मूल्य, परंपरा और संस्कृति से मुख मोड़ रहे। हर सदस्य स्वतंत्र जीवन जीने में विश्वास करने लगा है। बच्चे तो सभी स्वतंत्र जीवन जीने में विश्वास करते हैं। उन्हें किसी प्रकार की व्यवस्था पसंद नहीं है। लड़के–लड़कियां स्वयं अपना विवाह तय कर रहे हैं। घर वालों से मात्र आशीर्वाद लेने हेतु उपस्थित हो रहे हैं। यदि आशीर्वाद नहीं देते हैं तो वह मां–बाप को भी छोड़ कर चले जाते हैं। रहन–सहन, खान–पीन, वेशभूषा एवं दिनचर्या में बहुत बड़ा अंतर आया है।

पर्दा में लज्जा की परंपरा समाप्त हो गई है – महिलाओं के समान अधिकार एवं आर्थिक निर्भरता से काफी व्यवहार में परिवर्तन आया है। जो महिलाएं घर से नहीं निकलती है आज वे अधिकतर घर से बाहर रहने लगी है। इससे प्रत्येक सदस्य में विषमता आ गई है। पारिवारिक वैमनष्य तेजी से बढ़ रहा है। परिवार व्यवस्था तेजी से नष्ट हो रही है। परिवार छोटे से छोटे बनते जा रहे है। आपसी मतभेद, विचारों में असमानता, व्यवहार में अशिष्टता, अनुशासन का अभाव, मर्यादा और मूल्य का ह्रास, आर्थिक विषमता, व्यावसायिक भिन्नता, सहनशीलता की कमी, धैर्यता का अभाव, परिवार में किसी एक का अधिक खर्चीला होना, किसी का कम खर्चीला होना, शिक्षा में विषमता, परिवार में कोई कठोरवादी, कोई विनम्र, कोई अहंकारवादी आदि विचार आज पारिवारिक जीवन में सुनने को मिल रहे हैं। पुरुष महिलाओं के व्यवसाय, शिक्षा व आय में अंतर विरोध पैदा हुआ है।

निष्कर्ष :–

परामर्श दो व्यक्तियों के बीच चलने वाली अंतःक्रिया है। इसमें परामर्शदाता परामर्शप्रार्थी की सहायता करता है, उसकी समस्याओं का समाधान करता है, उसे समायोजन में सहयोग प्रदान करता है। जीवन में अनेक समस्याएँ आती है और उनका समाधान करता है। समस्याएं बनाये रखने से विकास रुक जाता है। उनका समाधान करने से चिन्तन, तर्क, कल्पना, निर्णय शक्ति का विकास होता है। तनावपूर्ण जीवन, अवसाद, भग्नाशा, कुसमायोजन, पारिवारिक समस्याएं, वैवाहिक समस्याएं, सामाजिक समस्याएं, भावनात्मक समस्याएं आदि के समाधान हेतु परामर्श, परामर्श सिद्धांत का उपयोग किया जाना चाहिए। समस्याओं के समाधान में इनकी महती भूमिका है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. मिश्रा, महेंद्र कुमार, शैक्षणिक मूल्यांकन : निदान एवं उपचार, अरिहंत पब्लिसिंग हाउस 5, ऑफ जे.एल.

एन. मार्ग, जयपुर।
2. संगीता यादव, अधिगमकर्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, अरिहंत पब्लिसिंग हाउस 5, ऑफ जे.एल.एन.मार्ग, जयपुर।
3. Sharma, Anuradha, Educational Psychology, Bookmen Associates 9, Off. Rajasthan University, J.L.N.Marg, Jaipur-302015
4. Sapna, Psychological Foundation of Education Bookmen Associates 9, Off. Rajasthan University, J.L.N.Marg, Jaipur-302015
5. Singh, Y.K. (2017), Advanced Educational Psychology, Uni-Tech Book Mart, 122, East Patel Nagar, Ganeshpura, Ratanda, Jodhpur
6. P. Praveena, (2019), Adjustment and Teacher Educators, Uni-Tech Book Mart, 122, East Patel Nagar, Ganeshpura, Ratanda, Jodhpur.

amitajainjuly1@gmail.com

उपजंरंपदरनसल1 / हउंपस.बवउ

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 26-30

క్రైస్తవ మిషనరీ - వైద్యరంగం

డా..జూరెడ్డి నిర్మల,
తెలుగు అధ్యాపకురాలు, సెయింట్ జోసఫ్ మహిళా కళాశాల, విశాఖపట్నం–4.

ఉపోద్ఘాతం ;– భారతదేశపు అతిప్రాచీన కాలమలో రోగాలకు మంత్రాలు విరుగుడుగా చెప్పబడినవి. అశ్వినీ దేవతలు రోగాలను నివారించే దేవతలుగా అభివర్ణించబడ్డారు. ఆ కాలంలో రోగాలకు వైద్యం చేయకూడదనే అంక్షలు ఉన్నాయి, స్త్రీలకు పురుష వైద్యులు వైద్యం చేయకూడదనే ఆంక్షలు కూడా ఉన్నాయి. తాకితే మైల పడతామనే అంక్షలు ఉన్నాయి. దాదాపు రెండు వందల ఏళ్ల నాటి పరిస్థితులు దుర్భరంగా దయనీయంగా ఉండేవని మన రచయితలు చెప్పారు. ఇల్లు మరియు పరిసరాలు పరిశుభ్రత లేకపోవడం వల్ల మన పూర్వీకులు ఎన్నో రోగాల బారిన పడేవారు. ఒకప్పటి కాలంలో మన భారతీయులు పక్షుల మాంసం, జంతువుల మాంసం వండుకొని తినే అలవాటు ఉన్నప్పటికీ రానురాను ఆ నీచు పదార్థాలు తినడం నిషేధించే స్థాయికి వచ్చారు. తద్వారా ఆ నీచు పదార్థాలు కాస్త నీచ పదార్థాలుగా మారిపోయాయి. ఆ తువాతి కాలంలో మనవాళ్లు పాటించే మూఢనమ్మకాలు వల్ల పోషక విలువలు గల ఆహారాన్ని దూరం చేసుకునేవారు. ఉదా;– కోడిగుడ్డులో ప్రాణముంటుందని దానిని తినకుండా ఉండేవారు. చనిపోయిన మనిషి పునర్జన్మ ద్వారా మరో ప్రాణిగా పుడతాడనే నమ్మకంతో జంతువులను, పక్షులను తినడం మానేసేవారు. తద్వారా రోగాల బారిన పడినవారు పోషక విలువలు గల ఆహారం తినకపోవడం వల్ల తొందరగా కోలుకోలేక మృత్యు ఒడిలోకి జారుకునేవారు. ప్లేగు వ్యాధి సంక్రమించేది ఎలుక ద్వారానే అనే సంగతి శాస్త్రీయంగా బుజువైన తర్వాత కూడా ఎలుకను చంపడానికి ఇష్టపడేవారు కాదు. కారణం ఎలుక వినాయకుని వాహనం అని, భగవంతుడు అన్ని జీవుల్లో ఉంలాడనే నమ్మకం వల్ల ఏ జంతువుకు హాని తలపెట్టేవారు కాదు. తప్పని సరి పరిస్థితుల్లో మాత్రమే వాటిని చంపేవారు. వైద్య విద్యాపరిజ్ఞానం లేకపోవడం చేత మనదేశంలోని ప్రజలు మూఢనమ్మకాలకు పెద్దపీట వేసి చావును కొని తెచ్చుకునేవారు. ఇలాంటి ఆంక్షలు మధ్య ప్రయోజనం లేని నమ్మకాల మధ్య మిషనరీలు రోగులకు వైద్యం చేయడానికి ఎన్నో రకాలైన ఎదుర్కొనవల్సి వచ్చింది .

క్రైస్తవ మిషనరీ ;– మిషనరీ లనే పేరు త్యాగాన్ని సూచిస్తుంది. మిషనరీ అనగా కార్యసాధకుడు. కార్యసాఫల్యాన్ని , కార్యసిద్ధికి ఏకాగ్రతతో , నిర్విరామంగా కృషి చేసే వ్యక్తి అని అర్థం. ప్రత్యేకంగా ఒక పని కొరకు నియమితులైనవారు. ఎన్ని కష్టాలు వచ్చినా, బాధలు కల్గినా, అవరోధాలు ఎదురైనా , వారు నిర్ణయింపబడిన పని అజన్మాంతము అకుంఠిత దీక్షతో విధి నిర్వహించేవారు.

క్రైస్తప మిషసరీలు భూప్రపంచంలో సలుమూలాల వ్యాపించి , వారి సేప చేసిస ప్రజల గూర్చి

త్యాగపూరిత చారిత్రాత్మక పనులు చేశారు. విద్య నేర్పించారు, భాషలు నేర్చుకొన్నారు. మన భాషల్లో వ్యాకరణం, నిఘంటువులు, మన భాష వాఙ్మయాభివృద్ధికి ఎంతో కృషి చేశారు . వారు భారత భూమిపై అడుగు పెట్టిన నాటికి చాలా తక్కువ సంఖ్యలో విద్యావంతులు ఉండేవారు. వారికి దేవుని వాక్యము చదివించాలంటే విద్య నేర్పాలి. ఆడుకు గాను రాత్రి బడులు ప్రారంభించి చదువు నేర్పించి తద్వారా దేవుని వాక్యము చదువుకొనేలా చేశారు. ఆ రాత్రిబడులు క్రమేణా పగటి ఎలిమెంటరీ, అప్పర్ ఎలిమెంటరీ, హైస్కూలు, కళాశాలలుగా వెలసి అభివృద్ధి చెందాయి .

ఆ మిషనరీల కృషి వల్ల మంచి ప్రజ్ఞాపాటవాలతో బోధనా విధానం అభివృద్ధిలోకి వచ్చాయి. అదే విధంగా ప్రాధమిక వైద్య సదుపాయములతో ప్రారంభమైన ఆసుపత్రులు గొప్ప, గొప్ప వైద్యశాలలుగా వెలిశాయి. చీకటి ఖండాలలో మిషనరీలు ప్రవేశించి దృఢసంకల్పంలో, కృతనిశ్చయంతో వారు అనుకొన్న విశ్వసించిన కార్యసాఫల్యానికి కృషి చేశారు. వారి జీవితాలను ప్రాణార్పణ చేశారు. వారి త్యాగశీలతతో ఎన్నో , ఎన్నెన్నో గొప్ప కార్యాలు దేవుని మహిమార్థము చేశారు. ఆహారము లేక అనేక వ్యాధులు, విష జ్వరములతో వారు ప్రేమించిన స్వంత పుత్రులను, పుత్రికలను కోల్పోయారు.కొంతమంది సముద్రములో జలసమాధి చేయబడ్డారు. బిడ్డలను పొగొట్టుకున్న మిషనరీలు వారీ స్వహస్తములతో వారి బిడ్డలకు శవపేటికలు చేశారు. వారికి సమాధులు త్రవ్వి వారే అంతిమ క్రియలు చేశారు .

రోగులకు క్రైస్తవ మిషనరీల సేవ ;- ఇంగ్లాండు నుంచి బెంగాలుకు వచ్చిన మిషనరీలలో మొదటివాడు వైద్య వృత్తికి చెందిన జాన్ థామస్ .

కలకత్తాలో ఉన్న ప్రజలకు రకరకాల రోగాలు సోకి పిట్టలు రాలిపోతున్నట్టు అనేక మంది దుర్మరణం పాలవుతున్న సమయంలో బాప్టిస్ట్ మిషనరీ అయిన విలియం కేరీ మరియు అతని బృందం ఆసుపత్రి నిర్మించడానికి రోగుల తరుపున విలియం బెంటింక్‌కి ఆర్జి పెట్టారు. అందుకని 1835లో కలకత్తాలో ఆసుపత్రిని నిర్మించవలసిందని బెంటింక్ అదేశాలు జారీ చేశారు. గొప్ప బారీ ఎత్తున ఆనాడు నిర్మింపబడిన ఆసుపత్రి ఇప్పటికి చెక్కుచెదరకుండా మిషనరీల కృషిని తెలియజేస్తూంది. అంతేకాకుండా అనేక మంది రోగులకు వైద్యం చేస్తూ అనేక మందికి మెడికిల్ విద్యను అందిస్తూ ఉంది . దీనిని" మెడికల్ కాలేజ్ అండ్ హాస్పటిల్ ఆఫ్ కోలకత్తా " అని లేదా " కలకత్తా మెడికల్ కాలేజ్ " అని పిలుస్తారు.

కలకత్తాకు వచ్చిన మిషనరీల సువార్త సేవలో రోగులకు సేవ చేయడం అనేది వాళ్ల ప్రణాళికలో భాగం . అందుకే దేవుని రాజ్యం సువార్త సేవ విస్తృతపరిచే పనిలో భాగంగా మిషనరీలు రోగుల పట్ల అపారమైన సేవలు చేశారు. రోగులు ఎక్కడెక్కడ ఉన్నారో సర్వే చేసి కలరా, మశూచి,ప్లేగు లాంటి రోగగ్రస్తులకు మందులు పంపిణీ చేశారు. వృత్తి రీత్యా విటియం కేరీ వైద్యుడు కాక పోయినప్పటికీ రోగుల ఆదరణ కొరకై వారి యొద్దకు వచ్చినప్పుడు మందులు పంపిణీ చేశారు .

ఎడిత్ మేరీ బ్రౌన్ 1864 న ఇంగ్లాండ్ దేశంలో పుట్టింది . ఈమె సోదరి మిషనరీ అయిన కారణంగా మెడసిన్ చదివి రోగులకు సేవ చేయాలనే ఆకాంక్షతో కేంబ్రిడ్జ్ విశ్వవిద్యాలయంలో చదివి అటుపిమ్మట భారత దేశానికి వచ్చి కొత్తలో ఇక్కడ రోగగ్రస్తులైన మహిళల దీనస్థితిని చూసి ఆశ్చర్య పోయారు. మహిళలను , బాలికలను విద్యావంతులను చేశారు . అంతేకాకుండా ఇక్కడి రోగులకు ఒక ఆసుపత్రిని కూడా నిర్మించి అనేక మందికి మేలు చేకూర్చారు. పంజాబ్‌లో ఎడిత్ మేరీ బ్రౌన్ 44 ఎకరాల

విస్తీర్ణంలో నిర్మించిన ఆ ఆసుపత్రి ప్రస్తుతం " క్రిస్టియన్ మెడికల్ కాలేజ్ , లుధియానా " గా పిలవబడుతూ అనేక మందికి విద్యా వైద్యాన్ని అందిస్తూ ఉంది .

ఆంధ్రా ఇవాంజెలికల్ లూథరిన్ చర్చ్ ద్వారా అమెరికా నుండి పంపబడిన మెడికల్ మిషనరీ అయిన డాక్టర్ కుగ్లర్ అనే మహిళ గుంటూరు జిల్లాకు ఎనలేని సేవ చేశారు. గుంటూరులో కుగ్లర్ అడుగు పెట్టే నాటికి ఆధునిక పద్ధతితో కూడిన వైద్య సదుపాయాలు మహిళలకు లేవు . తొలి దశలో ఆమె దగ్గర నిధులు లేని కారణంగా అనుకున్న స్థాయిలో పేదలకు ఆమె వైద్యం చేయక పోయినా , మొత్తం మీద ఆమె వైద్యం మాత్రం మానేది కాదు . ఏదో విధంగా రోగులకు వైద్యపరమైన సేవ చేసేవారుజ తన స్నేహితులు ఎప్పుడైతే నిధులు సమకూర్చి 350 డాలర్లు పంపుతారో అప్పుడు మంగళగిరిలో అధికారికంగా ఆమె డిస్పెన్సరీలు ఏర్పాటు చేసి వైద్యసేవలు అందించారు .

క్రైస్తవ మిషనరీలు ఆనాడు ఆరోగ్య సూత్రాల్ని ప్రజల్లో ప్రచారము చేయడం కోసం సంవత్సరానికి ఒకసారి ఆరోగ్యవారం జరిపేవారు . ఈ వారం రోజులూ కూడా మిషనరీలు డాక్టర్ల సహాయంతో వివిధ గ్రామలకు వెళ్ళి ఆరోగ్య సూత్రాల్ని ప్రబోధించేవారు. దీనికి తార్కాణంగా చిత్తూరు జిల్లా మదనపల్లిలోని క్రైస్తవ మిషనరీల వైద్యాలయాన్ని " ఆరోగ్యవరం " అని పిలవడం నేటికి ఉంది .

స్కాట్లాండుకి చెందిన దంపతులైన జార్జ్ కెర్ , ఇసాబెల్ కెర్ ఇరువురూ వెస్లియన్ మెథడిస్ట్ కమ్యూనిటీకి చెందిన మిషనరీలు . రోగులకు వైద్య సహాయం చేయాలనే ఆకాంక్షతో వీరిరువురూ 1907 లో హైదరాబాద్ వచ్చి రోగులకు వైద్యపరమైన గొప్ప సేవలు అందించారు. ముఖ్యంగా వీరు నిజామాబాద్‌లో కుష్ఠురోగులకు ఆవాస కేంద్రాన్ని నిర్మించారు. ఈ దంపతులు చేసిన గొప్ప సేవ వలన అనతికాలంలోనే దాదాపు ఆరువేల మంది ప్రజలు దగ్గరయ్యారు. కుష్ఠురోగులకు వైద్యం చేసి రోగాన్ని నయం చేయడానికి ముందు రోగగ్రస్తులందర్ని ఒకచోటికి రప్పించి ఒక ఆశ్రమం కట్టించాలని వీరివురురూ ప్రయత్నం చేశారు. అలా ఒక ఆశ్రమవ నిర్మించి వ్యాధి ఇతరులకు సోకకుండా అందులో ఆ రోగులని ఉంచి 1920 వ సంవత్సరం దాకా వారి పట్ల శ్రద్ధ వహించి తగు జాగ్రత్తలు తీసుకున్నారు . 1920 తర్వాత ఆ రోగాన్ని నివారించడానికి ఆధునిక వైద్యం ఆందించి వారి రోగాల్ని చాలా వరకు నిర్మూలించారు . ఇసాబెల్ కేర్ నాయకత్వంలో అనేక మంది క్రైస్తవ మహిళలు వైద్య పరిజ్ఞానం పొంది గ్రామీణ ప్రజలకు సేవ చేశారు . క్రైస్తవ మిషనరీలు కులమతాలకు అతీతంగా ఏర్పాటు చేసిన వైద్యశాలలు తెలంగాణా ప్రాంతాల్లోకెల్ల ప్రాచుర్యాన్ని పొందాయి . జార్జ్ కెర్ మరియు ఇసాబెల్ కెర్ దంపతులు నిరాదరణకు గురైన వారిని అక్కున చేర్చుకొని వారి గాయాలు కడిగి వైద్యం చేసిన ఘనత ఆకాలంలో వారికే దక్కింది . సాంఘిక సేవాదృక్పధంలో మిషనరీలు సామాన్య ప్రజలను ఆదుకున్నారు . ఈ రంగంలో మిషనరీ ఆసుపత్రులు డిస్పెంసరీలు ఆదర్శవంతంగా తీర్చిదిద్దబడ్డాయి . 20 వ శతాబ్దపు తొలిదశ కాలంలో తెలంగాణా ప్రాంతంలో ఆధునిక వైద్య సౌకర్యాలను అందించిన ఘనత మెథడిస్ట్ మిషనరీలకే దక్కుతుందని చారిత్రకాధారాలు తెలియజేస్తున్నాయి .

డాక్టర్ వాల్డెమార్ హాఫ్కిన్ తాను కనిపెట్టిన వ్యాక్సిన్ల ద్వారా మన దేశానికి ఎంతో మేలు చేశాడు . అనేక మందికి ప్రాణభిక్ష పెట్టాడు. ఇతడు ఒక యూదుడు . ప్రతి దినం బైబిలు చదివే అలవాటుతో దేవుని భక్తితో జీవించేవాడు . రోగాలతో రుగ్మతలతో పీడింపబడుతున్న ప్రజలకు మేలు చేయడానికి తనను

అపొస్తులునిగా దేవుడు నియమించాడని ప్రగాఢంగా విశ్వసించేవాడు .

బాచెలెర్ మేరీ వాషింగ్టన్ అనే మహిళ మనదేశ మహిళలకు అండగా నిలబడటానికి ముందుకు వచ్చి వైద్యపరంగా గొప్ప అనూహ్యమైన సేవ చేసింది . ఈమె న్యూహావ్టన్ లో 1860 న పుట్టింది. వెస్ట్ బెంగాల్ లోని మిద్నాపూర్ ప్రదేశంలో ఈమె తండ్రి అప్పటికే వైద్యసేవలను అందిస్తున్న సమయంలో తన తల్లి ద్వారా చిన్నప్పుడే ఈమె మిద్నాపూర్‌కు వచ్చింది. చిన్నప్పటి నుండి ఇక్కడే పెరిగిన కారణంగా రోగాల చేత బాధ పడుతున్న వారికి తన తండ్రి వైద్యం చేస్తున్న విధానాన్ని చేసేది . అప్పటి కాలంలో స్త్రీలకు వచ్చిన వ్యాధుల నివారణకై పురుష వైద్యులను సంప్రదించడం నిషిద్ధం. అనవసరమైన ఈ నియమం కారణంగా మహిళలు వారికి కలిగిన రుగ్మతలను బట్టి ఎన్నో ఇబ్బందులకు గురయ్యేవారు . 1883లో మేరీ యునైటెడ్ స్టేట్స్ వెళ్ళింది . ఆమె అక్కడ ఏడేళ్ల పాటు ఎంతో కష్టపడి ఎం.డి కోర్సు పూర్తి చేసి గ్రాడుయేట్ అయ్యింది. మరలా ఆమె మిద్నాపూర్ వచ్చి తండ్రితో కలిసి పనిచేస్తూ మహిళా రోగులకు అండగా నిలబడింది . మహిళా వైద్యురాలిగా సేవలను అందించడానికి ముందుకు వచ్చిన మేరీని చూసి అనేక మంది హిందూ మహిళలు ఇంట నుండి బయటకు వచ్చి ధైర్యంగా తమ శారీరక సమస్యలను చెప్పుకునేవారు. ఒక సంవత్సరంలోనూ దాదాపు 3000 మంది మహిళా రోగులకు ఆమె వైద్యం చేసింది.

అమెరికన్ మెడికల్ మిషన్ సొసైటీ నుండి మద్రాసు ప్రెసిడెన్సీకి పంపబడిన ఒక మిషనరీ కుటుంబంలో 1870 న ఐడా సోఫియా స్కడర్ జన్మించింది. తాను పుట్టింది ఇండియాలోనే అయినా అమెరికాలో పెరిగింది . తన కుటుంబంలో ఉన్నవారిలా తాను మిషనరీగా లవ్వాలనే కోరిక లేకుండా అమెరికాలో జీవించాలని అక్కడే స్థిరపడాలని ఆమె కలలు కన్నది. 1890లో అమెరికా నుండి తన తల్లిదండ్రులను చూడడానికి ఐడా సోఫియా ఇండియాకి వచ్చినప్పుడు ఆమెకు ఎదురైన చేదు అనుభవమే ఆమెను వైద్యురాలిగా మార్చి " క్రిస్టియన్ మొడికల్ కాలేజ్ అండ్ హాస్పిటల్, వెల్లూరు " అనే ఆసుపత్రి నిర్మించడానికి కారణమైంది .

కొలిన్ వాలంటైన్ అనే మిషనరీ వైద్యుడు మశూచి వ్యాధి రోగులకు వ్యాక్సిన్ వేస్తూనే పాపమనే ఆత్మీయ రోగానికి యేసు రక్తమనే మందు ఉన్నదని అందరికి సువార్త చెప్పేవాడు .ఆయన ప్రయాణం చేస్తూ జైపూర్ మీదుగా వెళుతూ ఉండగా జైపూర్ మహారాజా వారి భార్యకు అనారోగ్యంగా ఉందని వైద్యం అవసరమని ఆహ్వానం వస్తుంది . అప్పుడు మహారాణి కోటకు వెళ్ళి అమె నివసించే ప్రదేశానికి వెళ్ళినప్పుడు మహారాణికి అడ్డుగా ఒక పెద్ద తెర నిర్మించబడడం ఇవతల వైపున ఒక బాలిక కూర్చోవడం వాలెంటైన్ చూస్తాడు. మహారాణి వారు ఎవరితోనైనా మాట్లాడాలంటే లోపలి నుండా ఆ బాలికకు చెబుతుంది. అప్పుడు ఆ బాలిక బయట ఉన్న వారికి ఆ మాటలు అందిస్తుంది. మొత్తం మీద రాణిగారి అనారోగ్యాన్ని తెలుసుకోవడం దానికి తగిన మందులు పంపిణీ చేసి వాలెంటైన్ ఆమెను స్వస్థపరచడం జరుగుతుంది. తన భార్యను స్వస్థపరిచినందుకు గాను వాలెంటైన్‌ని జైపూర్ మహారాజు తన ఆస్థాన వైద్యునిగా నియమిస్తాడు . జైపూర్ కోటలో వైద్యుడు అందుబాటులో ఉన్నాడనే వార్త ప్రజలకు తెలిసి ఎంలో మంది రోగులు వచ్చి వైద్యం చేయించుకుంటారు. అలా అలను దాదాపు తొమ్మిది లక్షల మందికి రోగాల పట్ల అవగాహన కలిగించి, గొప్ప సువార్త సేవ చేసి దేవుని ప్రేమను కనబరుస్తాడు. రాజు అందించిన ఆర్థిక సహాయంతో అక్కడ బాలికలకు పాఠశాల కూడా నిర్మిస్తాడు .

క్లారా స్వయిన్ ఉత్తర ప్రదేశ్‌లోని బరెయిలీకి పంపబడిన మెథొడిస్ట్ కమ్యూనిటికి చెందిన మహిళా వైద్యురాలు . రాజస్థాన్ రాజు తన భార్యకు అనారోగ్యముగా ఉన్న కారణంగా వైద్యం కొరకై మార్చి నెల 1885 న క్లారా స్వెయిన్ ని తన ఆస్థానానికి ఆహ్వానిస్తాడు . క్లారా అందుకు అంగీకరించి రెండు వారాల పాటు రాణీకి వైద్యం చేసి బాగుపరుస్తుంది . అప్పుడు రాజు తన భార్యకు మరియు ఆస్థానంలో వున్న మహిళలందరికీ వైద్యం చేయడానికి వైద్యురాలిగా ఉండిపొమ్మని కోరతాడు. రాజ దర్బారులో రెండేళ్ల పాటు వైద్యురాలిగా ఉంటానని ఒప్పందం కుదురుతుంది. అలా ఆమె రాణీగారి ఆస్థానంలో ఒకవైపు వైద్యురాలిగా సేవలందిస్తూ మరోవైపు రాణీగారికి బైబిలు సూక్తులు నేర్పేది.

క్రైస్తవ మిషనరీలు భారత దేశంలోని గ్రామీణ ప్రాంతాల్లో అనేక చోట్ల పర్యటించి, పర్యవేక్షించి సాంఘిక సంక్షేమ కార్యక్రమాలు నిర్వహించారు. గ్రామీణ ప్రాంతాల్లో జీవించే ప్రజలు ఇళ్ళలో శుచీ శుభ్రంలేకపోవడం వల్ల ఎన్నో రకాలైన రోగాలు సంక్రమిస్తాయి. కనుక వారికి పరిసరాల శుభ్రత విషయమై అవగాహన కలిగించడానికి గ్రామీణ ప్రజల జీవన వైఖరికి అనువైన గేయాలు రచించి ఆ గేయాల ద్వారా వైద్య సూత్రాలు ప్రచారం చేసేవారు . భాషా సమస్య ఉన్న కారణంగా కొద్ది కాలం పాటు మిషనరీలు ఆ గ్రామీణ ప్రాంతాల్లో భాష నేర్చుకొని , సాంఘిక సామాజిక పనులు చేసి గ్రామాలను అభివృద్ధి చేశారు .

ఈ విధంగా క్రైస్తవ మిషనరీలు మనదేశానికి వచ్చి వైద్య , విద్య రంగాల్లో ఎనలేని కృషి చేశారు . ఎన్నో వైద్యశాలలను నిర్మించారు . కులమత వ్యవస్థకు అతీతంగా అందించిన మిషనరీల వైద్య సేవ అమోఘం.

ఆధార గ్రంథాలు ;-

1. ఆధునిక భారతదేశ నిర్మాణంలో క్రైస్తవ మిషనరీల పాత్ర ; పురిటిగడ్డ సురేష్‌బాబు
2. విలియం కేరి ; డా,, పాశల సాధు సుందరసింగ్ .

Dr.j. Nirmala st. Joseph' s college for women (A) vishakapatnam

nirmalajureddi7q@gmail.com

Mob. 7095072353

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 31-41

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ଲୋକଗୀତର ସାମାଜିକ-ସାଂସ୍କୃତିକ ଦିଗ

(The Socio-Cultural Dimensions of Paraja Tribal Songs)

Dr. Prahallad Khilla
Assistant Professor of Odia
P.G. Department of Language and Literature
Fakir Mohan University, Balasore, Odisha, Pin-756089

ସାରାଂଶ :

ଓଡ଼ିଶାର ଅବିଭକ୍ତ କୋରାପୁଟ ଜିଲ୍ଲାରେ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟ ବାସ କରନ୍ତି। କୃଷି ଏମାନଙ୍କର ମୁଖ୍ୟ ଜୀବିକା। କୃଷିକୁ କେନ୍ଦ୍ରକରି ଏମାନେ ବିଭିନ୍ନ ପର୍ବପର୍ବାଣି ପାଳନ କରିଥାନ୍ତି। ଏହିଅବସରରେ ମନୋରଞ୍ଜନ କରିବାପାଇଁ ପରଜାମାନେ ନୃତ୍ୟଗୀତ ପରିବେଷଣ କରିଥାନ୍ତି। ପାରମ୍ପରିକ ରୀତିରେ ଜୀବନର ଏହି କଳାତ୍ମକ ଅଭିବ୍ୟକ୍ତିକୁ ପରଜା ଯୁବଯୁବତୀ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା ବସା ଓ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ ବସାରୁ ଉତ୍ତରାଧିକାରୀ ସୂତ୍ରରେ ଶିକ୍ଷାକରିଥାନ୍ତି ଏବଂ ବିଭିନ୍ନ ଉତ୍ସବ ପାଳନ ସମୟରେ 'ସଦରଦାଣ୍ଡ'ରେ ପରିବେଷଣ ପୂର୍ବକ ଅଭିଜ୍ଞତା ଲାଭ କରନ୍ତି। ବର୍ତ୍ତମାନ ଏହି ଆନୁଷ୍ଠାନିକ-ପରମ୍ପରା ବ୍ୟାହତ ହୋଇସାରିଛି। ନୃତ୍ୟଗୀତ ମଧ୍ୟ ଧୀରେଧୀରେ ନିଜର ସ୍ୱତଃସ୍ଫୂର୍ତ୍ତତା ହରାଇ ବସିଛି। ବେକାରି, ଦାରିଦ୍ର୍ୟ ଓ ସର୍ବହରାର ହତାଶା ଭଳି କ୍ରମଶଃ କାମବିକୃତି ମଧ୍ୟ ପରଜା-ଯୁବମାନସକୁ କବଳିତ କରିସାରିଛି। ପାରମ୍ପରିକ ସଙ୍ଗୀତ ଠାରୁ ନିବୃତ୍ତ ରହି ସମ୍ପ୍ରତି ଛନ୍ଦହରା ଓ ଅଶ୍ଳୀଳ ଆବର୍ଜନାପୂର୍ଣ୍ଣ ବିକଟାଳ ଚିତ୍କାରକୁ ଏମାନେ ଅଧିକ ଆମୋଦଦାୟକ ମନେକରିଛନ୍ତି। ମଣିଷର ଏହିଭଳି ଏକ ପଚମାନ ମାନସିକ ଅବସ୍ଥାର ଗର୍ଭରୁ କଦାପି କୌଣସି ସୁସ୍ଥ ଓ ସର୍ଜନଶୀଳ କଳାର ଜନ୍ମ ସମ୍ଭବ ହୋଇପାରେନାହିଁ । ଏଭଳି କ୍ଷେତ୍ରରେ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ବଳିଷ୍ଠ ମୌଖିକ ଅଭିବ୍ୟକ୍ତିର ନିଦର୍ଶନ ରୂପେ ସେମାନଙ୍କର ଲୋକଗୀତ-ପରମ୍ପରା ସମ୍ପର୍କରେ ଆଲୋଚନାର ଆବଶ୍ୟକତାକୁ ଗୁରୁତ୍ୱ ଦିଆଯାଇଛି।

ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ଗୀତଗୁଡ଼ିକ ଅତି ସରଳ, ସଂକ୍ଷିପ୍ତ ଓ ଗୀତିଧର୍ମୀ। ଅଧିକାଂଶ ଗୀତ ସହିତ ବାଦ୍ୟ ଓ ନୃତ୍ୟ ଯୋଡ଼ିହୋଇ ରହିଥାଏ। ଜନ୍ମଠାରୁ ମୃତ୍ୟୁପର୍ଯ୍ୟନ୍ତ ବିଭିନ୍ନ ପର୍ଯ୍ୟାୟରେ ଗୀତର ସମ୍ବନ୍ଧ ଓ ପ୍ରାସଙ୍ଗିକତା ରହିଥାଏ। ତେଣୁ ପର୍ବପର୍ବାଣି ପାଳନ, କୃଷି ଉତ୍ପାଦନ, ଦେବଦେବୀଙ୍କ ପୂଜାର୍ଚ୍ଚନା ଠାରୁ ଆରମ୍ଭ କରି ଜନ୍ମ ଓ ମୃତ୍ୟୁ-ସଂସ୍କାର ପର୍ଯ୍ୟନ୍ତ ଜୀବନର ସବୁ ସୋପାନରେ ଓ ପ୍ରତିଟି ସୋପାନ ପାଇଁ ନିର୍ଦ୍ଦିଷ୍ଟ ଗୀତ ରହିଛି। ସ୍ୱର ହିଁ ଏହିସବୁ ଗୀତର ପ୍ରାଣକେନ୍ଦ୍ର, ଯାହା ଅତ୍ୟନ୍ତ ପ୍ରଭାବଶାଳୀ। ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟର କେତୋଟି ପାରମ୍ପରିକ ଗୀତ ଓ ତାର ସାମାଜିକ-ସାଂସ୍କୃତିକ ମୂଲ୍ୟବୋଧ ସମ୍ପର୍କରେ ଏଠାରେ ସଂକ୍ଷିପ୍ତ ଆଲୋଚନା କରାଯାଇଛି।

ଭିତ୍ତି ଶବ୍ଦାବଳୀ:

ଆଦିମ ଜନଜାତି ସମ୍ପ୍ରଦାୟ, ତଫସିଲଭୁକ୍ତ ଜନଜାତି, ଅବିଭକ୍ତ କୋରାପୁଟ ଜିଲ୍ଲା, ପ୍ରକୃତିର ବଂଶଜ, ଦରିଦ୍ର ହୋଇ ମରିବ, ଆଦିବାସୀ ସାମୂହିକ-ଭାବମାନସ, ଲୋକ-ମାନସ

1.ଉପକ୍ରମ :

ଭାରତୀୟ ସମ୍ବିଧାନର ୩୪୨(୧) ଧାରାରେ ଓଡ଼ିଶାରେ ବାସକରୁଥିବା ଆଦିମ ଜନଜାତି ସମ୍ପ୍ରଦାୟକୁ 'ଆଦିବାସୀ' (Scheduled Tribe) ନାମରେ ତାଲିକାଭୁକ୍ତ କରାଯାଇଛି। The Scheduled Castes and Scheduled Tribes Order (Amendment) Act-1976 ଅନୁସାରେ ଘୋଷିତ ଓଡ଼ିଶାର ତଫସିଲଭୁକ୍ତ ଜନଜାତି ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ତାଲିକାର କ୍ରମିକ ସଂଖ୍ୟା ୫୫ରେ ପରୋଜ / ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ନାମ ଉଲ୍ଲେଖ ରହିଛି। ସଂସ୍କୃତ ଭାଷାରୁ ଗୃହୀତ 'ପରଜା' ଶବ୍ଦର ଅର୍ଥ ହେଉଛି 'ପ୍ରଜା'; ରାଜା ଶାସିତ ରାଜ୍ୟରେ ଜଣେ ସାଧାରଣ ଲୋକ / ସାଧାରଣ ନାଗରିକ।

ଅବିଭକ୍ତ କୋରାପୁଟ ଜିଲ୍ଲାର କୋରାପୁଟ, ସିମିଲିଗୁଡ଼ା, ପଟାଙ୍ଗି, ନନ୍ଦପୁର, ଲମତାପୁଟ, ଦଶମନ୍ତପୁର, ଲକ୍ଷ୍ମୀପୁର, ଜୟପୁର, ବୋରିଗୁମା, ବୈପାରିଗୁଡ଼ା, କୁନ୍ଦୁରା, ନବରଙ୍ଗପୁର, ନନ୍ଦାହାଣ୍ଡି, କୋଷାଗୁମୁଡ଼ା, ତେନ୍ତୁଳିଖୁଣ୍ଟି, ପାପଡ଼ାହାଣ୍ଡି, ଡାବୁଙ୍ଗା, ଝରିଙ୍ଗାଁ, ମାଲକାନଗିରି, କୁଡୁମୁଲୁଗୁମା, ରାୟଗଡ଼ା, କାଶୀପୁର, ପ୍ରଭୃତି ବ୍ଲକରେ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟ ସର୍ବାଧିକ ସଂଖ୍ୟାରେ ବାସ କରନ୍ତି। 'ପାର୍ଜୀ' ହେଉଛି ପରଜାମାନଙ୍କର ମାତୃଭାଷା। ଏହି ଭାଷା ଦ୍ରାବିଡ଼ ଭାଷାଗୋଷ୍ଠୀ ଅନ୍ତର୍ଭୁକ୍ତ। ଅଞ୍ଚଳ ଭେଦରେ ପରଜାମାନଙ୍କର ଭାଷାରେ ଅନେକ ପାର୍ଥକ୍ୟ ତଥା ଭିନ୍ନତା ରହିଛି।

କୋରାପୁଟ ଜିଲ୍ଲା ଗେଜେଟିୟରରେ ଆର୍. ସି. ବେଲ୍ ପରଜାମାନଙ୍କୁ ଆଠଭାଗରେ ବିଭକ୍ତ କରିଛନ୍ତି। ସେମାନେ ହେଲେ- ପାରେଙ୍ଗା ପରଜା, ପରେଙ୍ଗା ଗଦବା ପରଜା, କନ୍ଧପରଜା, ପେଙ୍ଗୋ ପରଜା, ଝୋଡ଼ିଆ ପରଜା, ବାରେଙ୍ଗ ପରଜା, ସୋଡା ବିଶିଆ ପରଜା ଓ ବଣ୍ଡା ପରଜା।୧ ସାମାଜିକ-ସାଂସ୍କୃତିକ ଓ ଅର୍ଥନୈତିକ ଆଭିମୁଖ୍ୟ ଦୃଷ୍ଟିରୁ ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟ ମୁଖ୍ୟତଃ ବଡ଼ ପରଜା ଓ ସାନ ପରଜା ଭାବରେ ଦୁଇ ଭାଗରେ ବିଭକ୍ତ ହୋଇଥିବାବେଳେ ଅଞ୍ଚଳ ଭେଦରେ 'ଡଙ୍ଗରଲା ପରଜା' ବା ଡଙ୍ଗରିଆ ପରଜା ଓ 'ଗାଡ଼ଖଣ୍ଡିଆ ପରଜା' ବା ନଈକୂଳିଆ ପରଜା ରୂପେ ଏମାନେ ପରିଚିତ।

1.1. ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ଗୋତ୍ର :

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ପାରମ୍ପରିକ ପରିଚିତି ହେଉଛି ସେମାନଙ୍କର ଗୋତ୍ର। ଏହା କୁଳ, ବଂଶ ଆଦି ନାମରେ ମଧ୍ୟ ପରିଚିତ। ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ଗୋତ୍ର ଅବଲୋକନରୁ ସେମାନେ ପ୍ରକୃତିର ବଂଶଜ ହୋଇଥିବା ଜଣାପଡ଼େ। ସାଧାରଣତଃ ଜୀବଜନ୍ତୁ ତଥା ସରୀସୃପ ଆଧାରରେ ଏମାନେ ନିଜନିଜର ବଂଶପରମ୍ପରା ସୃଷ୍ଟି ହୋଇଥିବା ବିଶ୍ୱାସ କରନ୍ତି। ତେଣୁ ବାଘ, ଭାଲୁ ଆଦି ବନ୍ୟପ୍ରାଣୀ, ଛେଳି, କୁକୁର ଆଦି ଗୃହପାଳିତ ପଶୁ, ସରୀସୃପ ଓ ବିଭିନ୍ନ ଜଳଚର ଜୀବଙ୍କୁ ପରଜାମାନେ ନିଜବଂଶର ଆଦିପୁରୁଷ ରୂପେ ଗ୍ରହଣ କରିଥାନ୍ତି। ନିମ୍ନରେ ସାରଣୀ ଜରିଆରେ ଏମାନଙ୍କର ଗୋତ୍ର ତାଲିକାର ସୂଚନା ଦିଆଯାଇଛି।

ସଂଜ୍ଞା	ବଂଶ/ଗୋତ୍ର	ଗୋତ୍ରର ପ୍ରତୀକ
ଜାନି	ବାଘ	ମହାବାଳବାଘ
କିର୍ଷାନୀ	ବାଘ	ମହାବଳବାଘ
ମୁଦୁଲି	ଖ୍ନବୁଡ଼ି	ଭାଲୁ
ରାପିଆ	କୁକୁର	କୁକୁର
ଗୁଡ଼ିଆ	ନାଗ	ସର୍ପ
ହନ୍ତାଳ/ଅନ୍ତାଳ	ନାଗ	ସର୍ପ
ଅଲେଇବିରା	ନାଗ	ସର୍ପ
ମାଝି	ପାଙ୍ଗି	ଗିଧ/ଶାଗୁଣା
ସୁକିଆ	ମାଛ	ମାଛ/ମୀନ

ଏହି ରୀତିରେ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ଗୋତ୍ର ନିର୍ଦ୍ଧାରିତ ହୋଇଥାଏ। ସଗୋତ୍ର ଅନ୍ତର୍ଭୁକ୍ତ ପ୍ରତ୍ୟେକ ପରିବାର ଏକକୁଟୁମ୍ବ ବୋଲି ବିଚାର କରନ୍ତି ଏବଂ ଶିଶୁଜନ୍ମ ଠାରୁ ଆରମ୍ଭ କରି ମୃତ୍ୟୁପର୍ଯ୍ୟନ୍ତ ଜୀବନ-ସରଣୀର ପ୍ରତିଟି କ୍ଷେତ୍ରରେ ଆସୁଥିବା ପାରିବାରିକ-ସାମାଜିକ ସଂସ୍କାର, ପର୍ବପର୍ବାଣି ଆଦି ଅନୁଷ୍ଠାନରେ ମିଳିତ ଭାବରେ କାର୍ଯ୍ୟ କରନ୍ତି। ଅର୍ଥାତ କୌଣସି ପରିବାରରେ କେହି ମୃତ୍ୟୁବରଣ କଲେ, ମୃତବ୍ୟକ୍ତିର ସଗୋତ୍ରୀ-ପରିବାରରେ ଶୋକ ପାଳନ ସମେତ ଆମିଷ, ତେଲ, ହଳଦୀଯୁକ୍ତ ପାକତ୍ୟାଗ ପରି ଅନ୍ୟାନ୍ୟ ସମସ୍ତ ଛୋଟବଡ଼ ବିଧିବିଧାନ ପାଳନ କରିବାକୁ ହୋଇଥାଏ। ସମଗୋତ୍ର ଅର୍ଥ ଏକପରିବାର ହୋଇଥିବା କାରଣରୁ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟରେ ସଗୋତ୍ରବିବାହ ନିଷିଦ୍ଧ ହୋଇଥାଏ।

2. ପରଜା ଆଦିବସୀ ଲୋକଗୀତର ସାଂସ୍କୃତିକ ଆଭିମୁଖ୍ୟ :

ସଂସ୍କୃତି ପରମ୍ପରାଗତ ଜ୍ଞାନର ବାହକ। ପରମ୍ପରାଗତ ଜ୍ଞାନର ଏହି ସଂଗଠିତ ରୂପକୁ ସମାଲୋଚକ କୁମୁଦ ରଞ୍ଜନ ପାଣିଗ୍ରାହୀ ଲୋକଧାରା ରୂପେ ଗ୍ରହଣ କରିଛନ୍ତି।୨ ଲୋକସଂସ୍କୃତି ଓ ଲୋକସାହିତ୍ୟର ଗବେଷକ ପ୍ରଫେସର କୃଷ୍ଣଚନ୍ଦ୍ର ପ୍ରଧାନ ଇଂରାଜୀ 'Folklore' ଶବ୍ଦର ଭାରତୀୟ ପ୍ରତିଶବ୍ଦ ରୂପେ ଲୋକସଂସ୍କୃତି ସମେତ ଲୋକବିଦ୍ୟା, ଲୋକଯାନ, ଲୋକଧାରା, ଲୋକାଚାର, ଲୋକବିଜ୍ଞାନ, ଲୋକଚର୍ଯ୍ୟା, ଲୋକଜ୍ଞାନ ଆଦି ଶବ୍ଦ ବ୍ୟବହୃତ ହେଉଥିବା ପ୍ରକାଶ କରିଛନ୍ତି।୩ ସମାଜଶାସ୍ତ୍ରୀ ଇ.ବି. ଟେଲର୍ ଏକ ଯୁକ୍ତିଯୁକ୍ତ ତର୍କ ଆଧାରରେ ସଂସ୍କୃତିର ଅର୍ଥ ବୁଝାଇବା ନିମିତ୍ତ ପ୍ରୟାସ କରିଛନ୍ତି, ଯାହା ବହୁଜନାଦୃତ ହୋଇପାରିଛି। ଟେଲରଙ୍କ ବିଚାରରେ ସଂସ୍କୃତି ହେଉଛି ଏକ ଜଟିଳ ସମ୍ପୂର୍ଣ୍ଣ ଯେଉଁଠାରେ ଜ୍ଞାନ, ବିଶ୍ୱାସ, କଳା, ନୀତି, ରୀତି, ବିଧି, ନିୟମ ତଥା ସାମାଜିକ ପ୍ରାଣୀ ହିସାବରେ ମନୁଷ୍ୟଦ୍ୱାରା ଅର୍ଜିତ ଅନ୍ୟାନ୍ୟ ଯୋଗ୍ୟତା ଓ ଆଦର୍ଶ ନିହିତ ଥାଏ।୪ ଏହିତଥ୍ୟ ଅନୁସାରେ ପରଜା ଆଦିବାସୀଙ୍କ ଜୀବନଧାରାରେ ଆସୁଥିବା ଜନ୍ମସଂସ୍କାର, ବିବାହସଂସ୍କାର, ମୃତ୍ୟୁସଂସ୍କାର, ଦେବଦେବୀଙ୍କ ପୂଜାର୍ଚ୍ଚନା, ପର୍ବପର୍ବାଣି ପାଳନ, ନୃତ୍ୟ, ଗୀତ, ବାଦ୍ୟ ପରିବେଷଣକଳା, ଖାଦ୍ୟପାନୀୟ ପ୍ରସ୍ତୁତି, ବେଶଭୂଷା, ଆଭୁଷଣ, ଅଳଙ୍କାର ଓ ପ୍ରସାଧନୀ ବ୍ୟବହାର, ଅତିଥିସତ୍କାର ଏବଂ ଲୋକମାନସିକତା ସହିତ ସମ୍ବନ୍ଧିତ ଅନ୍ୟାନ୍ୟ ଅନୁଷଙ୍ଗ ହିଁ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସଂସ୍କୃତି। ଏମାନଙ୍କ ସାଂସ୍କୃତିକ ସ୍ୱରୂପକୁ ରେଖାଚିତ୍ର ମାଧ୍ୟମରେ ଏଠାରେ ପ୍ରକାଶ କରାଯାଇଛି।

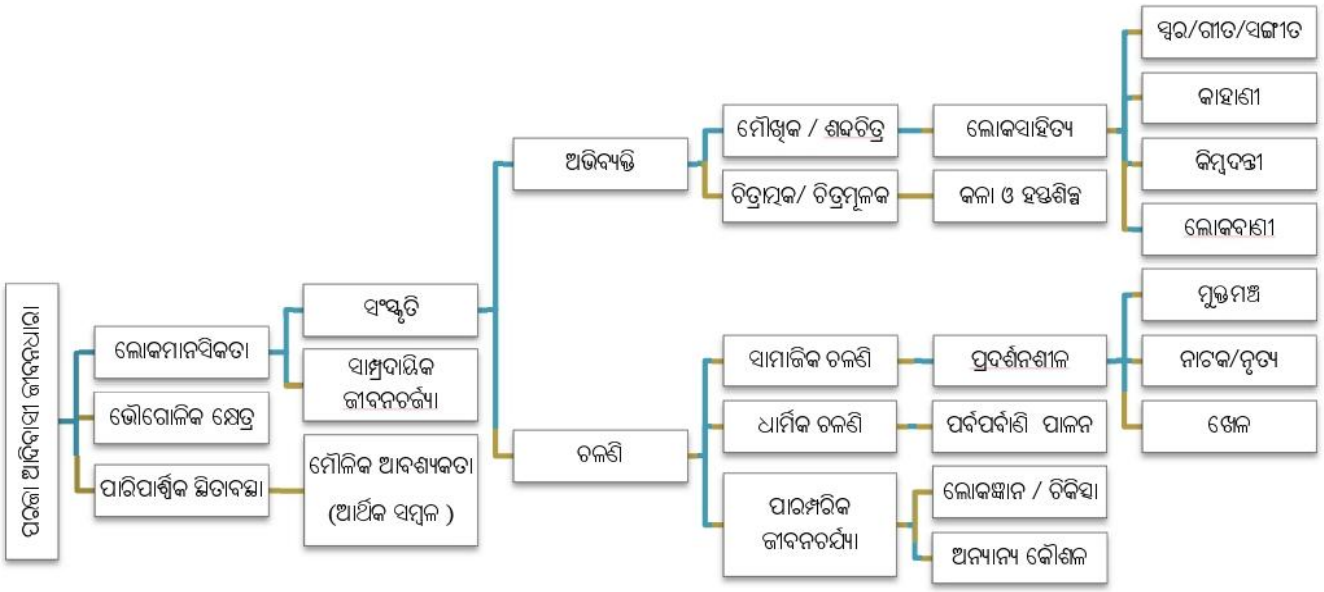

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ଲୋକସଂସ୍କୃତିର ଏକ ଗୁରୁତ୍ୱପୂର୍ଣ୍ଣ ଅଂଶ ହେଉଛି ପରଜା ଲୋକଗୀତ। ପ୍ରାଚୀନ କାଳରୁ ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟ ସାମାଜିକ-ସାଂସ୍କୃତିକ-ଛନ୍ଦବଦ୍ଧ ଜୀବନର ବିଭିନ୍ନ ପର୍ଯ୍ୟାୟରେ ସଙ୍ଗୀତ ପରିବେଷଣର ଧାରା ଅବ୍ୟାହତ ରଖି ଜୀବନକୁ ଆନନ୍ଦମୟ କରିଆସିଛି ଏହି ବିଶ୍ୱାସରେ ଯେ ଈଶ୍ୱର ଉପଭୋଗ କରିବାପାଇଁ ତା'କୁ ଜୀବନ ଦେଇଛନ୍ତି। ପ୍ରତ୍ୟହ ଏହି ସଙ୍ଗୀତପ୍ରିୟ ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର କଣ୍ଠରୁ ଅସଂଖ୍ୟ ଗୀତ ଜନ୍ମନେଇ ବିକ୍ଷିପ୍ତ ହୋଇଯାଉଛି ନଦୀ, ଝରଣା, ପାଣି, ପବନ, ପାହାଡ଼, ପର୍ବତ ଓ ବିସ୍ତିର୍ଣ୍ଣ ଆକାଶ ବକ୍ଷରେ। ଲିପିବଦ୍ଧ କରି ସାଇତି ରଖିବା ପାଇଁ ଏମାନଙ୍କର ପ୍ରୟାସ ନଥାଏ, ପ୍ରୟାସ କଲେ ହୁଏତ ଗୀତର ପରିସର ସୀମିତ ଓ ସଂକୀର୍ଣ୍ଣ ହୋଇଯିବ ଅଥବା ଏମାନଙ୍କର ସର୍ଜନଶୀଳ ପ୍ରତିଭା ମଞ୍ଚର କି ନିଶେଷ ହୋଇଯିବ! ଏମାନଙ୍କର ଜୀବନାନୁଭୂତିର ସ୍ୱତଃସ୍ଫୂର୍ତ୍ତ ଅଭିବ୍ୟକ୍ତି ହେଉଛି ଏହି ଗୀତ, ଏହା କେବେ ମରିନପାରେ; ଯୁଗୀୟ ବୈଶିଷ୍ଟ୍ୟ ଅନୁସାରେ କିନ୍ତୁ ବିବର୍ତ୍ତିତ ଓ ରୂପାନ୍ତରିତ ହୋଇଚାଲେ। କେହିକେହି ସମାଲୋଚକ ଓ ଗବେଷକ ତେଣୁ ଲୋକଗୀତକୁ ଜୀବନବେଦର ଗୌରବ ପ୍ରଦାନ କରିଛନ୍ତି। ବିଶିଷ୍ଟ କବି ତଥା ଲୋକସାହିତ୍ୟର ବିଶାରଦ ସୀତାକାନ୍ତ ମହାପାତ୍ରଙ୍କ ବିଚାରରେ ଆଦିବାସୀ ଲୋକଗୀତ ହିଁ ଆଦିବାସୀଙ୍କ ମୌଖିକ କବିତା।୫ ଶ୍ରୀଯୁକ୍ତ ମହାପାତ୍ର ପ୍ରତ୍ୟେକ ଆଦିବାସୀ ସଙ୍ଗୀତ ଓ ମୌଖିକ ପରମ୍ପରାର କବିତାକୁ ଏକ ଓ ଅଭିନ୍ନ ରୂପେ ଗ୍ରହଣ କରିଛନ୍ତି। ଜନ୍ମ, ଶିଶୁର ନାମକରଣ ଉତ୍ସବ, ବିବାହ, ପ୍ରେମ, ବିରହ, ଦେବଦେବୀପୂଜା, ପର୍ବପର୍ବାଣି ପାଳନ, ଖେଳକୁଦ, ବିହନବୁଣା, ପଲ୍ଲାରୁଆ, ଶସ୍ୟ ଅମଳ ଓ ଗୋରୁ ଜଗିବା ଆଦି ସାମାଜିକ ଜୀବନର ପ୍ରତିଟି କ୍ଷେତ୍ରରେ ପ୍ରତ୍ୟେକ ପ୍ରସଙ୍ଗ ପାଇଁ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟରେ ସଙ୍ଗୀତ ପରିବେଷଣର ପରମ୍ପରା ରହିଛି। ଏହି ଗୀତଗୁଡ଼ିକରେ ସେମାନଙ୍କର ସଂସ୍କୃତି ଓ ସାଂସ୍କୃତିକ ମୂଲ୍ୟବୋଧର ଚିତ୍ର ପ୍ରତିଫଳିତ ହୋଇଥାଏ।

2.1. ଜନ୍ମସଂସ୍କାର ସମୟର ଗୀତ :

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମାଜରେ ନବଜାତ ଶିଶୁକୁ ଦେବଦେବୀଙ୍କର ଆଶୀର୍ବାଦ/ବରଦାନ ମନେକରାଯାଏ। ଏହି କାରଣରୁ ଶିଶୁଜନ୍ମ ଅବସରରେ ସେମାନଙ୍କ ଆରାଧ୍ୟ ଦେବଦେବୀଙ୍କ ନିକଟରେ ଧୂପ, ଦୀପ, ଝୁଣା, ଅରୁଆ ଚାଉଳ, ନଡ଼ିଆ ଆଦି ଉତ୍ସର୍ଗ କରି ପରଜାମାନେ ପୂଜା କରନ୍ତି। ଏଥିସହିତ ଡୁମାଦେବତା ବା ପରିବାରର ପରପାରଗତ/ ମୃତବ୍ୟକ୍ତିବିଶେଷଙ୍କର ଆତ୍ମା/ ପ୍ରେତଦେବତାଙ୍କୁ ସନ୍ତୁଷ୍ଟ କରିବା ପାଇଁ ପାଦଚଲା ରାସ୍ତାର ଦୋଛକିରେ କିମ୍ବା ନିର୍ଦ୍ଦିଷ୍ଟ ପୂଜାସ୍ଥଳରେ ମାଣ୍ଡିଆଗୁଣ୍ଡ ସହାୟତାରେ ସେମାଙ୍କର ପାରମ୍ପରିକ ଯନ୍ତ୍ର ଅଙ୍କନ କରି କଳା କୁକୁଡ଼ା ଓ ପାରମ୍ପରିକ ପ୍ରଣାଳୀରେ ପ୍ରସ୍ତୁତ ମଦ ଅର୍ପଣ ପୂର୍ବକ ପରଜାମାନେ ସ୍ୱତନ୍ତ୍ର ପୂଜା କରନ୍ତି। ପ୍ରେତ ଆଦିଙ୍କ ଠାରେ ବିଶ୍ୱାସ କରିବାର ଲୋକ-ମାନସିକତାକୁ ପ୍ରଫେସର କୁମୁଦ ରଞ୍ଜନ ପାଣିଗ୍ରାହୀ ଲୋକପରମ୍ପରା ପରିସରଭୁକ୍ତ କରି ଏହାକୁ ଅସାଧାରଣ ବିଶ୍ୱାସ ରୂପେ ଉଲ୍ଲେଖ କରିଛନ୍ତି।୬ ଲୋକ-ମାନସ ପ୍ରସୂତ ବିଶ୍ୱାସ ଅନୁସାରେ ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟରେ ନିର୍ଦ୍ଧାରିତ ଦିନରେ ନବଜାତ ଶିଶୁର ନାମକରଣ କାର୍ଯ୍ୟକ୍ରମ ଅନୁଷ୍ଠିତ ହୁଏ। ଏଥିରେ ପରଜା ସାହି ବା ଗ୍ରାମର ସମସ୍ତ ଭାଇବନ୍ଧୁକୁଟୁମ୍ବ ଏକତ୍ରିତ ହୋଇ ଶିଶୁର ବନ୍ଦାପନା କରନ୍ତି ଓ ତା'ର ମଙ୍ଗଳ କାମନା କରି ଆଶୀର୍ବାଦ ପ୍ରଦାନ କରନ୍ତି। ଏହି ପରିପ୍ରେକ୍ଷୀରେ ଉପହାର ସ୍ୱରୂପ ଶିଶୁକୁ ଶ୍ରଦ୍ଧାରେ କିଏ ଦୁଇଟଙ୍କା, କିଏ କିଛି ବସ୍ତୁ ଦେଇ ନପାରିଲେ ମଧ୍ୟ ଶିଶୁର ମଥାରେ ଟୋପେ ଶୁଭଟୀକା ଟିପିଦେଇ ଆଶୀର୍ବାଦ କରେ ଓ ଶୁଭେଚ୍ଛା ଜଣାଏ। ଏହି ମର୍ମର ଗୀତଟିକୁ ଲକ୍ଷକରାଯାଉ। ପରଜା ଗୀତର ଓଡ଼ିଆ ରୂପାନ୍ତର-

ଆସ ଆଇ ଆସ ଝିଅ ଶୁଭଟୀକା ଦେବା
ଆମ ପିଲାର ନାଆଁଦିଆରେ
ମଙ୍ଗଳଗୀତ ଗାଇବା...
ନାଆଁଦିଆ ବେଳହେଲା ନାମଧରି ଡାକରେ
କେଉଁ ଝିଅଟି ଦୁଇଟଙ୍କା ବନ୍ଦାଇବରେ

ଯୁବଯୁବତୀ ଦୁଇଟଙ୍କା ବନ୍ଦାଇ ଦେବେରେ।

ତା'ର ପୂର୍ବଜ ଆତ୍ମାକୁ ଡାକିବାରେ
ସମସ୍ତଙ୍କୁ ଡାକିବାରେ
କଳା କୁକୁଡ଼ା ଦେଇ ଡାକିବାରେ
ପ୍ରେତ ଦେବତାମାନଙ୍କୁ...,
ମଦହାଣ୍ଡିଆ ସଙ୍ଗରେ ନେଇ ଆସରେ
ଦୋନାରେ ଝୁଣା ସଜାଇ ଆଣରେ
ସବୁ ସାମଗ୍ରୀ ନେଇ ଆସ ପୂଜା କରିବାରେ
ଦିଶାରି ଗୁରୁମାଇଙ୍କୁ ସବୁ ଦେବାରେ।

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟରେ ଦିଶାରି ଓ ଗୁରୁମାଇ ହେଉଛନ୍ତି ସେମାନଙ୍କର ପାରମ୍ପରିକ ପୁରୋହିତ। ଏଇମାନଙ୍କର ପୌରୋହିତ୍ୟରେ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମାଜର ସମସ୍ତ ଶୁଭକାର୍ଯ୍ୟ ସମ୍ପନ୍ନ ହୋଇଥାଏ। ସମାଜରେ ଯଜ୍ଞାଦି କାର୍ଯ୍ୟରେ ବ୍ରାହ୍ମଣର ଯେଉଁ ଦାଇତ୍ୱ ଓ ଭୂମିକା ରହିଥାଏ, ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମାଜରେ ଦିଶାରି ଗୁରୁମାଇଙ୍କର ଅନୁରୂପ ଭୂମିକା ରହିଛି। ଦିଶାରି ସାଧାରଣ ପୂଜା ଓ ଅନ୍ୟାନ୍ୟ ସଂସ୍କାରମୂଳକ କାର୍ଯ୍ୟ ତୁଲାଇ ଥାଏ। ଗୁରୁମାଇ, ସାଧରଣତଃ ଅଧିକାଂଶ କ୍ଷେତ୍ରରେ ମହିଳା ପୂଜକକୁ ବୁଝାଇଥାଏ। ଗୁରୁମାଇଙ୍କ କାର୍ଯ୍ୟ ହେଉଛି ପାରମ୍ପରିକ ମନ୍ତ୍ରଗାନ ପୂର୍ବକ ଲୋକଦେବଦେବୀ, ଇଷ୍ଟଦେବଦେବୀ ଓ ପୂର୍ବପୁରୁଷଙ୍କ ଆତ୍ମା ଆଦି ଆଧିଭୌତିକ ସତ୍ତାଙ୍କୁ ଆବାହନ କରି ପୂଜାକରିବା, ସେମାନଙ୍କର ଉଦ୍ଦେଶ୍ୟ ଓ ପରିବାରପ୍ରତି ମନୋଦଶା ଜାଣି ପରିବାର ଲୋକଙ୍କୁ ଜଣାଇବା ଏବଂ ସେମାନଙ୍କୁ ସନ୍ତୁଷ୍ଟ କରି ଆଶୀର୍ବାଦ ଭିକ୍ଷା କରିବା। ଗୁରୁମାଇ ଜରିଆରେ ପୂଜାକରିବାର ପ୍ରକ୍ରିୟାଟି ପ୍ରାୟତଃ ଏକଘଣ୍ଟାରୁ ତିନିଘଣ୍ଟା ମଧ୍ୟରେ ସମ୍ପନ୍ନ ହୋଇଥାଏ। ବିଭିନ୍ନ ଦେବଦେବୀଙ୍କ ନାମସ୍ମରଣ, ଗୁଣ, ଯଶ ଓ ମହିମାଗାନ ପୂର୍ବକ ଗୁରୁମାଇ ପୂଜାକରୁଥିବା ହେତୁ ତା'କୁ ଶୁଣିବା ପାଇଁ ଲୋକେ ପୂଜାସ୍ଥଳରେ ଏକତ୍ରିତ ହୋଇ ଭକ୍ତିମୟ ପରିବେଶ ସୃଷ୍ଟି କରିଥାନ୍ତି।

2.2. ବିବାହ ସମୟର ଗୀତ :

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ବିବାହ ପରମ୍ପରା ବିଚିତ୍ର ଓ କୌତୁହଳପ୍ରଦ। ପ୍ରସ୍ତାବିତ ବିବାହ, ଉଦୁଲିଆ ବିବାହ (ପ୍ରେମବିବାହ), ଝିଙ୍କାଟଣା ବିବାହ (ବଳପୂର୍ବକ ଟାଣିନେଇଁ ବିବାହ), ଘରାକ୍ୱାଇଁ ବିବାହ, ସଗରତା ବିବାହ (ପ୍ରଥମ ସ୍ୱାମୀକୁ ଛାଡ଼ି ଦ୍ୱିତୀୟ ସ୍ୱାମୀ ଗ୍ରହଣ), ପଇସାମୁଣ୍ଡି ବିବାହ (ବିବାହ ଯୋଗ୍ୟା କନ୍ୟା ସ୍ୱଇଚ୍ଛାରେ ନିଜ ପସନ୍ଦର ପୁଅ ଘରକୁ ଯାଇ ସେଇ ପୁଅକୁ ବିବାହ କରିବା) ଆଦି ବିବାହପ୍ରଥା ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମାଜରେ ପ୍ରଚଳିତ। କିନ୍ତୁ ଏହିସବୁ ବିବାହପରମ୍ପରା ମଧ୍ୟରୁ କେବଳ ପ୍ରସ୍ତାବିତ ବିବାହକୁ ହିଁ ସମ୍ମାନଜନକ ବିବାହପ୍ରଥା ଭାବରେ ସେମାନଙ୍କ ସମାଜରେ ଗ୍ରହଣ କରାଯାଇଛି।

ପ୍ରସ୍ତାବିତ ବିବାହ କ୍ଷେତରେ ପ୍ରଥମେ ବରପକ୍ଷଲୋକ କୌଣସି ବିବାହଯୋଗ୍ୟା କନ୍ୟାଘରକୁ ପ୍ରସ୍ତାବ ନେଇଁ ଯାଆନ୍ତି। ଗୀତମାଧ୍ୟମରେ ଏହି ପ୍ରସ୍ତାବର ଅଭିବ୍ୟକ୍ତି ଘଟେ। 'ମଦ ହିଁ ଆଦ୍ୟ ତା'ପରେ ଖାଦ୍ୟ ଓ ବାଦ୍ୟ' ଅର୍ଥାତ ମଦ ହେଉଛି ବିବାହ ଭେଟିର ପ୍ରତୀକ। ପାରମ୍ପରିକ ରୀତିରେ ଦେଶୀୟ କୌଶଳରେ ପ୍ରସ୍ତୁତ କରାଯାଇଥିବା କିଛି ମଦକୁ ଭେଟିଦେଇ ପ୍ରସ୍ତାବ ଦିଆଯାଏ। କନ୍ୟାପକ୍ଷ ସେହି ମଦକୁ ସାଦରେ ଗ୍ରହଣକଲେ ପ୍ରସ୍ତାବ ରହିଲା ବା ବିବାହକାର୍ଯ୍ୟ ଆଗେଇପାରେ ବୋଲି ଧରିନିଆଯାଏ। ଏହି ଭାବଧାରା ଆଧାରିତ ମୂଳ ପରଜା ଗୀତର ଓଡ଼ିଆ ରୂପାନ୍ତରଟି ହେଉଛି-

ଯୋଡ଼ି ମାଗୁଣି ମାଗୁଣି, ଯୋଡ଼ି ସମୁଦୁଣି
ତୁମର ଝିଅ ଅଛି, ଯୋଡ଼ି ସମୁଦୁଣି
ମଦ ବୋତଲେ ଦେବି ଯୋଡ଼ି ସମୁଦୁଣି।

ସମ୍ପ୍ରତି ମଦର କୁପ୍ରଭାବ ସମ୍ପର୍କରେ ସମସ୍ତେ ସଚେତନଶୀଳ। ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟ ମଧ୍ୟ କ୍ରମଶଃ ସଚେତନ ହୋଇଛନ୍ତି। ପରମ୍ପରାକୁ ମାନିବା ଭିନ୍ନ କଥା କିନ୍ତୁ ପରମ୍ପରାକୁ ବଞ୍ଚାଇ ରଖିବା ନାମରେ ଆଦିମତା ଭିତରକୁ ଚାଲିଯିବା ଆଦୌ ସ୍ପୃହଣୀୟ ନୁହେଁ। ସାଂସ୍କୃତିକ ମୂଲ୍ୟବୋଧର ଗୁରୁତ୍ୱ ସମ୍ପର୍କରେ ଅଜ୍ଞତା ଓ ସ୍ୱଳ୍ପମେଧା ସମ୍ପନ୍ନ ଲୋକ-ମାନସର ପରିଣାମ ବଶତଃ ଅତୀତରେ ସୁରା ଅଥବା ମଦ୍ୟାଦି ସେବନ ଓ ସାଂସ୍କୃତିକ ଜୀବନଚର୍ଯ୍ୟାରେ ତାକୁ ସ୍ଥାନିତ କରାଯାଉଥିଲା। ଆଦିବାସୀ ସଂସ୍କୃତିରେ ଲୋକଟି ଯେତେ ଅନୁନ୍ନତ ଅବସ୍ଥାରେ ରହିଥାଉନା କାହିଁକି, ସେ କେବେ ଚାହେନା ଯେ ତା'ର ପୁତ୍ରକନ୍ୟା ସେମିତି ଏକ କୁପରିସ୍ଥିତିରେ ଜୀବନ ଅତିବାହିତ କରନ୍ତୁ। ପରିବାରରେ ଲୋକଟି ଯେଡ଼େ ମଦ୍ୟପ ହୋଇଥିଲେ ମଧ୍ୟ ସିଏ ଆଶା କରିଥାଏ ଯେ, ତା'ର କନ୍ୟା ଯେଉଁ ବ୍ୟକ୍ତିର ହାତଧରି ବିବାହ କରିବ ସିଏ ବ୍ୟକ୍ତିଟି ଅନ୍ତତଃ ମଦ୍ୟପ ହୋଇନଥାଉ। ଏହିଭାବନାଟି ବିବାହ ପ୍ରସ୍ତାବ ସମୟର ଗୀତରେ କନ୍ୟାର ପିତାମାତା ମୁଖରୁ ପ୍ରକାଶିତ ହୋଇଛି।

ମଦ ବୋତଲ ଲୋଡ଼ାନାହିଁ, ଯୋଡ଼ି ସମୁଦୁଣି
ଝିଅ ଦେବିନାହିଁ, ଦେବିନାହିଁ ଯୋଡ଼ି ସମୁଦୁଣି,
ତୁମର ପୁଅ ମଦୁଆ ଯୋଡ଼ି ସମୁଦୁଣି।

ବରପକ୍ଷରୁ ପ୍ରଦାନ କରାଯାଇଥିବା ମଦ କନ୍ୟା-ପିତାମାତା ଗ୍ରହଣ ନକଲେ ବିବାହ ପ୍ରସ୍ତାବ ଗୃହିତ ହୋଇପାରେ ନାହିଁ। ପରଜା ମଦପ୍ରିୟ ହୋଇପାରେ କିନ୍ତୁ ମଦୁଆକୁ ସେ ଘୃଣାକରେ। ସେମାନଙ୍କ ଅବଚେତନ ମନରେ ମଦ ଓ ମଦୁଆ ପ୍ରତି ଅନାଦରଭାବ ଜନିତ ଲୋକ-ମାନସିକତାର କିଞ୍ଚିତ ବିଦ୍ୟମାନତା ହେତୁ ଏହା ସମ୍ଭବ ହୁଏ। ପିତାମାତାଙ୍କର ଆନ୍ତରିକ ଇଚ୍ଛା ଥାଏ ଯେ, ସେମାନଙ୍କର ଝିଅ ଜଣେ ଚରିତ୍ରବାନ, ଆଦର୍ଶ ବ୍ୟକ୍ତି ସହିତ ବିବାହ କରୁ। ମଦ ଅର୍ଥାତ ମ= ମରିବ, ଦ= ଦରିଦ୍ର ହୋଇ ମରିବ। ତେଣୁ ବିବାହ ପ୍ରସ୍ତାବ ନେଇ ଆସିଥିବା ପୁଅଟା ଯେ ମଦୁଆ- ଏକଥା ଜାଣି କନ୍ୟାର ପରିବାରଲୋକେ ନିଜ ଝିଅଟିକୁ ବିବାହ ଦେବା ପାଇଁ ଅସ୍ୱୀକାର କରିଥିବା ପ୍ରସଙ୍ଗଟି ଏହି ଗୀତରେ ରୂପାୟିତ ହୋଇଛି।

2.3. ପର୍ବପର୍ବାଣି ଭିତ୍ତିକ ଗୀତ :

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟରେ ମୁଖ୍ୟତଃ ଦୁଇଟି ଆଧାରରେ ପର୍ବପର୍ବାଣି ଅନୁଷ୍ଠିତ ହୋଇଥାଏ। ଗୋଟିଏ ହେଉଛି କୃଷି କୈନ୍ଦ୍ରିକ ଓ ଅନ୍ୟଟି ହେଉଛି ଦେବଦେବୀଙ୍କ ପୂଜାର୍ଚ୍ଚନା ମୂଳକ। କୃଷି ହେଉଛି ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ପ୍ରଧାନ ଜୀବିକା। କୃଷିକୁ କେନ୍ଦ୍ରକରି ବର୍ଷର ବିଭିନ୍ନ ସମୟରେ ଏମାନେ ବହୁବିଧ ପର୍ବପର୍ବାଣି ପାଳନକରି ଉତ୍ସବମୁଖର ଜୀବନ ବଞ୍ଚନ୍ତି। ଚୈତ୍ରପର୍ବ, ପୌଷପର୍ବ, ବନ୍ଦାପନାପର୍ବ (ନୂଆଖାଇ), ଦିଆଲିପର୍ବ, ଦଶହରା ଆଦି ପର୍ବ ଏମାନଙ୍କର ଚଳଣିରେ ଅନ୍ତର୍ଭୁକ୍ତ। ଏହିସବୁ ପର୍ବଗୁଡ଼ିକ ମଧ୍ୟରୁ ଚଇତିପର୍ବ ଓ ପୌଷପର୍ବ ପରଜାମାନଙ୍କର ମୁଖ୍ୟ ପର୍ବ। ପ୍ରତିଟି ପର୍ବ ପାଇଁ ଏମାନଙ୍କର ନିର୍ଦ୍ଦିଷ୍ଟ ଗୀତ ରହିଛି।

ଚୈତ୍ର ମାସରେ ଅନୁଷ୍ଠିତ ହେଉଥିବା ଚୈତ୍ରପର୍ବ ପରଜାମାନଙ୍କ ପର୍ବପର୍ବାଣିର ମୁଖ୍ୟ ଆକର୍ଷଣ। ଆକାଶରେ ଚଇତିଜହ୍ନ ଦେଖାଦେଲେ ପରଜା ଯୁବାଯୁବତୀ ଗାଁଦାଣ୍ଡରେ ଏକତ୍ରିତ ହୋଇ ନୃତ୍ୟଗୀତ ପରିବେଷଣ କରିବା ସହିତ ପରସ୍ପର ପାଇଁ ଜୀବନସାଥୀ ବାଛିବାର ଅବସର ମଧ୍ୟ ପାଆନ୍ତି। ତେଣୁ ଚଇତ ଆସିଲେ ଏମାନଙ୍କର ମନନାଚେ। ଏହିପର୍ବର ଅନ୍ୟଏକ ବିଶେଷତ୍ୱ ହେଉଛି ବେଣ୍ଟ ବା ଶିକାର ଉତ୍ସବ। ପରଜାମାନେ ମିଳିତ ଭାବରେ ନିର୍ଦ୍ଧାରିତ ସମୟରେ ପାରମ୍ପରିକ ଅସ୍ତ୍ରଶସ୍ତ୍ର ସହିତ ଜଙ୍ଗଲ ଭିତରକୁ ଶିକାର ଉଦ୍ଦେଶ୍ୟରେ ଯାଇ ପ୍ରାୟ ସନ୍ଧ୍ୟା ସମୟରେ ଶିକାର ନେଇ ଫେରନ୍ତି। ଫେରିବା ବାଟରେ ଗାଁମୁଣ୍ଡରେ ଯୁବତୀ ଓ ସ୍ତ୍ରୀଲୋକେ ପୂଜାଥାଳି ସହ ଅପେକ୍ଷା କରି ରହିଥାନ୍ତି ଏବଂ ବନ୍ଦାପନା କରି ବାଦ୍ୟ, ନୃତ୍ୟ ଓ ଗୀତର ତାଳେତାଳେ ଗାଁଭିତରକୁ ଘେନି ଆସିଥାନ୍ତି। ଶିକାରକୁ ଯିବା ସମୟର ଗୀତଟି ଏପ୍ରକାର-

ଚଇତ ଆସିଲା, ଏଇଯେ ମନ ନାଚିଲା
ଧାଙ୍ଗଡ଼ା ଦଳକୁ ଦେଖି ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ ରସିଲା,
ଆସ ଆସ ଆସ ଯିବା ....
ଏଇଯେ ଦାଦି-ଡଙ୍ଗରେ ଯିବା

ଆମେ ଜନ୍ତୁ ମାରିଯିବା, କୁଟୁରା ମାରି ଯିବା,
ଆମେ ବାରା ମାରି ଯିବା
ଆସ ଆସ ଆସ ଯିବା ।

ବେଣ୍ଟ ଶିକାରରୁ ଆଣିଥିବା ଜନ୍ତୁକୁ ଏମାନେ ସମସ୍ତେ ପରସ୍ପର ମଧ୍ୟରେ ବାଣ୍ଟି ଭୋଜନ କରିବାର ପରମ୍ପରା ସମାଜରେ ପ୍ରଚଳିତ ଥିଲା। ଏହି ରୀତିରେ ଗୋଷ୍ଠୀମୟ ଜୀବନର ଉପଦେୟତାକୁ ଭଲରେ ବୁଝି ପରସ୍ପର ମଧ୍ୟରେ ଭାଇଚାରାଭାବ ବୃଦ୍ଧିରେ ଏମାନେ ବିଶ୍ୱାସୀ ଥିଲେ। କିନ୍ତୁ ସମୟ ବଦଳିବା ସହିତ ଏମାନଙ୍କର ମୌଳିକ ଚିନ୍ତାଧାରାରେ ମଧ୍ୟ ନିରାଶାଜନକ ପରିବର୍ତ୍ତନ ଦେଖାଦେଇଛି। ସାଂସ୍କୃତିକ ପରମ୍ପରାର ଗୁରୁତ୍ୱକୁ ପଛରେ ପକାଇ ପରାଜମାନେ କ୍ରମଶଃ ଇନ୍ଦ୍ରିୟଲାଳସା ପାଇଁ ଅଧିକରୁ ଅଧିକ ଶିକାର କରିବାକୁ ଚାହିଁଲେ। ସମ୍ପ୍ରତି ଶିକାର ଉପରେ ସରକାରୀ କଟକଣା ରହିଥିବା ହେତୁ ଏମାନେ ଶିକାରରୁ ନିବୃତ୍ତ ରହିଥିବା କ୍ଷେତ୍ର ଅଧ୍ୟୟନରୁ ଜଣାପଡ଼ିଛି।

2.3.1. କିନ୍ଦ୍ରିଗୀତ :

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ସମାଜରେ ଅନୁଷ୍ଠିତ ହେଉଥିବା ପ୍ରତ୍ୟେକ ପର୍ବ ଅବସରରେ ଏମାନେ କିନ୍ଦ୍ରିଗୀତ ପରିବେଷଣ କରନ୍ତି। 'କିନ୍ଦ୍ରି' ଶବ୍ଦର ଅର୍ଥ ବକ୍ର ବା ବକ୍ରୋକ୍ତି। ତେଣୁ 'କିନ୍ଦ୍ରିଗୀତ' ଅର୍ଥ ବିଶେଷୋକ୍ତି/ ବକ୍ରୋକ୍ତିମୂଳକ ଗୀତ। ଏହି ଗୀତରେ ଲକ୍ଷାର୍ଥ ହେଉଛି ପ୍ରଧାନ, ଆଭିଧାନିକ ଅର୍ଥ ଗୌଣ। ଅର୍ଥାତ କୌଣସି ପ୍ରସଙ୍ଗକୁ ସିଧାସଳଖ ଭାବରେ ନକହି ବୁଲେଇ, ବଙ୍କେଇ ଗୀତମାଧ୍ୟମରେ ବକ୍ରଭାବରେ ବୋଲାଯାଉଥିବା ହେତୁ ଏହା କିନ୍ଦ୍ରିଗୀତ ରୂପେ ପରିଚିତ। ଆଞ୍ଚଳିକ ଭାଷା ବା ପରଜା ଭାଷାରେ 'କିନ୍ଦ୍ରି' ଶବ୍ଦର ଅର୍ଥ ହେଉଛି ବୁଲାଣି। ଏହି ଗୀତରେ ମୁଖ୍ୟତଃ ପ୍ରେମ-ମିଳନ-ଅନୁରାଗ ଓ ବିରହ ବେଦନାଧର୍ମୀ ଭାବ ପ୍ରକାଶିତ ହୋଇଥାଏ। ପ୍ରଶ୍ନୋତ୍ତର ଶୈଳୀରେ ଏହିଗୀତ ପ୍ରତିଯୋଗୀତା ଭିତ୍ତିରେ ଦୁଇଦଳ ଅଥବା ଦୁଇଜଣ ବ୍ୟକ୍ତି, ଯୁବଯୁବତୀଙ୍କ ମଧ୍ୟରେ ଅନୁଷ୍ଠିତ ହେଉଥିବା ହେତୁ ଏହା ଅତ୍ୟନ୍ତ ରୋଚକ, ଆଦରଣୀୟ ଓ ଲୋକପ୍ରିୟ ହୋଇଥାଏ। ଏହିଗୀତର ଏକ ବିଶେଷତ୍ୱ ହେଉଛି ଏହାକୁ ଉଭୟ ପରଜା ଭାଷାରେ ଅଥବା ଦେଶୀଆ ଭାଷାରେ ବୋଲାଯାଇ ପାରେ, କିନ୍ତୁ କେଉଁ ଭାଷାରେ କିପରି ବୋଲାଯିବ, ତାହା ଗାୟକର ଅଭିଜ୍ଞତା ଉପରେ ନିର୍ଭର କରେ। ଏକ ପ୍ରେମମୂଳକ କିନ୍ଦ୍ରିଗୀତର ଓଡ଼ିଆ ଭାବାନ୍ତରର ଦୃଷ୍ଟାନ୍ତ ଏଠାରେ ପ୍ରଦତ୍ତ-

ଗଡ଼ିଗଡ଼ି ଗଲା କୁନ୍ଦକରାଟ
ନଡ଼ିଆ କାଟିଲେ ରସ
ତୁମର ଆମର ପୀରତି କରିବା
ଗୁରୁଣ୍ଡି ଗୁରୁଣ୍ଡି ଆସ;
ଜାଇ, ଯୁଇ, ମଲ୍ଲି ମୁଣ୍ଡରେ ଶୋଭିତ
ବିଚାର କରିବ ଚିତ୍ତ।

ଗୀତର ଭାବାର୍ଥ ଏହିପ୍ରକାର- କୁନ୍ଦ, କରାଟ ଆଦି ଫୁଲ ଅତି ସୁଗନ୍ଧିତ ଓ ଖୁବ ସୁନ୍ଦର ମଧ୍ୟ। କିନ୍ତୁ ଏମାନେ ବଣରେ ଫୁଟି ବଣରେ ହିଁ ଝଡ଼ିପଡ଼ି ବିକ୍ଷିପ୍ତ ହୋଇଯାନ୍ତି; କେହି ଗୁରୁତ୍ୱ ଦିଅନ୍ତି ନାହିଁ। ହେଲେ ନଡ଼ିଆଟି ଜଟପୂର୍ଣ୍ଣ, ଶକ୍ତ ଓ ଦେଖିବାକୁ ଅସୁନ୍ଦର କିନ୍ତୁ ଭିତରେ ସିଏ ସୁନ୍ଦର ଓ ରସଯୁକ୍ତ। ତେଣୁ ନଡ଼ିଆଟି ଗୁଣଗ୍ରାହୀ ବ୍ୟକ୍ତିର ପ୍ରିୟ ଓ ଆଦରଣୀୟ। ଏହିରୀତିରେ ବକ୍ରୋକ୍ତି ମାଧ୍ୟମରେ ଯୁବତୀଟି ଯୁବକକୁ ସୂଚାଇ ଦେବାକୁ ଚାହିଁଛି ଯେ ରୂପ କେବଳ ବାହ୍ୟ ଅଭୋରଣ, ଗୁଣ ହିଁ ମୂଳକଥା। ଗୁଣ ନିକଟରେ ରୂପର କୌଣସି ପ୍ରୟୋଜନ ନାହିଁ। ଗୁଣଥାଇ ରୂପ-ସୌନ୍ଦର୍ଯ୍ୟ ନଥିବା କ୍ଷେତ୍ରରେ, ଗୁଣର ପ୍ରଶଂସା ଜରିଆରେ କଦାଚିତ ରୂପର ଅଭାବପଣ ଦୂର କରାଯାଇପାରେ କିନ୍ତୁ ବ୍ୟକ୍ତି ଯେତେ ରୂପବାନରୂପବତୀ ହୋଇଥିଲେ ହେଁ ରୂପଗାନ ଜରିଆରେ ଗୁଣର ଅଭାବ ପୂରଣ କରାଯାଇନପାରେ। ଏହିରୂପେ ଯୁବତୀ ନିଜର ମନୋଭାବ ବ୍ୟକ୍ତକରି ପ୍ରେମସଂକେତ ଦେବା ସହିତ ତା'ର ମସ୍ତକଦେଶରେ ଶୋଭାପାଉଥିବା ଜାଇ, ଯୁଇ, ମଲ୍ଲି କଥା ପରେ ବିଚାରକୁ ନିଆଯିବ ବୋଲି ପ୍ରକାଶ କରିଛି। ଏଠାରେ ଜାଇ, ଯୁଇ, ମଲ୍ଲି ହେଉଛନ୍ତି ସେହି ଯୁବକମାନଙ୍କର ପ୍ରତୀକ, ଯେଉଁମାନେ ଗୁଣବତୀ ଯୁବତୀର ପ୍ରେମଲାଭ

ଉଦ୍ଦେଶ୍ୟରେ ଅତି ବ୍ୟାକୁଳ ଚିତ୍ତରେ ଯୁବତୀ ଚାରିପାଖରେ ସର୍ବଦା ଘୂରିବୁଲୁଛନ୍ତି। ବକ୍ରୋକ୍ତିର ଏରୂପ ବ୍ୟବହାର ପରଜା ଲୋକଗୀତର ଭାବସତ୍ତକୁ ନିଃସନ୍ଦେହ ରସସିକ୍ତ କରିଛି। ପ୍ରତ୍ୟୁତ୍ତରରେ ଯୁବକ ଗାଇଛି-

ଚାରିଆଡ଼େ ନନୀ ଶିଶାଲ ବଣ
ଝପଟି ଆସିଲି ମୁହିଁ,
କେତେ ଆକୁଳରେ ଡାକିଲି ତତେ
ଦୟା ଧର୍ମ କଲୁ ନାହିଁ;
କଷି କାକୁଡ଼ି ଦୁସ୍ତର ସର
ଆଶା ନଭାଙ୍ଗ ମୋର।

ଶିଶାଲ କଣ୍ଟକପୂର୍ଣ୍ଣ ବୁଦାଳିଆ ବଣୁଆ ଗଛ; ପ୍ରେମ ମାର୍ଗରେ ଅନ୍ତରାୟ ବା ବାଧକ ହେଉଥିବା ବ୍ୟକ୍ତିଙ୍କର ପ୍ରତିନିଧିତ୍ୱ କରିଛି ଏହି ଗୀତରେ। ଅର୍ଥାତ ଯୁବତୀ ପ୍ରେମରେ ଆନମନା ଯୁବକଟି ଅଭିଭାବକ ଓ ଗୁରୁଜନଙ୍କ ଦୃଷ୍ଟି ଅଗୋଚରରେ ଯୁବତୀକୁ ଦେଖାକରିବାକୁ ଯାଇ ଡାକପକାଇ ନିରାଶ ହୋଇଥିବାକଥା ଏଥିରେ ବ୍ୟକ୍ତ କରିଛି।

2.4. ଖେଳ ସମ୍ବନ୍ଧିତ ଗୀତ :

ଖେଳ ପରଜାମାନଙ୍କର ନିତିଦିନିଆ ଜୀବନର ପାରମ୍ପରିକା ଅନୁଷଙ୍ଗ। ଏହି ଖେଳର ପ୍ରଧାନ ଉପଜୀବ୍ୟ ନୃତ୍ୟ ଓ ଗୀତ। କିଛିବିଶେଷ ଧରଣର ନୃତ୍ୟକୁ ବା ନୃତ୍ୟପରିବେଷଣର କୌଶଳକୁ ଏମାନେ ଖେଳ ଅର୍ଥରେ ବୁଝି ଗ୍ରହଣ କରିଥାନ୍ତି। ଯଥା- 'ସାଇଲୋଡ଼ି ନୃତ୍ୟ', ଏହି ସାଇଲୋଡ଼ି ନୃତ୍ୟଟିକୁ ସେମାନେ ନୃତ୍ୟ ଅପେକ୍ଷା ଖେଳର ପରିସରଭୁକ୍ତ କରିବାକୁ ଅଧିକ ଯଥାର୍ଥ ମନେକରି 'ସାଇଲୋଡ଼ି ଖେଳ' ଭାବରେ ନାମିତ କରି ବିକଶିତ କରିଛନ୍ତି। ଏଥିସହିତ ପୁଚିଖେଳ, ଦୋଳିଖେଳ, ବହୂଚୋରି ଖେଳ, ବାଲାଇରାଣୀ ଖେଳ ସମେତ ଅନେକ ଅନାମଧେୟ ଖେଳ ଏମାନଙ୍କର ସାମାଜିକ-ସାଂସ୍କୃତିକ ଜୀବନକୁ ବିଶେଷିତ କରିଥାଏ। ବଡ଼କଥାଟି ହେଉଛି, ପ୍ରତ୍ୟେକ ଛୋଟବଡ଼ ଖେଳ ପାଇଁ ଏକଏକ ଗୀତ ମୌଖିକ ପରମ୍ପରାକ୍ରମେ ରହିଆସିଛି ଏବଂ ପରଜାମାନେ ଖେଳ ସହିତ ଗୀତ ମଧ୍ୟ ବୋଳିଥାନ୍ତି। ସବୁଠାରୁ ପ୍ରିୟ ଓ ଆମୋଦଦାୟକ ଖେଳ ହେଉଛି ସାଇଲୋଡ଼ି ଖେଳ ବା ସାଇଲୋଡ଼ି ନୃତ୍ୟ। ପାଦକୁ ପାଦ ଓ ହାତକୁ ହାତ ଛନ୍ଦି ଆଠାରୁ ଚାଳିଶି ଜଣ ବା ତାଠାରୁ ଅଧିକ ସ୍ତ୍ରୀଲୋକ, ଯୁବତୀଙ୍କର ମିଳିତ ପଦପାତଜନିତ ନୃତ୍ୟ ସାଇଲୋଡ଼ି ଖେଳ ନାମରେ ପରିଚିତ। ଏହିନୃତ୍ୟ ଢେମସାନୃତ୍ୟ ବା ଢେମସାଖେଳ ନାମରେ ମଧ୍ୟ ପରିଚିତ। ଏହା ଆଦିବାସୀ ସାମୂହିକ-ଭାବମାନସର ସାଙ୍କେତିକ ରୂପ। ଏହି ନୃତ୍ୟର ବିଭିନ୍ନ ଶୈଳୀ ବା ମୁଦ୍ରାକୁ ଭିତ୍ତିକରି ଢେମସାର ସ୍ୱରୂପ ନିର୍ଦ୍ଧାରଣ କରାଯାଇଥାଏ। ଯଥା-

I. ଖୁନ୍ଦାଢେମସା
II. ହିଣ୍ଡାଢେମସା
III. ମାଣ୍ଡିଲଚକାନି
IV. ଆଁଟାଲଚକାନି
V. ଆଁଟାଝୁଲାନି
VI. ଗୋଡ଼ବେଟାନି
VII. କାରାପାନି
VIII. ପାଲାନି

ଏହି ନୃତ୍ୟ ସମୟରେ ବୋଲାଯାଉଥିବା ଗୀତ ସାଇଲୋଡ଼ି ଗୀତ ନାମରେ ନାମିତ। ନୃତ୍ୟ ସମୟର ପରିବେଶ ଓ ପରିସ୍ଥିତି ଅର୍ଥାତ ବାଦକ, ଦର୍ଶକ ପ୍ରମୁଖଙ୍କର ଆଚରଣ ଓ ଚିନ୍ତାଚେତନାକୁ ତର୍ଜମା କରି ଗୀତରରୂପ ଦେବାରେ ନୃତ୍ୟପରିବେଷଣ କରୁଥିବା ଯୁବତୀମାନେ ବେଶ ଦକ୍ଷ ହୋଇଥାନ୍ତି। ଏହି ଖେଳ ବା ନୃତ୍ୟ ସହିତ ସମ୍ବନ୍ଧିତ ଗୀତଟିର ଓଡ଼ିଆ ରୂପାନ୍ତର ନିମ୍ନରେ ପ୍ରଦତ୍ତ-

ସରଗେ ଉଦିଲା ଲଞ୍ଜାତାରା
ରିଞ୍ଜୋଡ଼ି ଦେଖ୍‌ଦେଲାରେ
ଆମ ଗାଁଆର ଢେମସା ଦାଣ୍ଡେ,
ଖସରିଗଲା.....
ଗୋଡ଼ବେଟାନି ରେ....।

ପରଜା ଭାଷାରେ 'ରିଞ୍ଜୋଡ଼ି' ଶବ୍ଦର ଅର୍ଥ ଲାବଣ୍ୟରୂପଯୁକ୍ତା ତରୁଣୀକୁ ବୁଝାଏ, ଯାହାକୁ ସାଧାରଣତଃ ଗୋଟିଏ ଚାଉଳରେ ଗଢା (ଅତ୍ୟନ୍ତ ସୁନ୍ଦରୀ) ଅର୍ଥରେ ବୁଝାଯାଇଥାଏ। ସେହିପରି କେତେକ ସୌମ୍ୟକାନ୍ତ ଯୁବକକୁ ଏମାନେ 'ରିଞ୍ଜୋଡ଼ା' ବୋଲି କହିଥାନ୍ତି। ଢେମସା ନାଚିବା / ଖେଳିବା ଭିତରେ ସନ୍ଧ୍ୟା ଗଡ଼ିଯାଇ ଆକାଶରେ ଲଞ୍ଜାତାରା ଦେଖାଦେଇଛି। ଦେହରେ ଜହ୍ନଆଲୁଅର ଶୀତଳ ସ୍ପର୍ଶ, ମନରେ ପ୍ରେମାବେଗର କମ୍ପନ। ଫଳତଃ ଢେମସା ଖେଳୁଥିବା ରିଞ୍ଜୋଡ଼ିର ମନ କୌଣସି ରିଞ୍ଜୋଡ଼ା ପ୍ରତି ଆକର୍ଷିତ ହୋଇ ନୃତ୍ୟଛନ୍ଦ ଭାଙ୍ଗିଦେବା କିଛି ଅସ୍ୱାଭାବିକ ହୋଇନାହିଁ । ମୁହୂର୍ତ୍ତକର ଆବେଗକୁ ଉପଜୀବ୍ୟ କରି ଗୀତର ପରିକଳ୍ପନା ତେଣୁ ମାର୍ମିକ ହୋଇପାରିଛି।

2.4.1. ପ୍ରେମସନ୍ତକ ରୂପେ ମୁଦ୍ରିକାବିନିମୟ ପ୍ରାସଙ୍ଗିକ ଗୀତ :

ପରଜାମାନେ ବିଭିନ୍ନ ପ୍ରକାରର ପାରମ୍ପରିକ ଅଳଙ୍କାର ପରିଧାନ କରି ନିଜକୁ ସଜାଇବା ପାଇଁ ଭଲ ପାଆନ୍ତି। କେଶପାଇଁ ହିଚଣା (କ୍ଲିପ୍); ଗଳାପାଇଁ ଧାନମାଳି, ଚାପସରି, ଖଗେଲା; କାନପାଇଁ ନାଗୁଲି/ ନାଗୁଲି, ଝିକା, ଲୁଲି, ଖଞ୍ଜା; ନାକପାଇଁ ବେସରି, ଲବଙ୍ଗକେଡ଼ି, ଦଣ୍ଡି/ଡଣ୍ଡି, ନଥ; ହାତ/ବାହୁପାଇଁ ବାହାଟି, ଚୂଡ଼ି, ଖଡୁ, ମୁଦି; ପାଦରେ ପଇଁରି,ପାଞ୍ଜୁର(ପାଉଁଜି), ଝୁଣ୍ଟିଆ ଆଦି ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ପାରମ୍ପରିକ ଅଳଙ୍କାର। ଏହିସବୁ ଅଳଙ୍କାର ସାଧାରଣତଃ ସୁନା, ରୂପା, ପିତ୍ତଳ, ଆଲୁମିନିୟମ ଆଦି ଧାତୁରେ ତିଆରି ହୋଇଥାଏ। ଅଳଙ୍କାର ସହିତ ପରଜାମାନଙ୍କର ଭାବାବେଗ ଯୋଡ଼ିହୋଇ ରହିଥାଏ, ତେଣୁ ସେମାନେ ଅଳଙ୍କାର ପ୍ରିୟ। ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟର ଯୁବକଯୁବତୀଙ୍କର ଅନୁରାଗଜନିତ ଭାବର ଆଦାନପ୍ରଦାନକ୍ଷେତ୍ରରେ ଅଳଙ୍କାର ବିଶେଷକରି ମୁଦି ବା ମୁଦ୍ରିକାର ପ୍ରମୁଖ ଭୂମିକା ରହିଥାଏ। ଏମାନଙ୍କ ସାମାଜିକ ଚଳଣି ଓ ପରମ୍ପରାରେ ମୁଦି ଦେଇ ଓ ମୁଦି ମାଗି ପ୍ରେମ ନିବେଦନ କରିବା/ ମନ ଜିଣିବାର ରୀତି ରହିଛି। ତେଣୁ ପରଜା ଯୁବଯୁବତୀ ବିଭିନ୍ନ ଉତ୍ସବଅନୁଷ୍ଠାନ ଅବସରରେ ମୁଦି ଓ ଅନ୍ୟାନ୍ୟ ଅଳଙ୍କାର ଦେବାନେବା ରୀତିମୂଳକ ସଙ୍ଗୀତ ପରିବେଷଣ କରନ୍ତି। ଏହିଗୀତ 'ମୁଦିମଗାଗୀତ' ନାମରେ ପରିଚିତ। ଏହାର ଏକ ଓଡ଼ିଆ ଭାବାନ୍ତର ଏଠାରେ ପ୍ରଦାନ କରାଯାଇଛି-

ଯୁବକ – ତୁମକୁ ମୁଦି କିଣିଦେବିକିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ, ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ଯୁବତୀ- ତୁମ ମୁଦି ତୁମପାଖରେ ଥାଉରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା
ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା, ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା।

ଯୁବକ- ତୁମକୁ କ୍ଲିପ୍ କିଣିଦେବିକିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ, ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ଯୁବତୀ- ତୁମ କ୍ଲିପ୍ ତୁମପାଖରେ ଥାଉରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା
ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା, ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା।

ଯୁବକ – ତୁମକୁ ପାଉଁଜି କିଣିଦେବିକିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ, ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ଯୁବତୀ- ତୁମ ପାଉଁଜି ତୁମପାଖେ ଥାଉରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା

ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା, ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା।

ଯୁବକ – ତୁମକୁ ଚୁଡ଼ି କିଣିଦେବିକିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ, ମୁଁ ନେଇଯିବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ଯୁବତୀ- ତୁମ ଚୁଡ଼ି ତୁମପାଖରେ ଥାଉରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା
ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା, ନେବିନାହିଁରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା।
ଯୁବକ – ମୋର କଥାକୁ ମାନରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ, ମନ ଦେବିରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ମୋ କନିଆଁ ହୁଅରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ, ମୋ କନିଆଁ ହୁଆରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ୀ
ଯୁବତୀ- ତୁମ କଥାକୁ ମାନିଲି ଧାଙ୍ଗଡ଼ା
ମୋତେ କନିଆଁ କରିନେରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା, ନେଇଚାଲରେ ଧାଙ୍ଗଡ଼ା।

ଏହା ମନୋରଞ୍ଜନଧର୍ମୀ ପ୍ରଶ୍ନୋତ୍ତର ମୂଳକ ଏକ ଖେଳଗୀତ। ଏଥିରେ ପରଜା ସମ୍ପ୍ରଦାୟ ବ୍ୟବହାର କରୁଥିବା ବିଭିନ୍ନ ପ୍ରକାର ଅଳଙ୍କାରର ସୂଚନା ଉପସ୍ଥାପିତ ହୋଇଛି। ଖେଳରୁ କ୍ରମଶଃ ଯୁବକଯୁବତୀଙ୍କ ମଧ୍ୟରେ ଅନୁରାଗଭାବ ସୃଷ୍ଟି କରିବାରେ ଏହା ସହାୟକ ହୁଏ। ଅନୁରାଗରୁ ପ୍ରେମ ଓ ପ୍ରେମରୁ ପରିଣୟରେ ଯୁବଯୁବତୀଙ୍କର ଜୀବନ ସାର୍ଥକତା ଲାଭକରି ସଂସାର ଗଠନର ପ୍ରକ୍ରିୟାକୁ ତାହା ଅବ୍ୟାହତ ରଖେ। ଏହି ଗୀତଟିରେ ଯୁବକଟି ବିଭିନ୍ନ ପ୍ରକାରର ପ୍ରଲୋଭନ ଦେଇ ନାନାଧରଣର କୌଶଳରେ ଯୁବତୀ ନିକଟରେ ପ୍ରେମ ନିବେଦନ କରିଥିଲେ ସୁଧା ଚତୁରୀ ଯୁବତୀ ସେଥିରେ ପ୍ରଭାବିତ ହୋଇନାହିଁ। ଶେଷରେ ଯୁବକ ଆଉ ଅଳଙ୍କାର ଆଦିର ପ୍ରଲୋଭନ ନଦେଇ ମନଦେବାର କଥା ଦେଇଛି ଏବଂ ଯୁବତୀ ସେଥିରେ ସହମତି ପ୍ରକାଶ କରିଛି; ଏହିହିଁ ଏହିଗୀତର ସୁନ୍ଦରତା।

3. ଉପସଂହାର :

ପରଜା ଆଦିବାସୀ ଲୋକଗୀତ ଗୁଡ଼ିକ ଆସୁକବିତାଧର୍ମୀ ଓ କ୍ଷୁଦ୍ର କଳେବରବିଶିଷ୍ଟ। ଜୀବନର ବାସ୍ତବ ଅନୁଭୂତି ଏମାନଙ୍କର ଗୀତରେ କଳାତ୍ମକରୂପ ଲାଭକରିଥାଏ। ଏହି ଅନୁଭୂତି ଗୁଡ଼ିକ ଏକଏକ ନିର୍ଦ୍ଦିଷ୍ଟ ଭାବବହନ କରୁଥିବା ହେତୁ ତାହା ସର୍ଜନଶୀଳ ଲକ୍ଷଣଯୁକ୍ତ। ପ୍ରାୟତଃ ଗୀତଗୁଡ଼ିକରେ ପରଜା ଲୋକକବିର ସୂଚନାତ୍ମକ ମାନସିକ ଅବସ୍ଥା ନିହିତ ଥାଏ। କ୍ଷୁଦ୍ରକ୍ଷୁଦ୍ର ଅନୁଭୂତିକୁ ଉପସ୍ଥାପନ ଚାତୁରୀ ବଳରେ ବ୍ୟଞ୍ଜନାତ୍ମକ ଅର୍ଥପ୍ରକାଶକ୍ଷମ ଗାନଧର୍ମୀ ସଙ୍ଗୀତ ରୂପେ ଏମାନେ ପରିବେଷଣ କରନ୍ତି। ସାଦୃଶୀକରଣ ଶୈଳୀଭିତ୍ତିରେ ସାଧାରଣତଃ କିନ୍ଦ୍ରିଗୀତ ପରି ଗୀତଗୁଡ଼ିକ ଅଭିବ୍ୟକ୍ତି ଲାଭକରିଥାଏ। ବାହ୍ୟ ପ୍ରକୃତି ଓ ଅନୁଭବୀ ମଣିଷର ଅନ୍ତଃପ୍ରକୃତି ହିଁ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ଲୋକଗୀତର ମୂଳଆଧାର। ତେଣୁ ଏହି ଗୀତଗୁଡ଼ିକ ବ୍ୟବହାରିକ ମଧ୍ୟ। କେତେକଗୀତ ପରଜା ଆଦିବାସୀ ଜୀବନବୋଧ ତଥା ସଂସ୍କୃତିର ମୂଳସିଦ୍ଧାନ୍ତ / ଦାର୍ଶନିକ ଅନ୍ତର୍ଦୃଷ୍ଟିକୁ ଭିତ୍ତିକରି ପ୍ରକାଶିତ ହୋଇଥାଏ। ଭାବ ହିଁ ଏହିସବୁ ଗୀତର ପ୍ରାଣକେନ୍ଦ୍ର ଓ ମନୋରଞ୍ଜନ ହିଁ ମୁଖ୍ୟ ଉଦ୍ଦେଶ୍ୟ।

ସହାୟକ ଉତ୍ସ :

୧. Bell, R.C.S., 1945. Orisaa District Gazetteers, Koraput, Orisaa Government Press, Cuttack, P-63.

୨. ପାଣିଗ୍ରାହୀ, କୁମୁଦ ରଞ୍ଜନ., ୨୦୧୯. ଲୋକଧାରା, ଲୋକସଂସ୍କୃତି ଓ ଲୋକସାହିତ୍ୟ, ପୃଷ୍ଠା-୩୬.

୩. ପ୍ରଧାନ, କୃଷ୍ଣଚନ୍ଦ୍ର., ୨୦୨୧. ଲୋକସଂସ୍କୃତିର ତାତ୍ତ୍ୱିକ ଓ କଳାତ୍ମକ ଦିଗ, ବିଦ୍ୟାପୁରୀ, ପୃଷ୍ଠା-୫.

୪. Tylor, E.B., 1871. *"Culture is that complex whole which includes knowledge, belief, art, moral, law, custom and any other capabilities and habits acquired by man as a member of society."* Primitive Culture, Volume-1, London, P-1.

୫. ମହାପାତ୍ର, ସୀତାକାନ୍ତ., ୧୯୮୬. 'ଆଦିବାସୀ ସଙ୍ଗୀତ', ସମ୍ବାଦ, ବାର୍ଷିକ ବିଶେଷାଙ୍କ-୨, ଇଷ୍ଟର୍ଣ୍ଣ ମିଡ଼ିଆ ଲିଃ , ଭୁବନେଶ୍ୱର, ପୃଷ୍ଠା – ୧୪୮.

୬. ପାଣିଗ୍ରାହୀ, କୁମୁଦ ରଞ୍ଜନ., ୨୦୧୯. ଲୋକଧାରା, ଲୋକସଂସ୍କୃତି ଓ ଲୋକସାହିତ୍ୟ, ପୃଷ୍ଠା-୩୬.

Contact No. 9437587697
e-mail ID: prahalladkhilla@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 42–45

मुगलकाल में महिलाओं का सामाजिक जीवन एवं स्त्रियों की स्थिति

Aarti Oriya
Assistant Professor, History, P.G. College, Chhindwara.

शोध सार :–

मुगलकालीन भारतीय समाज में स्त्रियों को सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं था। उन्हें केवल मनोरंजन एवं भोग विलास का साधन समझा जाता था। मुस्लिम एवं हिन्दू स्त्रियों में अनेक प्रकार की कुप्रथाएं प्रचलित थीं। इन बुरी प्रथाओं के कारण स्त्रियों का जीवन जानवरों जैसा था। केवल उच्च वर्ग की महिलाओं को कुछ अधिकार प्राप्त थे। लेकिन निम्न वर्ग की स्त्रियों की दभाा दयनीय थी। इस्लाम के आगमन के प चात् भारत में एक नये धर्म, नयी जाति तथा नई सभ्यता एवं संस्कृति का आगमन हुआ जो परम्परागत भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति से अलग थी। इस्लाम और हिन्दू सभ्यताएँ एक–दूसरे की विरोधाभासी होते हुये भी इस दे ा में प्रवाहित होती रहीं और उन्होंने परस्पर एक–दूसरे को प्रभावित भी किया हैं। हिन्दू एवं मुस्लिम सभ्यता एवं संस्कृति के मिलन के परिणामस्वरूप दे ा की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन हुये।

प्रस्तावना :–

मनुस्मृति के अनुसार :– ''**यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवताः, यत्रैतास्तु न पूजयन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया**''। अर्थात् जहाँ नारियों की पूजा होती हैं वहाँ देवता निवास करते हैं। और जहाँ इनकी पूजा नहीं होती वहाँ सभी कार्य निश्फल होते हैं। परन्तु धीरे–धीरे समाज में नारियों का सम्मान कम होता चला गया। भारत में महिलाओं की स्थिति समय–समय पर परिवर्तित होती रही हैं। प्राचीन काल में नारियों को समाज में उच्च स्तर प्राप्त था। उन्हें सुख–समृद्रि, भाान्ति, वैभव और ज्ञान का प्रतीक माना जाता था, इसीलिए दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती के रूप में उनकी पूजा करने का विधान रहा हैं। मुगलकाल में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आयी, भारतीय संस्कृति की मुगलों से रक्षा करने के लिए ब्राह्मणों ने कडे. नियमों का प्रावधान किया। 5–8 वर्श की आयु में कन्याओं के विवाह होने लगे, जिससे स्त्री भिक्षा में गिरावट आयी। पर्दा प्रथा का चलन हो गया। सती प्रथा का प्रचलन हुआ। एक पत्नी होते हुए दूसरी पत्नी रखना सामाजिक प्रतिष्ठा बन गयी, इसलिए अपने अस्तित्व के लिए महिलाएँ पूर्णरूपेण पुरूषों पर निर्भर हो गयी।

यदुनाथ सरकार हिन्दुओं के चारित्रिक पतन के लिए मुस्लिम भाासन को दोशी ठहराते हैं। उनके अनुसार, ''ऐसी सामाजिक परिस्थिति में हिन्दुओं का आध्यात्मिक विकास असंभव एवं उच्च वर्ग के हिन्दुओं का नैतिक पतन

अनिवार्य ही था।''

रहन-सहन :-

''आइन–ए–अकबरी'' में ग्यारह प्रकार के कोटों का वर्णन मिलता हैं। हिन्दू स्त्रियाँ साधारणतः साड़ी या धोती पहनती थीं। अबुल फजल के अनुसार, महिलाएँ लहँगा और अंगिया भी धारण करती थीं। मुसलमान महिलायें सलवार और कमीज पहनती थीं। वे बुर्का भी पहनती थीं। हिन्दू और मुसलमान महिलायें दोनों दुपट्टों का प्रयोग करती थीं। दोनों सम्प्रदायों की महिलायें क ीदेकारी वाले दुपट्टे से सिर ढँकती थीं। उच्च वर्ग की महिलायें क मीरी ऊन का बना बारीक ''काबा'' पहनती थीं। वे ऊनी भाल का भी इस्तेमाल करती थीं। नूरजहॉ ने नूरमहली, पंचटोलियाँ, बदेला आदि नये फै ान के वस्त्रों का प्रचलन किया था।

आभू□ाण :-

मुगलकाल में स्त्री और पुरूश दोनों आभूशण धारण करते थे। स्त्रियाँ अपने प्रत्येक अंग में आभूशण पहनती थीं। अबुल फजल ने ''आइन–ए–अकबरी'' में 37 प्रकार के आभूशणों का उल्लेख किया हैं जो सोने, चाँदी तथा बहुमूल्य पत्थरों के बने होते थे। हिन्दू स्त्रियों के लिये आभूशण धारण करना सुहाग का चिन्ह था। चौक, मांग टीका तथा भी ा फूल सिर पर धारण करने वाले प्रमुख आभूशण थे। कर्णफूल, पीपलपत्ती, मावर और बाली कानों में पहने जाने वाले प्रमुख गहने थे। नथ, बेसर और लौंग नाक में पहना जाता था। गले में सोना मोती तथा अन्य बहुमूल्य पत्थरों से बना हुआ हार तथा गुलबन्द पहनने का प्रचलन था। बाजुओं में बाजूबन्द और तोड़े पहने जाते थे। कलाइयाँ कंगन, गजरा और चूड़ियों से ढँकी होती थीं। कमर में स्त्रियाँ कटिमेखला पहनती थीं। पैरों में पायल, घुँघरू, बिछुआ आदि पहना जाता था। गरीब स्त्रियाँ सस्ती धातुओं के आभूशण पहनती थीं। हाथी दाँत के कंगन और चूड़ियाँ पहनने का भी प्रचलन था। हिन्दू पुरूश कानों तथा अंगुलियों में आभूशण धारण करते थे स्त्री और पुरूश दोनों अंगुलियों में अंगूठी पहनतें थें मुगल सम्राट भी आभूशणों के प्रेमी थे।

अबुल फजल :-

अकबर के भाासनकाल में ''मीना बाजार'' आयोजित करने की प्रथा प्रारम्भ हुई। अमीरों और सामन्तों की स्त्रियाँ और पुत्रियाँ दुकाने लगाती थीं तथा बाद ााह और भााही परिवार की बेगमें और राजकुमारियाँ मीना बाजार में आकर वस्तुयें खरीदती थीं। वर्शाकाल के आसपास ''ईद–ए–गुलाबी'' आयोजित किया जाता था।

सामाजिक रीति-रिवाज और संस्कार :-

हिन्दू और मुसलमान दोनों के रीति–रिवाजों, सामाजिक नियमों तथा व्यवहार में काफी अन्तर था। उनके उत्तराधिकार के नियमों, धार्मिक संस्कारों, पो ााक, भोजन और स्वागत के तौर–तरीकों में भी काफी अन्तर था। हिन्दू समाज में अन्तर्जातीय विवाह, सहभोज और विधवा विवाह का निशेध था। मुसलमान समाज में तलाक, पुनर्विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह का प्रचलन था। 16 संस्कारों में हिन्दू समाज में जातकर्म, नामकरण, चूडाकरण, उपनयन, विवाह और म त्यु संस्कार का अधिक प्रचलन था।

विवाह :-

हिन्दू और मुसलमान दोनों में बाल–विवाह और दहेज प्रथा प्रचलित थी। अकबर ने 16 वर्श से कम उम्र वाले युवकों और 14 वर्श से कम उम्र वाली युवतियों के विवाह पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। उच्च वर्ग के हिन्दुओं और मुसलमानों में बहु–विवाह प्रचलित था। अकबर के भाासनकाल में उलेमाओं ने निकाह द्वारा चार विवाह और

अनेक विवाहों को मान्यता दी थी, परन्तु अकबर ने यह आदे ा जारी किया था कि साधारणतः हिन्दू एक विवाह करते थे। हिन्दू और मुसलमानों में वर और वधू का चुनाव माता–पिता द्वारा होता था, परन्तु राजपूतों में स्वयंवर विवाह का भी प्रचलन था। हिन्दू और मुसलमान दोनों में विवाह खूब धूमधाम से किया जाता था। अनेक विदे ाी यात्रियों ने उसका उल्लेख किया हैं। हिन्दू विवाह पुरोहित द्वारा वेद मन्त्रोच्चारण के बीच पूर्ण होता था। वरमाला, कन्यादान और सप्तपदी हिन्दू विवाह–संस्कार के प्रमुख अंग थे।

मुगलकाल में महिलाओं की दशा :-

किसी भी युग की संस्कृति का मूल्यांकन उस समय की स्त्रियों की स्थिति से किया जा सकता हैं। मुस्लिम भाासन की स्थापना के समय से महिलाओं की स्थिति में क्रम ाः परिवर्तन हुए। सती प्रथा, दास प्रथा, वे यावृत्ति, पर्दा प्रथा, कन्या जन्म के प्रति मध्यकालीन हीन दृश्टिकोण, बाल विवाह, बहु पत्नी प्रथा, यौन नैतिकता सम्बन्धी विचार, समाज में पुरूश प्रधानता आदि तत्वों की उपस्थिति में मध्य युग में हिन्दू एवं मुस्लिम महिलाओं की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गयी। सामाजिक विधान और परम्पराओं ने स्त्री को मानसिक रूप से अविकसित ठहराया। धर्म संबंधी मामले पुरूश वर्ग के हाथों में केन्द्रित थे अतः वे लिंग–भेद का ि ाकार हुई समस्त निर्योग्यताएँ महिलाओं पर लादकर समाज ने उन्हें मानसिक एवं बौद्धिक विकास के अवसर से वंचित रखा।

सामाजिक जीवन :-

मुगल सामाजिक जीवन की एक मुख्य वि ोशता हिन्दू एवं मुसलमानों का पहले की तुलना में एक दूसरे के अधिक निकट आना था। समाज में बहुसंख्यक वर्ग हिन्दूओं का था। हिन्दू परम्परागत आधार पर विभिन्न जातियों एवं उपजातियों में विभाजित थे। मुगल काल में अनेक योग्य और प्रतिभाभााली स्त्रियाँ हुई जिन्होंने अपने समय की राजनीति और समाज को प्रभावित किया। तुर्क और अफगान काल में ऐसी योग्य महिलाओं का प्रायः अभाव रहा था। रानी कर्णवती, रानी जोधाबाई, रानी दुर्गावती, रानी रूपमती, चाँदबीबी, नूरजहाँ और उसकी माँ अस्मत बेगम मुमताज–महल, जहाँनआरा, रोभानआरा, जैबुन्निसा, भिावाजी की माँ जीजाबाई, राजाराम की पत्नी ताराबाई, काबुल के सूबेदार अमीरखाँ की बीबी साहिबजी आदि ऐसी महिलाएं थीं जिन्होंने अपने समय की राजनीति और समाज को प्रभावित किया। श्रृंगार–साधनों, वेभा–भूशा, युद्ध कौभाल और राजनीति में समय–समय पर उनका सहयोग महत्वपूर्ण रहा। यह कहा जाता हैं कि मुगल बादभााहों की राजनीति पर उनकी बेगमों और हरम का प्रभाव बहुत अधिक था। परन्तु योग्य महिलाओं के ये उदाहरण समाज में महिलाओं की वास्तविक स्थिति से बहुत दूर थे। मनोरंजन के लिए बहुत से खेल–भातरंज, चौपड़ ताभा, बल्ले के खेल, कुभती, जादूगरी आदि जनसाधारण में प्रचलित थे।

मनूची बताता हैं कि, ''रानियाँ एवं भाहजादियाँ हमे ाा पर्दे में रहती थी तथा उनकी छवि देख पाना सम्भव नहीं था।'' नूरजहाँ एवं मुमताज महल ने वस्त्रों, श्रंगार प्रसाधनों में सुरूचिपूर्ण परिवर्तन किया। टैरी मुगल महिलाओं के पहनावों के बारे में विस्तार से बताता हैं। नूरजहाँ ने नूरमहली नामक वस्त्र तथा उसकी माँ अस्मत बेगम ने रोगन–ए–जहाँगीर नामक इत्र का आविश्कार किया था।

महिला स्थिति :-

अकबर ने अपने भाासन के अंतिम वर्शों में बहुविवाह पर प्रतिबन्ध लगाया था। परन्तु इस राजाज्ञा का क्रियान्वयन न हो सका। अकबर ने बाल विवाह बंद करवा दिया। अकबर ने आदे ा दिया कि वर कन्या और

माता–पिता की अनुमति के बिना विवाह न हो। समाज में पर्दा प्रथा, सती प्रथा, जौहर प्रथा, दास प्रथा आदि प्रचलित थीं। ''बदायूँनी के अनुसार :– यदि कोई युवती बिना पर्दा के सड.कों या बाजारों में घूमते हुए पायी जाती तो उसे वे यालय भेज दिया जाता।'' समाज में दहेज प्रथा प्रचलित थी। समाज में भारतीय महिलाओं की स्थिति में मध्ययुगीन काल के दौरान और अधिक गिरावट आयी जब भारत के कुछ समुदायों में सती प्रथा, बाल विवाह और विधवा पुनर्विवाह पर रोक, सामाजिक जिंदगी का एक हिस्सा बन गयी थी। भारतीय उपमहाद्वीप में मुसलमानों की जीत ने पर्दा प्रथा को भारतीय समाज में ला दिया। राजस्थानी महिला राजपूतों में जौहर की प्रथा थी। भारत के कुछ हिस्सों में देवदासियां या मंदिर की महिलाओं को यौन भोशण का भिकार होना पड़ा था। बहुविवाह की प्रथा हिन्दू क्षत्रिय भासकों में व्यापक रूप से प्रचलित थी।

निष्कर्ष :–

मध्यकालीन भारत में महिलाओं की स्थिति जटिल थी, जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक कारकों का प्रभाव था। किसी भी सभ्यता की आत्मा को समझने तथा उसकी उपलब्धियों एवं श्रेष्ठता का मूल्यांकन करने का सर्वोपरि आधार उस काल की महिलाओं के दभा का अध्ययन करना हैं। महिलाओं की दशा किसी भी सभ्यता या संस्कृति का मापदंड माना जा सकता हैं। हालांकि भारत में महिलाओं का इतिहास अत्यन्त गतिशील रहा हैं। इस लेख के माध्यम से मुगलकालीन शाही महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में निभाई गई भूमिका तथ्यों की रीति–रिवाज में परखने की चेष्टा की गई हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. महेन्द्र खडगावत, फारसी फरमानों के प्रकाभा में मुगलकालीन भारत एवं राजपूत भासक, निदेभालय, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर, 2020
2. एल. पी. भार्मा, मध्यकालीन भारत, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा, 2022
3. विद्याधर महाजन, मुस्लिमकालीन भारत, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि. रामनगर नई दिल्ली, 1984
4. डॉ. एस. एल. वरे, भारतीय इतिहास में नारी, कैलाभा पुस्तक सदन हमीदिया मार्ग, भोपाल, 2009
5. हरिभचन्द्र वर्मा, मध्यकालीन भारत, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेभालय दिल्ली विभवविद्यालय, 1993
6. डॉ. विपिन बिहारी सिन्हा, मध्यकालीन भारत, ज्ञानदा प्रकाभान।
7. सौरभ चौबे, मध्यकालीन भारत, युनिवर्सल बुक्स, 2018
8. डॉ. आर. के. परूथी, मुगलकालीन भारत, अर्जुन पब्लिभिंग हाऊस, 2013
9. सत्केतु विद्यालंकार, भारतीय संस्कृति का विकास, श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली, 2018

aartioriya543@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 46–52

समाज, संस्कृति और साहित्य का पारस्परिक संबंध

डॉ. प्रियंका कुमारी
कार्यरत S.A.K.N.D. Collage, Madhepura.

साहित्य और संस्कृति :–

साहित्य का संस्कृति से अटूट संबंध है। संस्कृति समाज के क्रियाकलाप रहन–सहन का हिमायती है। सामाजिक परिवर्तन में साहित्य और संस्कृति का बहुत बड़ा योगदान रहा है। साहित्यकार अपने साहित्य में सांस्कृतिक चिंता के द्वारा ज्ञान और सौंदर्य बोध को केंद्र में रखकर विचार इसलिए करता है क्योंकि यह संस्कृति के मौलिक मूल्य हैं और यही मूल्य किसी भी देश या जाति के संस्कार रुचि भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार ही स्वीकार्य हैं।

'संस्कृति शब्द सम् उपसर्ग के साथ संस्कृत की धातु से बनता है जिसका मूल अर्थ साफ या परिष्कृत करना है।'(1) वृहत् हिंदी कोष में 'शुद्धि, सुधार, परिष्कार, निर्माण, पवित्रकरण, आचरणगत परंपरा तथा सभ्यता को संस्कृति कहा गया है।'(2) अंग्रेजी में संस्कृति शब्द को कल्चर का पर्याय माना जाता है। व्यापक अर्थ में संस्कृति शब्द का प्रयोग विज्ञान के लिए किया जाता है जिसका अर्थ सभी प्रकार के सिखे हुए उस व्यवहार को संस्कृत कहते हैं, जो सामाजिक परंपरा से प्राप्त होता है। दूसरे अर्थ में संस्कृति प्रायरू उन गुणों को कहा जाता है– जो व्यक्ति को पुरस्कृत एवं समृद्ध करता है।

संस्कृति की परिभाषा को लेकर विद्वानों में मतभेद रहा है फिर भी इनकी मान्यताओं में संस्कृति के कुछ पहलुओं को बाधा जा सकता है। भारतीय विद्वान गुलाब राय के अनुसार 'जातीय संस्कारों को ही संस्कृति कहा जा सकता है।'(3) डॉक्टर सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार 'मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग कर विचार और कर्म के क्षेत्र में जो सृजन करता है उसी को संस्कृति कहते हैं।'(4) पाश्चात्य विद्वान मैकावर तथा पेज ने अपने 'सोसाइटी' शीर्षक ग्रंथ में संस्कृति की परिभाषा देते हुए कहा है– 'कल्चर इज द रियल ऑफ स्टाइल ऑफ वैल्यू आफ इमोशनल अटैचमेंट आफ इंटेलेक्चुअल।' जॉन डेवी के अनुसार– "Culture means at least something cultivated] something ripened] it is opposed to raw and crude"(5) संस्कृति के संबंध में उप विद्वानों द्वारा दी गई कुछ परिभाषा में उसके विशेषताओं का विवेचन किया गया है तो कुछ में उसके उद्देश्य को विवृत किया गया है। निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि संस्कृति से हम सुशिक्षा, सुनीति, सु–व्यवहार, सुरुचि, सुभाषा, सुप्रथा इत्यादि को ही समझते हैं।

संस्कृति का क्रमिक विकास होता रहता है। इसके रूप और प्रकृति सदा परिवर्तनशील है। संस्कृति का परिवर्तन भविष्य के लिए भी अनिवार्य है। संस्कृति के माध्यम से समाज में रहने वाले मनुष्यों का चाल–चलन

एक निर्दिष्ट पद्धति से चलता रहता है। सामाजिक क्षेत्र में उत्पन्न विभिन्न जटिल अवस्था का समाधान संस्कृति के द्वारा ही संभव होता है। कहाँ किस रूप में कब, क्या करना होगा या क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए इस बारे में व्यक्ति पहले से ही संस्कृति के द्वारा जानकारी प्राप्त कर सकता है और सही फैसला ले सकता है। इसके फलस्वरूप स्वच्छंद समाज जीवन का गठन होता है।

संस्कृति व्यक्ति को 'मनुष्य' बनाती है। संस्कृति हीन मनुष्य पशु समान होता है। संस्कृति मनुष्य को यथार्थ सामाजिक जीवन में परिणत करता है। यदि किसी व्यक्ति को समाज और संस्कृति से बाहर रख दिया जाए तो वह व्यक्ति एक मनुष्य नहीं बन सकता तथा मनुष्य के रूप में सामाजिक स्वीकृति पाने के लिए व्यक्ति को संस्कृति में निवास करना ही पड़ता है। संस्कृति ही व्यक्ति के सामने परिपूर्ण जीवन के लिए आदर्श नमूना या चित्र को उपस्थित कर देता है। पोशाक, खान–पान,आचरण, रहन–सहन, बोलचाल–इन सभी समाज जीवन के विभिन्न विषयों में व्यक्ति संस्कृति के माध्यम से ही शिक्षित होता है। मनुष्य के अचार–आचरण को संस्कृति ही नियंत्रण करता है एवं उसे गोष्ठी जीवन के लिए उपयुक्त भी बनाता है। वास्तव में किसी व्यक्ति को मनुष्य संस्कृति ही बनाती है। इसलिए किसी जाति की संस्कृति में उस जाति के विशिष्ट गुणों एवं आदर्शों की अभिव्यक्ति होती है। यही संस्कृति किसी भी देश या जाति की स्वच्छंद, स्वतंत्र, सत्ता को स्थिरता प्रदान कर वहाँ के निवासियों को एकता के सूत्र में पिरोकर गौरव प्रदान करती हैं। समाज और संस्कृति के संबंध अपने आप में सबसे महत्वपूर्ण है।

संस्कृति किसी विशेष व्यक्ति से संबंध नहीं भी रख सकता है परंतु यह परम आवश्यक है कि वह किसी जाति या समाज से अपना संबंध बनाए रखें कारण संस्कृति का विकास सामूहिक प्रयत्न के परिणाम स्वरूप ही होता है।

भौगोलिक वातावरण का प्रभाव संस्कृति पर पड़ता है। पृथ्वी के विभिन्न अंचल के प्राकृतिक उपादानों में विभिन्नता रहती है। इसी विभिन्नता के कारण लोगों का रहन–सहन, भाषा, रीति–रिवाज भी अलग–अलग होता है। अतः प्रत्येक जाति की संस्कृति और उसके मूल्य भी इसी कारण भिन्न होते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इस नाते ही उसके संस्कृत होने की कोई आवश्यकता नहीं है। उसमें मूल्य होने के कारण वह सु–संस्कृत है ऐसा हम मान सकते हैं। मनुष्य का मनोस्थिति बदलता रहता है जिस कारण संस्कृति भी परिवर्तित होती रहती है। कालमार्क्स ने कहा था– 'मनुष्य परिवेश की उपज है।'

संस्कृति के विकास के लिए परस्पर में आदान–प्रदान होना आवश्यक है। यही आदान–प्रदान संस्कृति का विकास करता है। संस्कृति को सदियों से कायम रखने का कार्य पारस्परिक संपर्क कर सकता है। हमारी भारतीय संस्कृति इसका प्रमाण है। अंग्रेज प्रभुत्व भारत में स्थापित होने का मुख्य वजह भारतीयों की अयोग्य युद्ध प्रणाली और युद्ध सामग्रियों की जानकारी के अनुभव से अनभिज्ञ होना था। भारतीय समय के परिवर्तन के साथ–साथ ताल से ताल मिला कर चलने में असमर्थ रहे इसी कारण विदेशियों को मौका मिला और वे अपने नवीन सामग्री के आविष्कारों के साथ जीत हासिल करने में सफल होते रहे।

हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा अन्य भारतीय विद्वानों ने रचनात्मक कोशिशों को महत्व देते हुए संस्कृति के स्वरूप को स्पष्ट किया है। कुछ विद्वानों ने संस्कृति के स्वरूप का यथार्थ चित्रण करते हुए उसे सभ्यता से माना है। परंतु इस अंतर भेद के प्रति उनमें आज तक मत ऐक्य नहीं है।

संस्कृति को मानव ही बनाता है। इसलिए संस्कृत व्यक्ति ही नवीन मूल्यों द्वारा समाज का विकास भी करता है। प्रत्येक देश की संस्कृति अलग–अलग होती है। इसलिए जो जिस देश का निवासी होता है उसमें उस देश की संस्कृति की झलक उसमें नजर आता हा है। जैसे– भारतीय विश्व के किसी भी कोने में क्यों न रहे उनकी वेशभूषा और रहन–सहन से ही कोई भी कह सकता है कि वे भारतीय हैं। प्रत्येक देश के लोगों की भाषा, रहन–सहन आचार–विचार, रीति–रिवाज कला, धर्म को ध्यान में रखकर ही साहित्य रचना संभव है। अतः साहित्य में सांस्कृतिक मूल्यों की उपेक्षा करने से साहित्य का कोई महत्व नहीं रहता है।

संस्कृति का कार्यक्षेत्र बहुत ही विस्तृत होता है। इसका संबंध मनुष्य के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, दार्शनिक, साहित्य, कला, खेल आदि जीवन के विविध पहलुओं से रहता है। समाज के विकास के साथ–साथ संस्कृति का भी विभिन्न क्षेत्रों में विकास हुआ। यह सभी अंग संस्कृति के संस्कार से युक्त है जिन्हें संस्कृति के क्षेत्र के अंतर्गत समाविष्ट किया जा सकता है। अर्थात सभ्यताओं का विकास और विनाश हो सकता है पर संस्कृति का मौलिक रूप चिर स्थाई होता है। संस्कृति के विकास में ही देश की सभ्यता के प्रतिबिम्ब को देखा जा सकता है।

संस्कृति और सभ्यता :-

संस्कृति शब्द के साथ–साथ सभ्यता शब्द का प्रयोग भी होता है। लगभग ज्यादातर लोगों ने संस्कृति और सभ्यता शब्द का प्रयोग समान अर्थ में कर दिया करते हैं परंतु संस्कृति और सभ्यता में वाच्य अर्थ में भेद है। संस्कृत व्याकरण की दृष्टि से 'सभायां साधुः' अर्थ में सभा पद से यत् प्रत्यय लगाकर सभ्य पद और सभ्य शब्द से तल् प्रत्यय करके स्त्रीलिंग में सभ्यता पद की रचना होती है। इस प्रकार सभ्यता शब्द का अर्थ है– व्यक्तियों का सामाजिक नियमों और व्यवहारों को जानना, उसका पालन करना, समाज के योग्य आचरण करना, अनुशासन में रहना।

वर्तमान समय में सभ्यता कहने से हम उस व्यक्ति या समाज को सभ्य कह सकते हैं जहाँ जीवन निर्वाह के लिए, शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक से अधिक सुविधाओं और वैज्ञानिक तकनिकों का प्रयोग करते हैं।

हिंदी साहित्य कोश के अनुसार – 'सभ्यता से तात्पर्य उन आविष्कारों, उत्पादनों एवं सामाजिक, राजनीतिक संस्थाओं से है जिनके द्वारा मनुष्य की जीवन यात्रा सरल एवं स्वतंत्र होता है।'[6] वहीं दूसरी ओर इसके विपरीत 'संस्कृति का अर्थ चिंतन तथा कलात्मक सर्जन की क्रियाएँ होती है, जो मानव व्यक्तित्व और जीवन के लिए उपयोगी न होते हुए भी उसे समृद्ध करती है।'[7]

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर हम कह सकते हैं कि संस्कृति विश्व चेतना के रूप में मानव के मन में अंतर्निहित है तो सभ्यता का अस्तित्व प्रकृति के बाहरी उपादानों पर। हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में –'सभ्यता समाज की वाह्य व्यवस्थाओं का नाम है तो संस्कृति व्यक्ति के अंतर के विकास का।'[8] अर्थात सभ्यता चंचल है तो संस्कृति स्थायी। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि सभ्यता और संस्कृति में अंतर होते हुए भी संस्कृति का निर्माण सभ्यता के परिवेश में ही होता है।

सभ्यता से भी अधिक महत्व संस्कृति का है। यह उसी तरह आपस में मिली हुई है जैसे मनुष्य के हृदय में प्राण। संस्कृति के विकास के लिए सभ्यता बाहरी सुविधा प्रदान करती है लेकिन सभ्यता के विकास के

साथ–साथ संस्कृति का भी विकास हो यह असंभव है। सबसे अधिक भारतीय समाज में आर्थिक वातावरण का प्रभाव सभ्यता पर पड़ता है। इसलिए इसे अपनाने में कोई कठिनाई नहीं होती है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथाकारों के अनुसार भारतीय सभ्यता उन्नत और विकसित है। उन्होंने अपनी कहानियों में मानव सभ्यता के पूरे चित्र को उभारा है।

मानव के विचार, भाव और व्यवहार संस्कृति के मूल उपकरण है। इन सभी उपकरणों के योग से मानवीय गुण का निर्माण होता है। ये गुण है– दया, प्रेम, परोपकार, उदारता, मैत्री, भावना, रीति–नीति, मूल्य बोध, दर्शन, विश्वास, सहिष्णुता, सदाचार, बलिदान, संयम इत्यादि। भारतीय संस्कृति में इन सभी गुणों का भंडार है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानियों में सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति संवेदना को देखा जा सकता है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानियों के लेखको ने अपनी कथा साहित्य में चित्रित पात्रों के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्य के प्रति संवेदना को जागृत कर तत्कालीन समाज में ह्रास होते सांस्कृतिक मूल्य को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया है।

संस्कृति के तत्व :–

संस्कृति की अभिव्यक्ति के तत्व है– इतिहास, समाज संगठन, राजनीति, धर्म, दर्शन, शिक्षा, कला, तथा साहित्य। हिंदी साहित्यिक विधाओं में इन तत्वों का समावेश को देखा जा सकता है।

इतिहास :–

इतिहास किसी भी समाज के संस्कृति का मूल तत्व होता है। इतिहास के द्वारा विगत सभी घटनाओं और संस्कृति की जानकारी मिल जाती है। ऐतिहासिक घटनाओं में ही मानव संस्कृति का कोई न कोई प्रलक्षण का उत्सव छुपा हुआ रहता है। इसलिए ऐतिहासिक ओर से संस्कृति के विचार और विश्लेषण करना अति आवश्यक हो जाता है। इतिहास हमे बिते हुए समाज जीवन के प्रथाओं से परिचित करवाता है। प्रत्येक समाज जीवन का प्रथा एक दूसरे से अलग होता है प्रथा संस्कृति का ही अंग होता है। कभी–कभी किसी विशेष व्यक्ति या गोष्ठी के असतर्क आचरण से तो कभी–कभी प्रयोजन के लिए कोई व्यक्ति विशेष कोई कार्य कर सकता है। बाद में कुछ व्यक्ति उसी का अनुसरण करने लगते हैं। इस तरह वह कार्य प्रथा के रूप में परिणत हो जाता है। इस तरह के किसी विशेष ऐतिहासिक घटना में निहित रह सकता है किसी भी सांस्कृतिक प्रलक्षण का उत्सव। इस प्रकार इतिहास भूतकाल की सांस्कृतिक एवं समस्त घटनाओं का लेखा–जोखा व्यक्त करता है।

इतिहास वह माध्यम है जिसको आधार बनाकर मनुष्य और समाज उस पूर्णता के लिए संघर्ष कर रहा है जो मानव जीवन का परम लक्ष्य है। इतिहास तभी सजीव और संपन्न होगा जब उसमें मानव का मनोभाव, विचार, संस्थाएँ, उद्योग, रहन–सहन की पद्धतियाँ, उन्नति, अवनती के कारणों का विश्लेषण के सभी तत्व विद्यमान हो। इतिहास तभी सार्थक है जब उसमें दर्शन हो और दर्शन के साथ राष्ट्रीय संस्कृति का अटूट अंग बन जाए। अर्थात हम कह सकते हैं कि जीवन, दर्शन, इतिहास और राष्ट्रीयता सभी मिलकर सच्चे इतिहास की सृष्टि करते हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानीकारों ने इतिहास को जीवन के साथ जोड़कर प्राण युक्त कर दिया है।

समाज का संगठन :–

संस्कृति का विकास समाज में ही होता है। संस्कृति व्यक्ति को संस्कृत कर समाज में रहने लायक बनाता है। समाज से अलग रहकर संस्कृति का कोई अपना अस्तित्व नहीं है। समाज के सदस्य इसके भागीदार हैं। वही मनुष्य समाज का गठन करता है। अतः सांस्कृतिक जीवन–यापन के लिए समाज का संगठित होना अति

आवश्यक है। संस्कृति का विकास मनुष्य अपने वंस, कुल, गाँव तथा अन्य लोगों के साथ संपर्क करके ही कर सकता है। संस्कृति सामाजीकरण के माध्यम से ही परिवाहित होता है। संस्कृति का प्रवाह एक प्रजन्म से दूसरे प्रजन्म में समाजीकरण के माध्यम से ही स्वाभाविक रूप में चलता रहता है। इस प्रकार सामाजिक व्यवस्थाओं के कारण संस्कृति का उद्‌भव होता है और आदर्श समाज ही संस्कृति को बचाये रखने में मदद करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसलिए समाज में रहने वाले दूसरे मनुष्य के हित के लिए सदा तत्पर रहना और उनके दुख के समय उनका साथ देना ही साहित्य में मानव धर्म है।

राजनीति :-

राजनीति संस्कृति को प्रभावित करता है। राजनीति के अंतर्गत अतीत से लेकर आज तक के शासकों जैसे –राजा, महाराजा या फिर राजनेता के अधिकार, जनता के प्रति कर्तव्य, उसके शासन का तरिका, शासन व्यवस्था का वर्णन होता है। सामंतवादी प्रथा, जागीरदारी प्रथा, जमींदारी या फिर भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था जब भी देश की शक्ति को नष्ट करने के लिए षड्यंत्र रचती है या फिर विदेशी राज्य के हस्तक्षेप से हमारा देश पतन की ओर चला जाता है तब जनता को सही मार्ग दिखाने के लिए, उनमें चेतना को जागृत तरने के लिए साहित्यकार राजनीतिक संदर्भ से जुड़े साहित्य की रचना करता है। स्वातंर्त्योत्तर हिन्दी कहानियों में राजनीतिक परिवर्तन के कारण समाज में आए बदलाव और मूल्य–संक्रमण के कारणो को विवेचित किया गया है।

धर्म :-

धर्म को भारतीय संस्कृति का आत्मा कहा गया है। धर्म मनुष्य के चरित्र का निर्माण कर उसमें नीति और आदर्श को प्रतिष्ठित करता है। जेमस फ्रेजर के अनुसार– 'धर्म एक समुन्नत विशेष व्यक्ति में विश्वास करता है। यह विशेष व्यक्ति समाज और मनुष्य के जीवनधारा को नियंत्रित करता है।'[9] धर्म मनुष्य के आचरण में सत्यता एवं न्याय करने में एवं सामाजिक मूल्य बोध के प्रति श्रद्धा सील होने के लिए शिक्षा देता है। मनुष्य सत्य पथ पर चलता है तो धर्म ही उसे सही रास्ता दिखाता है। इसलिए धर्म और संस्कृति का सम्बंध एक दूसरे के साथ बंधा हुआ है। आस्था ही धर्म को जीवित रखता है। व्यक्ति, परिवार, समाज, लोक–धर्म आस्था के ही विभिन्न रूप है।

धर्म का पालन करके मनुष्य सुखी जीवन व्यतीत कर सकता है। धर्म मनुष्य के स्वभाव को नियंत्रित करता है, अगर ना करें तो मनुष्य और पशु में कोई भी अंतर न रहे। धर्म में ही संस्कार और संस्कार में आपसी विचारों की प्रधानता होती है। आपसी विचारों के बिना मनुष्य का कोई महत्व नहीं रहता और धर्म के बिना सत् विचार अस्थित हो जाते हैं।

नीति :-

धर्म यदि प्रीतिवर्धक है तो नीति मनुष्य को सही मार्ग दिखाता है। धर्म बौद्ध यदि नीति ज्ञान के ऊपर प्रतिष्ठित है तो नीति धर्म के माध्यम से सामाजिक रूप धारण करता है। एक स्वस्थ समाज के संगठन में सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक इत्यादि कई प्रकार की नीति की भूमिका होती है। स्वातंर्त्योत्तर हिंदी कहानियों में प्राय सभी प्रकार की नीतियों का विवेचन है जिसके द्वारा मानव को मोह–संक्रमण से बचने और पथ–भ्रष्ट से विचलित लोगों के उचित मार्ग दिखाया गया है।

मानव को कैसा व्यवहार करना है या नहीं करना है यह नीती ही सिखाता है। समाज के कुछ व्यक्ति क्रूर

होते हैं तो कुछ दयालू। दयालू व्यक्ति हमेशा यही चाहता है कि सभी व्यक्ति परोपकारी व सत्यवादी हो पर क्रूर व्यक्ति दूसरे को कष्ट देकर अपने आप को श्रेष्ट दिखाना ही अपना ध्येय समझता है। सत्यता, न्यायपरायणता, कर्तव्यनिष्ठा, शान्तिप्रियता, धर्मबोध इत्यादि के समाहार से नैतिकता का सृष्टि होता है। मनुष्य जब पारिवारिक जीवन में प्रवेश करता है तब उसे कर्तव्य का बोध होने लगता है, वह समस्याओं के जाल में उलझ जाता है। उसका जीवन दुर्लभ हो जाता है। इन सभी कमियों को दूर करने के लिए नीतियाँ अति आवश्यक है।

शिक्षा :–

संस्कृति के व्यवहारिक पक्ष से शिक्षा का संबंध होता है। जो शिक्षा व्यक्ति के आत्मिक प्रकृति के विकास में सहायता करता है वही शिक्षा संस्कृति के परिचायक के रूप में मान्य होता है प्रकृति के साथ इस प्रकार की शिक्षा का संजोग संपर्क अत्यंत गहराई तक होता है। यह मनुष्य के भावों और विचारों को परिष्कृत करता है।

साहित्य :–

साहित्य किसी भी देश का प्रतिबिंब होता है। जिसमें किसी भी समाज की संस्कृति का सुंदर इतिहास को देखा जा सकता है। साहित्य को संस्कृति का उत्थान मानते हुए डॉ. राजेंद्र यादव का कहना हैं– 'किसे देश का उत्थान तब तक नहीं हो सकता, जब तक वहाँ की जनता में उच्च विचार, उच्च आकांक्षस, उच्च अभिलाषा और सच्चा उत्साह न हो। इनका सूत्र–पात साहित्य द्वारा ही हो सकता है।'[10] साहित्य संस्कृति का एक ऐसा अंश है जो किसी रचना में लिखित या मुद्रित चिन्हों के द्वारा हमारे सामने उपलब्ध है। कुछ आलोचक ऐसे भी हैं जिन्होंने साहित्य को संस्कृति का विशेष अंश न मानकर केवल एक खंड मानते हैं।

कला :–

कला जीवन को रंगीन और प्रभावशाली बनाता है। लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य का चित्रण बहुत से रचनाओं में मिलता है। इसके अलावा वास्तु कलाओं में सुन्दर भवनों, कुटीरों, राजभवनों का उल्लेख अधिकांश रचनाओं में कहीं ना कहीं मिल जाते हैं। कला के अंतर्गत खेल और पशुओं के प्रदर्शन की भी चर्चा की गई होती है। औद्योगीकरण के विकास के साथ–साथ आज का मानव अपनी संस्कृति से दूर जा रहे हैं। अतः सांस्कृतिक विकास में इन सब कलाओं का विकास आज के आधुनिक समाज में अत्यंत आवश्यक हो गया है।

दर्शन :–

दर्शन शब्द की उत्पत्ति 'फिलोस' और 'सोफिया' इन दो ग्रीक शब्दों के योग से हुआ है। फिलोस शब्द का अर्थ अनुराग और सोफिया का अर्थ ज्ञान है। व्यापक अर्थ में फिलॉसफी कहने से ज्ञान के प्रति अनुराग या जिज्ञासा को ही समझा जाता है। मनुष्य जगत और जीवन को जानना चाहता है। जगत और जीवन के स्वरूप को समझना चाहता है। संसार में घटने वाली प्रत्येक घटना उसके सामने रहस्यमय है। मनुष्य के इस बौद्धिक जिज्ञासा को दर्शन ही परितृप्त करता है। भारतीय दर्शन आध्यात्मिक होता है एवं हमेशा सत्य और सत्यता पर दृष्टि डालता है। संस्कृति को बनाए रखने के लिए दर्शन अनिवार्य है।

भाषा :–

भाषा संस्कृति की परिचायक एंव विशेष वाहक होता है। संस्कृति के विभिन्न उपादान और प्रलक्षण भाषा के माध्यम से एक युग से दूसरे युग में प्रवाहित होता रहता है। किसी युग के किसी भी समाज के आदर्श, आशा, अभिलाषा, सुख–दुख इत्यादि को दूसरे युग भाषा ही वाहक का कार्य करता है। वसतुतः सामाजिक जीवन में

अतीत, वर्तमान, और भविष्य में संयोग करने में भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण है।

उपर्युक्त विवेचन उपरांत यही कह सकते हैं कि समाज के बिना साहित्य और संस्कृति का कोई अस्तित्व नहीं है। साहित्यकार का एक ही लक्ष्य होता है समाज को विकसित करना। साहित्यकार एक सचेतन मनुष्य होने के नाते वह एक सचल संस्कृति से युक्त समाज का चित्रण करता है। सही मायने में साहित्यकार समाज और संस्कृति से अलग होकर नहीं रह सकता। वह अपने सरचनाओं के द्वारा समाज को ही चित्रित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य कोश : भाग एक, प्रधान संपादक–धीरेंद्र वर्मा, ज्ञान मंडल लिमिटेड–वाराणसी, संस्करण–2015, पृष्ठ संख्या 712
2. हिन्दी वृहत्त कोश– कालिका प्रसाद, ज्ञान मंडल लिमिटेड–बनारस, संस्करण–संवत् 2013, पृष्ठ संख्या– 1390
3. हिन्दी कहानी कला– डॉक्टर प्रताप नारायण टंडन, सम्मेलन मुद्रणालय–प्रयाग, संस्करण– प्रथम 1990 पृष्ठ संख्या–190
4. विषय समाज तत्व प्रत्यक्ष और प्रतिष्ठा अनाड़ी कुमार, महापात्र प्रकाश शास्त्री परिमल कुमार डेट कोलकाता, संस्करण तीर्थ या 2008 की संख्या 747
5. वही, पृष्ठ संख्या– 447
6. हिंदी साहित्य कोश : भाग–1, प्रधान संपादक–धीरेंद्र वर्मा, ज्ञानमंडल लिमिटेड–वाराणसी, संस्करण–2015, पृष्ठ संख्या–712
7. वही, पृष्ठ संख्या–712
8. विचार और वितर्क– हजारी प्रसाद द्विवेदी, सुषमा, साहित्य मंदिर–जबलपुर, संस्करण–संवत् 2002, पृष्ठ संख्या 181.
9. विषय समाज तत्व : प्रत्यक्ष और प्रतिष्ठा, अनादी कुमार महापात्र, प्रकाशक–श्री परिमल कुमार दत्त, कोलकाता, संस्करण–तृतीय 2008, पृष्ठ संख्या–814.
10. साहित्य शिक्षा और संस्कृति–राजेंद्र यादव, रामलाल पुरी–दिल्ली, वर्मा, ज्ञान मंडल, संस्करण–1952, पृष्ठ संख्या–25

M. 9029999589 Email : singhpriyanka786@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 53–57

वैदिक काल में स्त्रियों की दशा : एक अवलोकन

सुनीता कुमारी
शोध छात्रा, प्राचीन इतिहास विभाग, डॉ. प्रीति ग्लोबल विश्वविद्यालय, मध्य प्रदेश।

सारांश :–

भारतीय सभ्यता के प्राचीन इतिहास में वैदिक काल का विशेष स्थान है। यह काल न केवल धार्मिक और दार्शनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था, बल्कि सामाजिक संगठन और जीवन पद्धति का भी आधार था। विशेष रूप से स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन हमें यह समझने का अवसर देता है कि किस प्रकार समाज में उनकी भूमिका समय के साथ बदलती रही। आदिमकाल को छोड़कर इतिहास की क्रमिक श्रंखला में प्रायः सभी देशों में पितृसत्तात्मक समाज रहा है किन्तु भारतीय संस्कृति के उदात्त स्वरूप को यदि हमें हृदयंगम करना है तो यहाँ नारी की स्थिति को जानना नितान्त आवश्यक है। वस्तुतः किसी भी देश की सभ्यता एवं संस्कृति को जानने के लिए उस देश में स्त्री के पद व स्थिति को जानना आवश्यक हो जाता है इसको जाने बिना हम संस्कृति का सही मूल्यांकन ही नही कर सकते।

प्रस्तुत शोध–पत्र में वैदिककालीन नारी की स्थिति को उजागर करते हुए वर्णित किया गया है कि वैदिक समाज यद्यपि पितृसत्तात्मक था, परन्तु फिर भी समाज में नारी को पुत्री, बहन, पत्नी और माता के रूप में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। पुत्री के रूप में जहां वह लड़कों के समान वैदिक साहित्य का अध्ययन करती हुई हर स्थान पर लड़कों के बराबर दिखाई देती हैं, वहीं पत्नी के रुप में वह पुरुष की अर्धांगिनी, सहधर्मिणी तथा गृहस्वामिनी थी और प्रत्येक धार्मिक कृत्य उसकी उपस्थिति के बिना अधूरा था। माता के रूप में वह पूजनीय थी। वैदिक समाज में कन्या वध, पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा व दहेज प्रथा जैसी कुप्रथाएं प्रचलित नहीं हुई थी। विधवा को भी पुनर्विववाह की अनुमति थी। वैदिक काल का अन्त होते–होते नारी की इस आदर्श स्थिति में बदलाव के संकेत दिखाई देने लगते हैं।

मुख्य शब्द :– ऋग्वेद, यजुर्वेद, समाज, संस्कृति, स्त्री, शिक्षा, उपनिषद आदि।

परिचय :–

भारतीय संस्कृति की निरन्तर प्रवाहित सुदीर्ध परम्परा में नारी की स्थिति, प्रतिष्ठा, शक्ति, योग्यता आदि कालक्रमेण निरन्तर परिवर्तित होती रहती है, एक समय में भारत के पारिवारिक, धार्मिक, सामान्य आदि सभी क्षेत्रों में नारी की सम्मानीय प्रतिष्ठा दृष्टिगोचर होती है तो दूसरे समय सर्वत्र ही नितान्त दुर्दशा परिलक्षित होती है। इसी परिप्रेक्ष्य में वैदिककालीन स्त्रियों की स्थिति का विश्लेषण किया जाये तो देखा जा सकता है कि आर्यो के प्रारम्भिक समाज में स्त्रियाँ स्वतंत्र थी। वे बिना किसी प्रतिबंध के सामाजिक गतिविधियों में सम्मिलित होती थी।

वस्तुतः वैदिक युग में स्त्री जितनी स्वतंत्र और मुक्त थी उतनी परवर्ती काल में नहीं। सभी दृष्टियों से यह पुरुषों के समान थी। शिक्षा ज्ञान, यज्ञ आदि विभिन्न क्षेत्रों में निर्विरोध स्वच्छंदतापूर्वक सम्मिलित होती और आदर प्राप्त करती थी। उस युग में ऐसी अनेक विदुषी स्त्रियाँ थी जिन्होंने ऋग्वेद और अन्य वेदों की अनेक ऋचाओं का प्रणयन किया था। लोपामुद्रा, विश्ववारा घोषा, सिक्ता आदि ऐसी ही पंडिता स्त्रियां थी। शिक्षा, ज्ञान और विद्वता के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि याज्ञिक कार्यों में भी वे अग्रणी थी। ब्रह्मयज्ञ में जिन ऋषियों की गणना की जाती है उनमें सुलभा, गार्गी, मैत्रेयी आदि विदुषियों जिनकी प्रतिष्ठा वैदिक ऋषियों के समान थी। विदेह के शासक जनक ने यज्ञ के अवसर पर जो धार्मिक शास्त्रार्थ आयोजित किया था उसमें गार्गी अपनी प्रतिभा, तर्कशक्ति मेधा से दुरूह प्रश्नों की पुच्छाएँ करके याज्ञवल्क्य ऋर्षि के दाँत खट्टे कर दिये। इन साक्ष्यों से यह विदित होता है कि उस युग में स्त्रियाँ बिना परदे के स्वतंत्रतापूर्वक पुरुषो के साथ विद्वत गोष्ठियों और दार्शनिक वाद–विवादों में सम्मिलित होती थी। उनके मान व सम्मान में किसी प्रकार की कमी नहीं थी। बिना उनके सहयोग के यज्ञ पूरा नहीं माना जाता था। वेदों में उल्लिखित कुछ मन्त्र इस बात को रेखांकित करते हैं कि कुमारियों के लिए शिक्षा अपरिहार्य एवं महत्वपूर्ण मानी जाती थी । स्त्रियों को लौकिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की शिक्षाएँ दी जाती थी। गोभिल गृहसूत्र में कहा गया है कि अशिक्षित पत्नी यज्ञ करने में समर्थ नहीं होती थी। संगीत शिक्षा पर जोर दिया जाता था। इच्छा और योग्यता के अनुसार शिक्षा प्राप्ति के लिए श्रमणक्रमणिका में उल्लेखित प्राचीन परम्परा के अनुसार ऋग्वेद की रचना में 200 स्त्रियों का योगदान है। उत्तर वैदिककाल में परवर्ती युग से ही नारी की दशा अवनति की ओर अग्रसर होने लगी। उसके सामाजिक व धार्मिक अधिकार तो अवश्य बने रहे किन्तु उसके वैयक्तिक गुणों के प्रति संदेह व्यक्त किया गया, उसके लिए निन्दनीय शब्दों का प्रयोग होने लगा, उसे असत्यभाषी व शूद्र, श्वान की श्रेणी में रखा गया। उसे पुरुषों के साथ यज्ञ में सोम का भाग लेने से वंचित कर उसकी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने के प्रमाण मिलते हैं किन्तु फिर भी सामाजिक उत्सवों व धार्मिक पर्वों पर स्त्रियाँ उन्मुक्त होकर सम्मिलित हुआ करती थी।

वैदिकयुग में नारी शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। ज्ञान व शिक्षा में वे किसी भी प्रकार पुरुषों से कम नहीं थी। अतः वैदिक युग में स्त्री शिक्षा अपनी उच्चतम सीमा पर थी। इस युग में पुत्र की तरह पुत्री का भी विद्यारम्भ से पूर्व उपनयन संस्कार सम्पन्न कराया जाता था और सह शिक्षा ग्रहण करती थी। वे ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए विभिन्न विषयों की शिक्षा ग्रहण करती थी। वैदिक युग में छात्राओं के दो वर्ग थे। पहली सद्योवधू जो विवाह के पूर्व तक मंत्रों और याज्ञिक प्रार्थनाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेती थी तथा दूसरा वर्ग ब्रह्मवादिनी जो जीवनभर अध्ययनरत रहती थी। वे दर्शन, तर्क, मीमांसा, साहित्य आदि विभिन्न विषयों की पंडिता होती थी। काश–कृत्स्नी नामक स्त्री ने मीमांसा जैसे क्लिष्ट और गूढ़ विषय पर अत्यधिक बहुचर्चित पुस्तक का प्रणयन किया जो बाद में उसी के नाम पर विख्यात हुई। वैदिककाल में नारी शिक्षा के दो रूप थे पहला आध्यात्मिक दूसरा व्यवहारिक। आध्यात्मिक ज्ञान में घोषा भगिनी, विश्ववारा, एकपर्णा शतरूपा आदि कन्याओं का नाम जो ब्रह्मवादिनी का उल्लेख मिलता हैं जबकि व्यवहारिक ज्ञान के अन्तर्गत नृत्य, गान, चित्रकला गार्हस्थिक शिक्षा दी जाती थी। पूर्व वैदिक कालीन अपाला नामक कन्या अपने पिता के कृषि–कार्य में सहयोग प्रदान करती थी। स्त्रियाँ सूत कातना, सिलना भी जानती थी अतः ललित कलाओं में वे पूर्णतः निपुण होती थी। युद्ध में महिलाओं की भागीदारी और शस्त्र–कला में दक्षता– प्राचीन साहित्य से ज्ञात होता है कि महिलाएँ पुरुषों के साथ

युद्ध में भाग लेती थीं। वैदिक साहित्य में एक संदर्भ के अनुसार अपाला नाम की एक पुत्री ने अपने बीमार पिता की सेवा की थी। एक अन्य उदाहरण वासलिया नाम की एक महान महिला योद्धा का है, जिसका युद्ध में पैर कट गया था। स्त्रियों की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर हिन्दू समाज में उनका सम्पत्ति विषयक अधिकार स्वीकर किया गया है तथा उन विशेष परिस्थितियों का भी विश्लेषण किया गया है जिनके कारण सम्पत्ति में वे हिस्सा प्राप्त करती थी। वैसे वैदिककालीन कुछ ऐसे विवरण है जो उसके उत्तराधिकार पर आक्षेप करते है किन्तु ये अपवाद ही हैं– सम्पत्ति में प्रायः उनका हिस्सा रहता था। परिवार में वह पुत्र से किसी प्रकार कम नहीं समझी जाती थी। दत्तक पुत्र से श्रेष्ठ पुत्री समझी जाती थी। पुत्र के न रहने पर पिता की सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी मानी जाती थी। अतः वैदिक युग सम्पत्ति का अधिकार स्वीकार किया जाता था किन्तु दूसरी शती ई०पू० तक आकर स्त्री शिक्षा पर प्रतिबंध लगने से स्त्री सम्पत्ति अधिकार क्षतिग्रस्त हुआ। विधवा सम्पत्ति अधिकार संदर्भ में संहिता व ब्राह्मणों ग्रंथों में पति की मृत्यु पर विधवा के अधिकार को समाज में स्वीकृति नहीं मिली परवर्ती काल में ही विधवा सम्पत्ति अधिकार मिला।

वैदिक युग में पहली सदी ई०पू० तक हिन्दू समाज में स्त्रियों के लिए पर्दा का प्रचलन नहीं था। सह शिक्षा का व्यवहार स्त्री–पुरुष दोनों का समान रूप से उन्मुक्त वातावरण प्रदान करता था। पूर्ववैदिक काल में वधू सभी आंगतो को दिखाई जाती थी। उस युग में स्त्रियाँ विदथ तथ समन (मेलों, उत्सव) में स्वच्छन्दतापूर्वक सम्मिलित होती थी। अतः स्पष्ट है कि परदा जैसे व्यवहार का स्पष्ट संकेत वैदिककाल में दिखाई नहीं पड़ता। वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति के सन्दर्भ में विवाह की चर्चा की जा सकती है इस समय समाज में 8 तरह के विवाह का प्रचलन था जिनमें नैतिक व धार्मिक मूल्य के ही विवाह समाज में प्रचलित थे किन्तु विवाह के प्रकार से यह अवश्य दर्शित होता है कि समाज में विभिन्न प्रकार के लोग थे जो परिस्थितियों के अनुरूप विवाह किया करते थे। वैदिककाल में एक पत्नी विवाह का प्रचलन था। वेदों मे अनेक स्थलों पर स्पष्ट है कि एक विवाह आदर्श विवाह है किन्तु बहुपत्नी साक्ष्य भी प्राप्त होते हैं किन्तु आदर्शमयी एक पत्नी विवाह ही था। वैदिक काल में पुनर्विवाह अथवा विधवा विवाह समाज में प्रचलित था। पति की मृत्यु पर स्त्री का पुनर्विवाह करने का पूर्ण अधिकार था। वैदिक काल में नियोग प्रथा का प्रचलन था जिसके सम्बन्ध में गौतम का कथन है पतिहीना स्त्री यदि पुत्र की कामना करती है तो उसे वह देवर से प्राप्त करें। इस प्रकार नियोग पुनर्विवाह से स्त्रियों की स्थिति संतोषजनक थी। वैदिककाल में कन्याओं का विवाह वयस्क होने पर ही किया जाता था। ऋग्वेद के इस श्लोक 'सोमो वधुयुरभवदश्विनास्तामुभावरा। सूर्या यत्पत्येशंसन्तीं मनसा सविता ददाता स्पष्ट है कि वैदिककाल में बाल विवाह का प्रचलन नहीं था। निर्धन लोगों में एक पत्नी प्रथा थी लेकिन धनी व राजसी घरानों में बहुविवाह प्रचलित थी एक से अधिक पुरुष के साथ एक स्त्री का विवाह का संकेत अथर्ववेद में प्राप्त होता है। अतः विवाह की उत्पत्ति इसी काल में हुई। उत्तरकालीन साहित्यों में इसका विकास एवं अन्तर दृष्टिगत होता है।

वैदिककाल में कन्या के विवाह के समय नाना प्रकार के वस्त्राभूषणों को दिया जाता था। ब्रह्म विवाह इसी श्रेणी में आता है। राज परिवार की वधुएं अपने साथ दहेज की 100 गाये लेकर वर के घर जाती थी। इस प्रकार अनेक प्रकार के वस्त्र आभूषण घोड़े हाथी आदि दहेज में अपनी स्वेच्छा से दिया जाता था। एक मंत्र अथर्ववेद से अंदाजा लगाया जा सकता है कि जिस स्त्री को नापसंद करते हो उसके लिए सबसे बुरे भाग्य की कामना यह की जा सकती थी कि वह कुंवरी कन्या के तौर पर अपने माता–पिता के घर रहने के लिए मजबूर हो,

सम्भवतः ऐसी दशा में पुत्री विवाह के समय दहेज देना आम रिवाज बन गया होगा। यही प्रथा निरन्तर बढ़ती चली गयी और समाज में इस प्रकार घर कर गई कि इसका टूट जाना असम्भव हो गया। किसी भी समाज अथवा राष्ट्र के सर्वतोमुखी अभ्युदय में स्त्री और पुरुष का समान महत्व रहा है पुरुष यदि घर से बाहर के कार्यों का सुचारूता एवं उन्नति का कर्तव्य वहन करता है तो स्त्री शुश्रुषा स्नेह आदि के सम्बलपूर्वक घर के विभिन्न कष्ट साध्य दायित्यों का निर्वाह करती हुई अपनी चरम उपयोगिता को सार्थक रूप में सिद्ध करती है– स्त्री के बिना पुरुष अपूर्ण है जीवनरथ के दो चक्रो–स्त्री व पुरुष के एक समान चलने पर ही जीवन आनन्दमय बनता है।

वासुदेवशरण अग्रवाल – स्त्री व पुरुष दोनों नदी के दो तटों की भांति सहयुक्त है वैदिक साहित्य में स्त्री और पुरुष दोनों की उपमा पृथिवी व द्युलोक से दी गयी है–द्यावा–पृथिवी एक ही संस्थन के परस्पर पूरक हैं यही स्थिति पत्नी–पति की है। स्त्री की सर्वाधिक गिरी हुई स्थिति मैत्रेयनी संहिता से प्राप्त होती है, जिसमें जुआ और शराब की भांति स्त्री को पुरूष का तीसरा मुख्य दोष बताया गया हैं। जबकि शतपथ ब्राह्मण में स्त्री को पुरूष का अर्धांगिनी कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण में वाजपेय यज्ञ का यज्ञकर्ता इस बात को कहता है कि सर्वोच्च लाभ को प्राप्त करना चाहता हूँ। अतः अपनी अर्धागिनी पत्नी को मैं यज्ञ में सम्मिलित रखता हूँ।

अथर्ववेद में नव वधू को सम्बोधित करते हुए कहा गया है 'हे नववधू तू जिस नये घर में प्रवेश कर रही है उस घर की तू साम्राज्ञी है। यह राज्य तेरा है। तेरे श्वसुर,देवर, ननंद और सास तुझे साम्राज्ञी समझ आनन्दित रहें।' इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में पति के घर पर भी स्त्री को सम्पूर्ण सम्मान प्रदान किया जाता था। समग्र प्राचीनकाल में स्त्रियों की स्थिति को देखा जाय तो निःसंदेह रूप से वैदिककाल में स्त्री दशा के दृष्टिकोण से उत्तम था क्योंकि सामाजिक ढाचा अभी रूढ़िवादिता के तत्वों से परे थे। शायद इसीलिए स्त्रियों को इस युग में सभी प्रकार की स्वतंत्रता प्राप्त थी। वैदिक युग में जन्म से लेकर मृत्यु तक स्त्री को समाज एवं परिवार में सम्मानपूर्ण स्थिति प्राप्त थी। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र एवं उम्र के प्रत्येक पड़ाव पर उसे अनेक अधिकार एवं स्वतंत्रताएँ प्राप्त थी। किन्तु समय परिवर्तन के साथ हिन्दू शास्त्रकारों पुरुषों के अधिकार को स्वीकार करके एवम् स्त्रियों के अधिकार को अस्वीकर करके एकपक्षीय नियम बनाये जिससे उत्तरोत्तर स्त्रियों की दशा पुरुषों के समान नहीं रह सकी। अल्तेकर के अनुसार वैदिक युग भारतीय महिलाओं के दृष्टिकोण से 'स्वर्ण युग' था क्योंकि उन्हें विभिन्न क्षेत्रों की शिक्षा और ज्ञान प्राप्त हुआ था। लेकिन कई इतिहासकार इस परिकल्पना से सहमत नहीं हैं क्योंकि उनका मानना है कि स्वर्ण युग उच्च स्तर की महिलाओं के लिए रहा होगा, न कि सामान्य वर्ग की महिलाओं के लिए। इतिहासकारों का मानना है कि ऋग्वैदिक समाज पितृसत्तात्मक और पितृवंशीय था।

निष्कर्ष : अंत में हम कह सकते है कि वैदिककाल में महिलाओं को समान एवं महत्वपूर्ण सामाजिक स्थिति प्राप्त थी। महिलाओं को भी पुरूष के उत्तरदायित्वों एवं घरेलू कर्तव्यों में समान रूप से सहभागी माना जाता था। सार्वजनिक जीवन में भी महिलाएं महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया करती थी। वे सभाओं में भाग लिया करती थी। महिलाओं की स्थिति सामान्यतः पुरुषों की स्थिति से अधिक भिन्न नहीं थी यानि वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति पुरुषों के समान ही थी। इस अध्ययन से साबित होता है कि वैदिक कालीन समाज एक प्रगतिशील, आशावादी समाज था जहाँ पुरुष और महिला को समान दर्जा प्राप्त था। प्रगतिशील शिक्षा प्रणाली वैदिक युग की प्रगति के लिए जिम्मेदार थी। प्राचीन शिक्षा का उद्देश्य शिष्य का सर्वांगीण विकास करना, उसकी ज्ञान ज्योति को जगाना, उसे दृढ़ बनाना और उसके जीवन को पूरी तरह से भाग्यशाली बनाना था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वासुदेवशरण अग्रवाल : भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 96 और पृष्ठ 98.
2. त्रिपाठी, कुसुम, महिलाओं की दशा और दिशा। कुरुक्षेत्र। अंक, मार्च 2010.
3. अल्तेकर, ए०एस०रू दि पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स प्रा० लि० दिल्ली–2005.
4. मिश्र, डॉ० उर्मिला प्रकाश, प्राचीन भारत में नारी, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल–2002.
5. विद्यालंकर–सत्यकेतु, प्राचीन भारत का ध०सा०आ० जीवन, सरस्वती सदन, नई दिल्ली,1996.
6. झा एवं श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, 2001.
7. पांडा प्रमोदिनी, वेद कालिन नारी शिक्षा, ओरिएंटल बुक सेंटर, दिल्ली।
8. द्विवेदी, कपिल देव, वैदिक साहित्य और संस्कृति।
9. भारतवर्ष का सामाजिक इतिहास, डॉ० विमल चन्द्र पाण्डेय पेज नं0 100–101.
10. ऋग्वेद, 10.89, 29–परा देहि शामुत्यं ब्रहाम्यो विमजा वसु।
11. अर्थर्ववेद, 10.85.33 सुमंगलरियं वधूरिया दस्वायाधास्वितं परेतन्।

बुद्ध विहार, कालिंदीपुरम, प्रयागराज, उत्तर–प्रदेश, 211011

Email id - Pandeysmita523@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 58-61

विद्यालयी शिक्षा के साथ चित्रकला– सोने पे सुहागा

सितेंद्र रंजन सिंह
शोधार्थी (ललित कला), सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला, पूर्वी सिंहभूम, झारखण्ड।

सारांश :–

कला की दुनिया बच्चों की मनपसंद दुनिया है। यह आजादी की दुनिया है और अपने मन मुताबिक कुछ भी कर दिखाने की दुनिया है। इस दुनिया में बच्चे बहुत आजादी महसूस करते हैं और अपना सर्वश्रेष्ठ रचना लोगों को समक्ष प्रस्तुत करते हैं। चित्रकला सीखने का अवसर देने वाली दुनिया है और संपूर्ण आनंद देने वाली दुनिया है। इसमें उमंग और उत्साह का महत्वपूर्ण स्थान है। यह बच्चों के स्वयं सीखने, जानने और आगे बढ़ाने की दुनिया है। नई शिक्षा नीति 2020 में चित्रकला को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। विद्यालय के छात्र हजारों चित्र और अपनी मनपसंद रचना बनाने में सक्षम है यदि उन्हें मौका दिया जाए तो। चित्रों के माध्यम से बालक अपने रंगों और रंगों के अवलोकनों, उनके संबंध में अपनी पसंद पसंद–नापसंद, अपनी रुचि और संस्कारिता स्पष्ट रूप से व्यक्त करते हैं। बच्चे अपनी सृजनात्मक वृत्ति को आगे बढ़ाते हुए कलाकार बनने के मार्ग पर चलने लगते हैं। चित्रकारी दृश्य जगत को रेखाओं व रंगों के माध्यम से प्रस्तुत करने का एक तरीका है। प्राथमिक शालाओं को चाहिए कि वह बच्चों को अपनी पसंद का चित्र बनाने दे भले ही वह विशेषज्ञ के नजर में टेढ़े–मेरे में हो, अनुपात हीन हो और बेढंगे हो पर वे चित्र बालक के अंतर्मन को समझने में मदद करेंगे।

बीज शब्द – चित्रकला, अभिव्यक्ति, सौंदर्यबोध, अधिगम, सृजनात्मक, रचनात्मकता।

परिचय :–

कला अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। यह छात्रों में छिपी हुई सौंदर्य बोध की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। सभी लोगों में कला के प्रति आकर्षण सहज भाव से मौजूद होता है। सामाजिक, सांस्कृतिक और शिक्षा के दृष्टिकोण से भी कला का विशेष महत्व होता है। इतिहास के भित्ति चित्रों, शिलालेखों, सिक्कों, मोहरों, पुस्तकों तथा अन्य साक्ष्यों को हम देखते हैं तो ऐसा कह सकते हैं कि मानव सभ्यता के विकास, संप्रेषण और सीखने की प्रक्रिया में कला का विशेष योगदान रहा है। व्यक्ति अपने विचारों,भावों एवं कल्पनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए किसी न किसी कला का उपयोग करता रहा है। सौंदर्यबोध के विकास, व्यक्तित्व व प्रवृत्तियों और मूल्यों के विकास में कलाकार का महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिसका उपयोग विद्यालय की प्रक्रियाओं को रोचक बनाने में किया जाता है। चित्रकला की शिक्षा विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास का उपयोग जरिया हो सकता है। शिक्षाशास्त्रीय उद्देश्य से कला का अनेक तरह से उपयोग किया जा सकता है। कला को संसाधन के रूप में, माध्यम के रूप में और कौशल के रूप में उपयोग किया जा सकता है। कलायें हमारे जीवन और अधिगम का

समृद्ध बनाते हैं। कला का उपयोग शिक्षण अधिगम प्रक्रियाओं को सरल रोचक सुगम और आनंददायी बनता है। शिक्षार्थियों को संरचनात्मक क्षमता के विकास में कला का अत्यधिक महत्व है। लंबे समय से चित्रकला को विद्यालयी शिक्षा के साथ जोड़ने की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है। विद्यार्थियों के सृजनात्मक क्षमता के विकास के लिए चित्रकला की महत्वपूर्ण भूमिका है। चित्रकला अन्य विषयों के ज्ञान को प्राप्त करने तथा उन्हें समझने में भी मदद करती है। चित्रकला के माध्यम से विद्यार्थी अपने विचारों एवं भावनाओं को व्यक्त करते हैं। चित्रकला न सिर्फ एक विषय के रूप में महत्वपूर्ण है बल्कि यह शिक्षण प्रक्रिया के रूप में भी महत्वपूर्ण है। सीखने के रूप में कला समेकित शिक्षा महत्वपूर्ण मध्यम है। यह विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक भावनात्मक एवं मानोगत्यात्मक विकास को भी आगे बढ़ती है। चित्रकला को शिक्षण का माध्यम बनाना बहुत प्रभावी सिद्ध होता है। आड़ी–तिरछी रेखाएं खींचना, किसी की नकल करना, कुछ नया बनाना, बच्चों की सहज भाव में शामिल है। चित्रकला हर स्तर पर सीखने की असीम संभावना उपलब्ध कराती है।

विश्लेषण :–

'कलाकार कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं होता मगर हर व्यक्ति एक विशिष्ट कलाकार होता है'।

–आनंद कुमार स्वामी

बचपन से बच्चों को कला से अधिक लगाव होता है। बच्चे चित्रकला संबंधी गतिविधियों में स्वाभाविक रूप से शामिल हो जाते हैं और आनंद का अनुभव करते हैं। बच्चों की दुनिया एक निराली दुनिया होती है। बच्चों द्वारा की जाने वाली कलात्मक गतिविधियों में सीखना अपने आप शामिल हो जाता है और सीखने की गतिविधियों में कला स्वतः ही शामिल हो जाता है। ये प्रक्रियायें बच्चों के विकासक्रम की यात्रा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग है कि बच्चे इसमें सहजता से क्यों शामिल हो जाते हैं और क्यों आनंद की प्राप्ति करते हैं। ये प्रक्रियाएं उनके विद्यार्थी जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। चित्रकला व्यक्तिगत विकास, सामाजिक विकास व मनोवैज्ञानिक विकास के लिए अवसर प्रदान करती है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भी चित्रकला जैसे कला का समावेश दृष्टिगोचर होती है। जैसे भाषा अधिगम में कविता की लयबद्ध रूप से प्रस्तुति, सौंदर्यानुभूति, गणित में विभिन्न गणितीय अवधारणाएँ, प्रतिरूप, आकृतियाँ इत्यादि। चित्रकला संबंधी अनुभव का उपयोग कला शिक्षा तथा कला के माध्यम से शिक्षा हेतु किया जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से शिक्षा नीति संबंधित प्रपत्रों में शिक्षा को कला के दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है।

नई शिक्षा नीति 2020 में भी कला को एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसमें चित्रकला, संगीत, योग, शारीरिक शिक्षा, प्रदर्शन कला इत्यादि को भी अन्य विषयों के समान महत्व दिया गया है ताकि कला के महत्व को समझा जा सके और यदि कोई विद्यार्थी चित्रकला में निपुण है तो वह चित्रकला के क्षेत्र में भी अपना पेशा बना सके और जीवन में आगे बढ़ सके। नई शिक्षा नीति 2020 में स्पष्ट उल्लेख है कि ष्सभी प्रकार की भारतीय कलाओं को शिक्षा के सभी स्तरों पर स्थापित किया जाएष्। ऐसी स्थिति में चित्रकला विषय की शिक्षा के संबंध में गहन चिंतन की आवश्यकता महसूस होती है। हर इंसान कला का कुछ समझ रखता है। कला का संबंध सुंदरता, सौंदर्यबोध व रचनात्मकता से है। कलात्मक चीजों को हम अपने इंद्रियों से अनुभव कर सकते हैं अर्थात उसे छू सकते हैं, देख सकते हैं, सुन सकते हैं, चख सकते हैं, सूंघ सकते हैं। कला कल्पना के साथ–साथ निर्माण भी है। रूप, रंग, रेखा, तान पोत और अंतराल के साथ नए आयाम का निर्माण करती है।

इससे हमारी इंद्रियां परिष्कृत व बारीक बातों के प्रति संवेदनशील होती है।
यदि हम कला और शिक्षा के संबंध में बात करें तो दो बातें महत्वपूर्ण होती है :–

1. कला में शिक्षा या कला शिक्षा।
2. शिक्षा में कला या कला समेकित शिक्षा।

'कला में शिक्षा' का तात्पर्य है कि कला के किसी विधा में सिद्धांत, प्रक्रिया, तकनीक और नियमों की जानकारी प्राप्त करना। 'शिक्षा में कला' से तात्पर्य है कला शिक्षा के सभी पक्षों के साथ–साथ वह सभी तथ्य जो किसी व्यक्ति के वृद्धि और विकास में योगदान देते हैं। शिक्षा में कला ज्ञान के साथ–साथ कौशल संबंधित गुणों एवं अनुभवों का सर्वश्रेष्ठ रूप है।

कला शिक्षा सीखने व अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है और कला रचनात्मक प्रक्रिया का उत्पाद है जो के चित्रकला या अन्य कला के रूप में प्रस्तुत होता है। कला शिक्षा का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है कला शिक्षा हमारी संवेदना और सौंदर्यानुभूति को प्रस्तुत करते हैं। कला शिक्षा सूचना अन्वेषण को प्रोत्साहित करते हैं। यह अभिव्यक्ति के सृजन हेतु आधार प्रस्तुत करता है जिन्हें केवल शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता है। यह चित्रकला या अन्य कलाओं के माध्यम से और अशाब्दिक रूप में प्रस्तुत होता है। इसमें चित्रकला या दृश्य कला का महत्वपूर्ण योगदान होता है। दृश्य कला से तात्पर्य उन सभी विधाओं से होता है जिनकी कलात्मक अभिव्यक्ति को हम मूर्तरूप में देख सकते हैं जैसे चित्रकला, मूर्ति कला, डिजाइन, कॉलाज, मुद्रण, मुखौटा, पुतली कला इत्यादि आता है।

कला समेकित शिक्षा : अवधारणा एवं महत्व :–

कला समेकित शिक्षा सीखने सिखाने की वैसी प्रक्रिया है जिसमें कला का एक माध्यम के रूप में उपयोग किया जाता है। इसमें चित्रकला या अन्य कलाओं को विषयों के साथ जोड़कर बच्चों में आनंददायी वातावरण में विषयगत अवधारणाओं की समझ को और अधिक स्पष्ट किया जाता है। कला समेकित शिक्षा में शिक्षक को इतनी समझ होनी चाहिए जिससे वह कला की सराहना कर सके तथा उसके महत्व को जाने। उन्हें कला विषयों की इतनी समझ होनी चाहिए जिससे वे उसका समावेशन समझदारी से विभिन्न विषयों में कर सकें। कला समेकित शिक्षण तकनीक में बच्चों को अपनी अभिव्यक्ति की पूरी स्वतंत्रता होती है। इसके लिए यह बहुत जरूरी है कि एक आनंददायी वातावरण का निर्माण हो और यह तभी संभव है जब बच्चा विद्यालय को अपनी मनपसंद जगह मान ले और स्वतंत्र रूप से अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सके। विद्यालय एक ऐसी जगह में तब्दील हो जाए जहां प्रवेश करते ही बच्चा आनंद से भरकर स्वत ही सीखने की प्रक्रिया में लग जाए।

कला के ज्ञान को संपन्न बनाने तथा सर्वश्रेष्ठ का चयन करने में जिसे प्राप्त करने के लिए स्वयं का अनुशासन, ठोस ज्ञान पर आधारित जानकारी, बौद्धिक जागृति तथा मानव जीवन के रचनात्मक और कल्पनाशील पहलुओं का महत्वपूर्ण योगदान होता है। चित्रकला विषय के विद्यार्थी अपने चाक्षुस ज्ञान के आधार पर जीवन से संबंधित विभिन्न क्रियाओं, वस्तुओं, जड़ चेतना और स्वरूपों को चित्रित कर अपनी क्षमताओं का विकास करते है। चित्रकला विद्यालय के विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के कार्य करते हैं जैसे रेखाओं द्वारा आलेख तैयार करना, रंगों का मिश्रण, रंगों की प्रकृति, रंगों द्वारा आलेखनों, अलंकरणों एवं विभिन्न प्रकार के आकारों एवं प्रकारों को बनाता है। कला में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न सामग्रियों एवं उनकी विधियों को जानता है। क्षेत्रफलक की जानकारी

पोत, टेक्सचर, रंग रंगों का मनोविज्ञान, रेखा, लय व संतुलन इत्यादि के महत्व को जानता है। रंगों में बैठा व्यक्ति जिनके हाथ रंगे हों और कपड़े पर भी रंग लगे हो वह गंदगी जैसा लगता है लेकिन केवल उनके लिए जो कला के महत्व को नहीं जानते हैं लेकिन जो व्यक्ति कला के अन्वेषण को जानता है। वह उस खेल में शामिल होगा और उसे और प्रोत्साहित करेगा। कला के इस मंत्र मुग्ध कर देने वाली दुनिया में गोता लगाना बच्चों के विकास के लिए बेहद ज्ञानवर्धक और फलदायी साबित होगा। कला किसी व्यक्ति के अनुभूति के प्रतिक्रिया का एक सौंदर्य और रचनात्मक रूप है। इसमें चित्रकला, मूर्ति कला, मिश्रित मीडिया, कलाकृति सहित मानवीय गतिविधियों, रचनाओं और अभिव्यक्ति के अन्य तरीके शामिल हैं। कला शिक्षा किसी विषय के बारे में विभिन्न कला रूपों के उपयोग के माध्यम से सीखना है। छात्र अपना दृष्टिकोण भी बनाते हैं और समझते हैं कि कला के बारे में आलोचनात्मक या विश्लेषणात्मक रूप से कैसे लिखना है।

निष्कर्ष :-

कला शिक्षा संतुलित शिक्षा का एक अनिवार्य हिस्सा है। कला शिक्षा के लिए अतिरिक्त निधि को बढ़ावा देने के साथ–साथ इस क्षेत्र के अधिक प्रसार के लिए समर्थन प्रदान करने की वकालत करने के प्रयास किए गए हैं। यह छात्रों को उनकी रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच, कौशल और समस्या समाधान क्षमताओं को विकसित करने में मदद कर सकता है ताकि उन्हें अच्छी तरह से विकसित व्यक्ति बनाया जा सके और उन्हें आगे उज्जवल भविष्य के लिए तैयार किया जा सके।

संदर्भ :-

1. शिक्षा का वाहन कला, देवी प्रसाद, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया।
2. कला समेकित शिक्षा : डॉ. सविता शर्मा, 2020
3. कला शिक्षा और भावी परिप्रेक्ष्य : डॉ. सत्यवती शर्मा – डॉ. मधुभट्ट तैलंग, पंचशील प्रकाशन।
4. कला शिक्षा : डॉ. चित्रलेखा सिंह, पैरागन इंटरनेशनल पब्लिशर्स, 2015
5. कला शिक्षा : स्नेहलता चतुर्वेदी, अग्रवाल पब्लिकेशन, 2019

मोबाईल –9241956672,

E-Mail: sitendraranjansingh@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 62-66

EVOLUTION OF MADHUBANI ART : UNFOLDING THE PETALS

SABHYATA RANI SINGH
RESEARCH SCHOLAR, FINE ARTS
SONA DEVI UNIVERSITY, GHATSILA, JHARKHAND

ABSTRACT :

The globally recognized art form i.e Madhubani art has evolved from it's origin as a wall and floor decoration for auspicious occasions. Traditionally, this folk art was created on mud walls using natural pigments and natural tools like twigs and fingers. But this folk art got noticed in the 1960's when a severe drought led to the commercialization of the art, and this was the turning point. The simple women of the Mithila region started creating paintings on paper and canvas. Earlier the women artist used to decorate the walls and floors of their houses for the sake of their culture, but they began to earn by creating masterpieces which not only provided a livelihood but also introduced their art to a wider audience. They also established themselves as well- known Madhubani artists. Madhubani art has expanded to include diverse subjects and at the same time maintaining its traditional themes and styles. The Madhubani art is celebrated worldwide blending both traditional and modern techniques and materials. The Madhubani art form has been incorporated into various commercial products.

KEY WORDS - Madhubani, Wall, Culture, Theme, Traditional, Natural pigments, Techniques, Commercialization, Evolution.

INTRODUTION :

Madhubani art is a popular art style of folk painting. The Mithila region of Bihar and Nepal originated this art form. The women of the villages of Madhubani district used to portray their Mythological beliefs using vibrant colours and geometric patterns. The simple villagers used to create masterpieces by using natural colours derived from plants and minerals. They used rice paste and various flowers. Their themes include social events like wedding and festivals, symbols such as the sun, the moon, religious plants like tulsi and lotus. Their paintings depict their association with their surroundings and deities from the ancient epics. Madhubani art is dominated by female artists of the

region.

The evolution of the Madhubani painting provided a platform for women empowerment. The women artists used to explore new mediums to express their sentiments while preserving the rich cultural heritage of Mithila since many centuries.

ANCIENT ORIGINS :

Madhubani painting has a colourful and vibrant history which is believed to have originated during the Ramayana era. During the grand wedding of Devi Sita and Lord Rama, the king Janak ordered his court artists to capture the mesmerizing moments in the form of wall paintings. Overtime, Madhubani art began to be a household practice in the region by virtue of people's love and passion for this art form.

It evolved from ephemeral wall art to a recognized art form with diverse themes and styles. It is now produced on paper, canvas, and fabric.

JOURNEY FROM WALL TO PAPER :

Traditionally, Madhubani paintings were created on freshly plastered mud walls using natural pigments derived from plants, flowers, and minerals. The artists prepared wall surface by applying a coat of cow dung or white washing. Black colour was made from burnt barley seeds, yellow colour from turmeric, or chuna (lime) mixed with milk from banyan leaf, orange colour from palash flower, red colour from the juice of the Kusuma flower and green from bel leaves. Rice was mixed with water for white colour.

This exceptional art form was unnoticed and unpopular till 1930's. In 1934, a British colonial officer, W.G archer visited Bihar during his inspection of the disastrous earthquake. He was very much fascinated by seeing this unique art. He was the first one to pay attention to the mural paintings of the Mithila region. He termed it as 'Mithila painting'. He also wrote article in journals.

During the year 1966, the great famine of Bihar made it possible for this art to develop and grow. This was the second phase of evolution. During a severe drought, The All India Handicrafts Board encouraged women to paint on paper, canvas and fabric to generate income.

Now a days, artists use organic and mineral colours also. Sometimes they prefer synthetic colours due to lack of time.

VARIETY OF THEMES :

The Madhubani painting offers variety of theme to the artists. During ancient times, the art depicted religious deities, nature, and scenes from daily life, reflecting the cultural and social fabric of the region. The religious themes includes portraying mainly Goddess Durga and Kali. Apart from this, artist use motifs to depict flora , fauna, beauty of nature, Gods and Goddesses, various kinds of

animals, birds, plants and creatures. Symbols play a significant role in Madhubani painting. These symbols denote deep meanings. Sun and moon represent long life, lotus denotes good luck and bamboo represents masculine gender. Fishes symbolize fertility.

Modern artists have explored contemporary themes like social justice, environmental conservation and political issues. The artists have devoted their skill with full effort and perseverance to bring this art at global stage.

The beautiful subject matter and unique theme and various patterns are remarkable in the paintings of Madhubani art.

Madhubani art has gained international recognition , with exhibitions, galleries, and artists showcasing it world wide. The beautiful and lively art work captivates the mind and soul also.

The art form has faced many challenges related to mass production and commercialization. The commercialization has badly affected this art. The very essence and aesthetic beauty of this folk art is missing somewhere. The buyer-centric approach has affected the originality of the colour, design, motive, and sensitivity of this great art form.

Madhubani art has some other challenges also such as finding sustainable markets and preserving its cultural authenticity. There are some copyright issues also. The artists are compromising on traditional themes and compositions.

There is a need to provide them a well-organized market to minimize the influence of middle man.

During 1960's, the Madhubani artists participated in exhibitions like Expo-70 in Japan and Asia-72 also. The Madhubani painting tradition played a vital role to protect local trees in Bihar from being cut down. The painters of Madhubani art were employed to paint trees by Gram Vikas Parishad. The Madhubani artists painted gods and some religious and spiritual images on trees. They painted trees with the mixture of lime, glue and synthetic enamel.

Madhubani art is now recognized all over the world. It appears on various products like clothing, home décor, architecture, and even in railway station.

RENOWNED ARTISTS :

There are some well-known artists whose incredible contribution to this art brought it to the open world. Their dedication and perseverance helped Madhubani art to flourish on the world's stage. Several artists have received National awards and recognition including Sita Devi, Ganga Devi, Maha Sundari Devi. Baua Devi, Jagdamba Devi, Maha Sundari Devi and Sita Devi were honoured with Padmashree award.

There are some other artists also whose iconic paintings are globally famous. These artists

are Yamuna Devi, Shanti Devi, Chano Devi, Mudrika Devi, Phool Maya Devi etc.

Bharti Dayal is a famous Madhubani artist from Samastipur who won the National award.

ART ENTHUSIASTS :

Some scholars and art enthusiast played a vital role in documenting, promoting and exhibiting Madhubani art. Some remarkable scholars are Raymond Owens, Pupul Jayakar, David L-Szanton, Paula Richman, William G. Archer, Ajit Mukherjee, Suraj Prasad and Anjan Sen.

DISTINCTIVE STYLES :

The Madhubani art form has five distinctive styles -Bharni, Katchni, Tantric, Godna, Kohbar.

Bharni is known for its bold and vivid use of colour which focuses on religious themes and depiction of gods and goddesses.

Katchni is characterized by fine lines and intricate detailing.

Tantric style often features esoteric and spiritual themes.

Godna is inspired by traditional tattoo designs.

Kohbar typically depicts matrimonial and fertility symbols.

Initially these styles were practiced by women from the Brahmin and Kayastha communities. But now all types of artist freely try all these five styles.

UNIQUE COLOUR TECHNIQUES :

The process includes using natural materials and traditional techniques. The base is prepared with a mixture of cow dung and mud which is generally applied on hand made paper or cloth. The colours are derived from natural sources such as leaves and flowers. Artists apply the colours using bamboo sticks, twigs, and match sticks.

CONCLUSION :

Today, Madhubani painting stands as a treasured Indian art form. It has a rich historical background. It is not just a symbol of regional pride but a celebrated art form worldwide which reflects the timeless beauty and cultural legacy of India. Various platforms provided to the artists preserve and promote this heritage art. The incomparable beauty of this art continues its endless journey of artistic excellence. Day by day its popularity is growing and winning millions of hearts all over the world. We should preserve this ancient art form to honour millions of women artists of Mithila whose dedication and extra ordinary effort has made Madhubani painting a universal trademark.

It maintains its position as an important element of India's artistic legacy and has been shown in galleries all around the world. It captures social scenes from rural Indian life. The evolution of the Madhubani painting helped women artists to express their emotions and sentiments. They became financially independent. Since few decades, a large number of Madhubani artist have migrated to

metro cities and abroad to fulfil their desires and dreams.

This ancient art form flourished as murals has unfolded its bright petals to the whole world.

REFERENCE :

1. Madhubani Painting------ Anand M.R.(1984),---New Delhi Publications Division.
2. Maithil Painting-------Archer W.G.(1949),------Marg, A magazine of architecture and art, Bombay, Marg Publications.
3. Mithila Paintings : Past, Present and Future----- -DR. K. Mishra Kailash.
4. Vibrant Folk Art Of Mithila----Ghosh Soma.

MOB :7368034393

Email : sabhyataranisingh@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 67–70

टेराकोटा : आधुनिक दुनिया में एक प्राचीन सामग्री

समरेंद्र रंजन सिंह
शोधार्थी, ललित कला, सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला, जमशेदपुर, झारखण्ड।

टेराकोटा, इतालवी शब्दों 'टेरा' (पृथ्वी और 'कोट्टा' (पकाया हुआ) से उत्पन्न है, यह पकी हुई मिट्टी का एक रूप है। जिसका उपयोग सहस्राब्दियों से किया जा रहा है। इस बहुमुखी, लाल–भूरे रंग की सामग्री ने मानव सभ्यता में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जो उपयोगितावादी से लेकर कलात्मक तक के उद्देश्यों को पूरा करती है। मनुष्यों द्वारा ढाली और हेरफेर की गई सबसे प्रारंभिक सामग्रियों में से एक के रूप में, टेराकोटा कला, वास्तुकला और दैनिक जीवन के इतिहास में एक अद्वितीय स्थान रखता है। यह निबंध टेराकोटा की ऐतिहासिक उत्पत्ति, उत्पादन तकनीक, सांस्कृतिक महत्व और आधुनिक अनुप्रयोगों की खोज करता है, जो पारंपरिक और समकालीन दोनों संदर्भों में इसकी स्थायी प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

ऐतिहासिक उत्पति और सांस्कृतिक महत्व :–

टेराकोटा के उपयोग का पता प्राचीन सभ्यताओं से लगाया जा सकता है, जिसमें मेसोपोटामिया, सिंधु घाटी, चीन, मिस्र, ग्रीस और रोम शामिल हैं। सबसे प्रतिष्ठित उदाहरणों में से एक चीन की टेराकोटा सेना है, जिसे लगभग 210 ईसा पूर्व में प्रथम सम्राट की किनशी हुआंग के शासनकाल के दौरान बनाया गया था। सैनिकों, घोडों और रथों की हजारों आदमकद मूर्तियों से युक्त, टेराकोटा सेना प्राचीन टेराकोटा कला के परिष्कार और पैमाने का उदाहरण है।

सिंधु घाटी सभ्यता (लगभग 3300–1300 ईसा पूर्व) में, टेराकोटा का व्यापक रूप से मूर्तियाँ, खिलौने, मिट्टी के बर्तन और घरेलू सामान बनाने के लिए उपयोग किया जाता था। ये कलाकृतियां शुरुआती समाजों के दैनिक जीवन, धार्मिक विश्वासों और कलात्मक अभिव्यक्तियों के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करती हैं। इसी तरह, प्राचीन ग्रीस और रोम में, टेराकोटा का इस्तेमाल आमतौर पर वास्तुशिल्प सजावट, जैसे कि फ्रिज और टाइल, साथ ही देवताओं और पौराणिक दृश्यों के मूर्तिकला प्रतिनिधित्व के लिए किया जाता था। टेराकोटा का सांस्कृतिक महत्व महत्व इसकी पहुँच और अनुकूलनशीलता में निहित है। एक प्राकृतिक और प्रचुर संसाधन होने के कारण, मिट्टी दुनिया भर के समुदायों के लिये आसानी से उपलब्ध थी। इसे आकार देने में आसानी और कम तापमान पर पकाने की वजह से यह व्यापक उपयोग के लिए आदर्श बन गया, जबसे मामूली घरों में भी उपयोगिता और सुंदरता दोनों की वस्तुएं रखी जा सकती थीं।

उत्पादन तकनीक और गुण :–

टेराकोटा बनानेकी प्रकिया में कई चरण शामिल हैं, जो मिट्टी के चयन और तैयारी से शुरू होते हैं। हवा

के बुलबुले को हटाने और वांछित स्थिरता प्राप्त करने के लिए मिट्टी को गूंधा और मिलाया जाता है। फिर इसे हाथ से मॉडलिंग, मोल्डिंग या व्हील–थ्रोइंग जैसी विभिन्न तकनीकों का उपयोग करके आकार दिया जाता है। एक बार आकार देने के बाद, नमी को हटाने के लिए वस्तुओं को सुखाया जाता है और फिर 900 से 1000 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर भट्टी में जलाया जाता है। टेराकोटा का विशिष्ट लाल–भूरा रंग मिट्टी में मौजूद आयरन ऑक्साइड की उपस्थिति के कारण होता है, जो फायरिंग प्रकिया के दौरान प्रतिक्रिया करता है। मिट्टी की संरचना और फायरिंग की स्थिति के आधार पर, अंतिम उत्पाद रंग और बनावट में भिन्न हो सकता है। कुछ टेराकोटा वस्तुओं को बिना चमक के छोड़ दिया जाता है, जो सामग्री की प्राकृतिक सुंदरता को प्रदर्शित करता है, जबकि अन्य को आंतरिक सुरक्षा और सौंदर्य अपील लिए पेंट या लेपित किया जा सकता है। टेराकोटा की छिद्रता इसे कुछ कायों के लिये आदर्श बनाती है, जैसे एक पौधे के गमले, जो प्राकृतिक वातन और जल निकासी की अनुमति देते हैं। हालांकि, इसका यह भी मतलब है कि बिना चमक वाला टेराकोटा मौसम और नमी से होने वाले नुकसान के प्रति संवेदनशील है, खासकर ठंडे मौसम में। प्रौद्योगिकी में प्रगति में उत्पादन विधियों में सुधार किया है और अधिक टिकाऊ टेराकोटा वैरिएंट का विकास किया है।

कलात्मक और स्थापत्य अनप्रुयोग :–

पूरे इतिहास में, टेराकोटा कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए एक पसंदीदा माध्यम रहा है। इसकी लचीलापन जटिल विवरण के लिए अनुमति देता है, जो इसे आकृतियों, राहत और सजावटी तत्वों को गढ़ने के लिए उपयुक्त बनाता है। कई संस्कृतियों में, टेराकोटा मूर्तियों धार्मिक या औपचारिक उद्देश्यों के लिए बनाई जाती थीं जो अक्सर देवताओं, जानवरों या प्रतीकात्मक रूपांकनों का प्रतिनिधित्व करती थीं। वास्तकुला में, टेराकोटा का उपयोग सजावटी और संरचनात्मक उद्देश्यों के लिए बडे पैमाने पर किया गया है। प्राचीन काल में, यह मंदिरों, महलों और सार्वजनिक भवनों को सुशोभित करता था। 19वीं और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में, टेराकोटा ने पश्चिमी वास्तुकला में, विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप में पुर्नरुत्थान का अनभुव किया। इसे इसकी सौंदर्य अपील, अग्नि प्रतिरोध और बडे पैमाने पर उत्पादन में आसानी के लिए इमारतों के अग्रभाग में नियोजित किया गया था। प्रमुख उदाहरणों में शिकागो में रिगले बिल्डिंग और न्यूयॉर्क शहर में वूलवर्थ बिल्डिंग शामिल हैं, जिसमे से दोनों में विस्तृत टेराकोटा विवरण है। भारत में, पारंपरिक हवेलियों और मंदिरों में अक्सर टेराकोटा पैनल और मूर्तियाँ शामिल की जाती हैं, जो क्षेत्रीय शिल्प कौशल और कहानी कहने का प्रदर्शन करती हैं।

टेराकोटा मंदिर :–

टेराकोटा शब्द का अर्थ है लेपित या बिना लेपित पकी हुई मिट्टी जिसका उपयोग वास्तुकला में अपने बिना चमक वाले भूरे–लाल रंग के कारण किया जाता है। कला इतिहास में, इसका प्रयोग मूर्तियों को परिभाषित करने के लिए किया जाता है। यह विश्वास करना कठिन है कि टेराकोटा की मदद से एक पूरा शहर बसाया जा सकता है। फिर भी, बिष्णुपुर नाम का एक पूरा शहर ईंट और मिट्टी की मदद से बसा है। कोलकाता से 139 किलोमीटर दूर, बिष्णुपुर की स्थापना सबसे पहले मल्ल वंश ने की थी, जिसने पुरुलिया और बर्दवान के एक हिस्से पर शासन किया था। यह शहर अपने मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है, जो स्थानीय रूप से उपलब्ध टेराकोटा की ढलाई और उत्कीर्ण सजावट से बने हैं। ये टेराकोटा मंदिर गौड़ीय वैष्णव की आस्था से जुड़े हैं।

बंगाल के टेराकोटा मंदिर :–

भारत के पूर्वी क्षेत्र का एक शहर बिष्णुपुर, पश्चिम बंगाल के सबसे लोकप्रिय और महत्वपूर्ण स्थानों में से एक है, जिसे आमतौर पर मंदिरों का शहर कहा जाता है। बिष्णुपुर प्राचीन इतिहास और संस्कृति से समृद्ध है। यहाँ कुल चार महत्वपूर्ण टेराकोटा मंदिर स्थित हैं। ये सभी टेराकोटा मंदिर वास्तुकला की दृष्टि से महत्वपूर्ण और गरिमामय हैं। इन टेराकोटा मंदिरों का निर्माण मल्ल वंश के राजाओं ने करवाया था। मल्ल वंश के शासक भगवान विष्णु के भक्त थे। मल्ल वंश के शासकों ने पश्चिम बंगाल में कई अद्भुत टेराकोटा मंदिर बनवाए। ये टेराकोटा मंदिर पूरे भारत के साथ–साथ दुनिया भर में लोकप्रिय हैं। विभिन्न देशों से बड़ी संख्या में पर्यटक इन मंदिरों की भव्यता से मंत्रमुग्ध हो जाते हैं।

टेराकोटा मंदिरों के विषय :–

मंदिरों पर लगाई जाने वाली टेराकोटा की पट्टिकाओं में ऐतिहासिक, पौराणिक और सामाजिक–सांस्कृतिक विरासत से जुड़े महंगे तत्व शामिल होते हैं। टेराकोटा मंदिरों की विषयवस्तु मुख्यतः महाभारत और रामायण की पौराणिक कथाओं पर आधारित होती थी।

बिष्णुपुर के टेराकोटा मंदिरों की वास्तुकला :–

बिष्णुपुर पश्चिम बंगाल का एक हिस्सा है जिसमें बांकुड़ा, बर्दवान, बीरभूम, पुरुलिया और मुर्शिदाबाद के कुछ हिस्से शामिल हैं। यह हिस्सा अपनी लैटेराइट मिट्टी के लिए लोकप्रिय है। इन टेराकोटा मंदिरों की वास्तुकला लैटेराइट मिट्टी से बनी है जिसे लाल मिट्टी भी कहा जाता है। इन टेराकोटा मंदिरों की वास्तुकला को चार अलग–अलग प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है : चाला, दलान और रत्ना। चाला मंदिरों की विशेषता विभिन्न प्रकार की छत संरचनाएं हैं। चाला मंदिरों की छतें बाकी मंदिरों की तुलना में सपाट हैं। दूसरी ओर, रत्ना मंदिर की छत आकार में घुमावदार है और यह रत्ना नामक शिखर या मीनारों से सुसज्जित है। सरल रूप में केंद्र में स्थित एक मीनार होती है। ये रत्ना–शैली के टेराकोटा मंदिर 15–16वीं शताब्दी में बनाए गए थे बिष्णुपुर में आजकल रेखा और नागर शैली के टेराकोटा मंदिर मौजूद हैं। मल्ल वंश के दौरान, अधिकांश टेराकोटा मंदिरों का विकास शुरू हुआ, जिसके कारण बिष्णुपुर के मंदिरों का वर्तमान स्वरूप सामने आया। हालाँकि कुछ मंदिर पत्थरों और ईंटों से बने हुए भी पाए जाते हैं, फिर भी बिष्णुपुर शहर अपने टेराकोटा मंदिरों के लिए व्यापक रूप से लोकप्रिय है। इन सभी टेराकोटा मंदिरों में, रास–मंच सबसे लोकप्रिय है क्योंकि यह रत्न वास्तुकला का एक प्राचीन खंड है। मदन–मोहन मंदिर अपनी एनक्राट्नो वास्तुकला के कारण लोकप्रिय है। बिष्णुपुर शहर के अधिकांश टेराकोटा मंदिर एकरत्नो प्रकार के हैं।

आधुनिक उपयोग और संधारणीय अपील :–

समकालीन समय में, टेराकोटा को इसके सौंदयण और पर्यावरणीय लाभों के लिए महत्व दिया जाता है। आर्किटेक्ट और डिजाइनर इसके प्राकृतिक स्वरूप, तापीय गुणों और संधारणीय की ओर तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। टेराकोट क्लैडिंग सिस्टम का उपयोग अब आधुनिकतम इमारतों में इन्सुलेशन प्रदान करने, ऊर्जा की खपत को कम करने और दृश्य अपील को बढ़ाने के लिए किया जाता है। टेराकोटा इंटीरियर डिजाइन में भी लोकप्रिय हो रहा है, जहाँ इसका उपयोग फ्लोरिंग, दीवार टाइल और सजावटी वस्तुओं के लिए किया जाता है। इसके मिट्टी के रंग और देहाती बनावट रहने की जगहों में गर्मी और चरित्र जोड़ते हैं। इसके अलावा, एक

बायोडिग्रेडेबल और गैर–विषाक्त सामग्री के रूप में, टेराकोटा हरित भवन और पर्यावरण के प्रति जागरूक डिजाइन के सिद्धांतों के अनुरूप है। ग्रामीण और विकासशील क्षेत्रों में, टेराकोटा आवास और बुनियादी ढाँचे के लिए एक लागत प्रभावी समाधान बना हुआ है। स्थानीय कारीगर पारंपरिक तरीकों का उपयोग करके टेराकोटा ईंटों, टाइलों और बर्तनों का उत्पादन जारी रखते हैं, व्यवहारिक जरूरतों को पूरा करते हुए सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करते हैं।

चुनौतियां और नवाचार :-

इसके कई लाभों के बावजूद, टेराकोटा को कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इसकी नाजकुता, छिद्रण और मौसम के प्रति संवेदनशीलता कुछ वातावरणों में इसके अनुप्रयोगों को सीमित कर सकती है। इसके अतिरिक्त, मैन्यअुल उत्पादन प्रकिया श्रम–गहन और समय लेने वाली हो सकती है। इन मुद्दों को संबोधित करने के लिए, शोधकर्ता और निर्माता टेराकोटा की ताकत और स्थायित्व को बढ़ाने के लिए नवीन तकनीकों की खोज कर रहे हैं। इनमें एडीटीव्स का उपयोग, बेहतर फायरिंग विधियाँ और 3D प्रिंटिंग जैसी आधुनिक तकनीकों का एकीकरण शामिल है। इस तरह की प्रगति का उद्देश्य नवनिर्माण और डिजाइन में टेराकोटा की क्षमता का विस्तार करना है, जिसमें यह समकालीन सामग्रियों के साथ अधिक बहुमुखी और प्रतिस्पर्धी बन सके।

निष्कर्ष :-

टेराकोटा मानव सरलता और रचनात्मकता का एक वसीयतनामा है, जो प्राचीनता और आधुनिकता के बीच की खाई को पाटता है। साधारण घरेलू बर्तन से लेकर स्मारकीय मूर्तियाँ और अत्याधुनिक वास्तुकला तक, टेराकोटा ने अपनी बहुमुखी प्रतिभा और कालातीत अपील को साबित किया है। सांस्कृतियों और युगों में इसकी स्थायी उपस्थिति सिर्फ एक सामग्री से कहीं ज्यादा इसके महत्व को रेखांकित करती है– यह सांस्कृतिक पहचान, कलात्मक विरासत और संधारणीय नवाचार का प्रतीक है। जैसे–जैसे हम आधुनिक दुनिया की चुनौतियों का सामना करते हैं, टेराकोटा हमारे अतीत से जुड़ाव और ज्यादा जमीनी और जिम्मेदार भविष्य की ओर एक रास्ता प्रदान करता है।

कुंजी शब्द – टेराकोट्टा, मिट्टी, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, मूर्तियाँ।

संदर्भ :–

1. इंडियन टेराकोट्टा आर्ट : ओ. सी. गांगुली।
2. टेराकोट्टा : हिम्मत शाह।
3. टेराकोटा आर्मी : जॉन मैन।
4. ब्रिटानिका – http://www.britanica.co

मोबाइल – 9798328626
Email : samruchi321@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 71-76

मधु काँकरिया के उपन्यास 'सेज पर संस्कृत' में चित्रित स्त्री चेतना

अनिता रानी, भोधार्थी
शोध निर्देशक : **डॉ. मीनू,** सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग, श्री खु ाल दास वि वविद्यालय, पीलीबंगा, हनुमानगढ़, राजस्थान–335801

शोध सारांश :-

स्त्री प्रत्येक युग में समाज एवं साहित्य का अभिन्न अंग रही है। समाज और साहित्य से स्त्री को अलग करने की कल्पना ही नहीं की जा सकती। साहित्य, कला और दर्शन से स्त्री का इतना घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है कि उसके अभाव में सभ्यता की कल्पना संभव नही है। पुराणों और संस्कृत महाकाव्यों में स्त्री अत्यन्त गरिमामयी रूप में चित्रित हुई है। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में स्त्री को अत्यन्त गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है तथा उसे देवी के समान स्थान दिया गया है– 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।' अर्थात् जहाँ नारियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, वहाँ स्वयं ईश्वर का निवास होता है। आगे चलकर जैसे–जैसे परिस्थितियों में परिवर्तन आता गया, स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आता गया। जहाँ वैदिक युग में स्त्री को अत्यन्त गौरवपूर्ण स्थान मिला था, वहीं उसके बाद स्त्री के गौरव का निरन्तर अवमूल्यन होता रहा। जो स्त्री देवी थी अब वह मानवी बनकर रह गई। धीरे–धीरे पुरुष–प्रधान समाज अपने प्राचीन आदर्शों को भूलने लगा। अब पुरुष के लिए स्त्री मात्र भोग्या रह गई। पुरुष अपनी स्वच्छन्दता का उपभोग करता रहा तथा स्त्री वर्जनाओं की परिधि में कैद रही।

मुख्य शब्द :- सभ्यता, स्त्री वर्जना, संघर्ष, असुरक्षा, स्त्री विमर्श।

प्रस्तावना :-

मधु काँकरिया के उपन्यास साहित्य में स्त्री–जीवन के संघर्ष का चित्रण किया गया है। इनका साहित्य जीवन की उस कड़वी सच्चाई का प्रतिबिम्ब है, जिससे वर्तमान समय में स्त्री का सामना हो रहा है। इनके द्वारा रचित 'सेज पर संस्कृत' उपन्यास में स्त्री विमर्श को अत्यन्त दृढ़ एवं सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया गया है साथ ही जैन धर्म के मनुष्य विरोधी होते जाने का प्रामाणिक एवं तर्कपूर्ण विश्लेषण किया गया है। यह उपन्यास जैन धर्म में साध्वियों के जीवन की स्थिति तथा उनके संघर्ष का मर्मस्पर्शी चित्रण करता है। इस उपन्यास में निडर, संघर्षशील, धैर्यवान एवं अन्ततः विद्रोहिणी बन चुकी नारी की आंतरिक पीड़ा का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। भारत एक धर्मप्रधान देश है। ऐसे देश में एक नारी का जीवन कितना यातनामय एवं भयावह हो सकता है–इस उपन्यास में इसी यातना गाथा का चित्रण किया गया है।

'सेज पर संस्कृत' उपन्यास में एक ऐसे परिवार का चित्रण किया गया है, जिसके मुखिया और पुत्र ऋषि की असामयिक मृत्यु हो जाने के कारण माँ पूर्णिमा देवी पर सारे उत्तरदायित्व आ गये है। उसकी दो पुत्रियाँ हैं और घर में कोई पुरुष नहीं है, जो परिवार को सुरक्षा प्रदान कर सके। वह कहती है, 'अरे जिस समाज ने चार भुने हुए चने के लिए धर्मात्मा तुलसीदास को भी नहीं छोड़ा वह हमें क्या बख्शेगा?'[1] प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखिका सीमोन के अनुसार 'स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है'। स्त्री को बचपन से ही मानसिक तौर पर उसके स्त्री होने का अहसास दिलाया जाता है। पितृ–सत्तात्मक समाज स्वयं की सत्ता को बनाये रखने के लिए स्त्री को जन्म से ही अनेक नियमों से घेर देता है। सीमोन लिखती हैं, 'औरत जन्म से ही औरत नहीं होती, बल्कि औरत बनाई जाती है। कोई भी जैविक, मनोवैज्ञानिक या आर्थिक नियति आधुनिक स्त्री के भाग्य की अकेली नियन्ता नहीं होती।'[2] जैसे–जैसे पश्चिमी चिन्तन तथा जीवन–शैली का प्रभाव भारतीय समाज पर पड़ा वैसे–वैसे स्त्री वर्जनाओं को तोड़ने में सक्षम होने लगी। शिक्षा, विज्ञान और सामाजिक व्यवस्था के परिवर्तनों से स्त्री की स्थिति में परिवर्तन आने लगा। आधुनिक शिक्षित स्त्री अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हुई, जिससे वह प्राचीन रुढ़ियों से मुक्त होने का प्रयास करने लगी। आधुनिक युग में आर्थिक उदारीकरण, सूचना–प्रसारण की नई विधियों आदि ने साहित्य को पूर्णरूपेण परिवर्तित कर दिया। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव तथा नवीन सांस्कृतिक बोध के कारण नवीन दृष्टि का जन्म हुआ। पुरुषों के वर्चस्व का खंडन हुआ तथा हाशिए पर धकेल दी गई स्त्री समाज में अपना खोया हुआ स्थान ढूँढ़ने लगी। यहीं से स्त्री विमर्श की शुरुआत होती है। मूलरूप से स्त्री–मुक्ति के आस–पास केंद्रित रहने वाला साहित्य स्त्री विमर्श माना गया है।

हिन्दी–साहित्य के स्त्री विमर्श के सम्बन्ध में कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं, 'स्त्री की व्यथा पर आधुनिक काल के सभी रचनाकारों ने लेखनी उठाई है। ... लोक हृदय और लोक चिन्ता रचनाकर्ता की सच्ची पहचान है। ... साहित्य हमारे मानुष भाव की रक्षा का प्रयत्न है–जो हमें बेहतर मनुष्य बनाता है–भाव परिष्कार करता है और मनुष्यता की उच्च भूमि पर ले जाकर खड़ा कर देता है।'[3] उसका विश्वास है कि इस संसार में रोटी तो मिलेगी लेकिन उसकी कीमत बोटी देकर चुकानी पड़ेगी, 'घर में कोई मर्द होता तो क्या ऐसे बोलने की हिम्मत कर सकता था वह? यह आदमियों की दुनिया है जो रोटी तो देगी पर बोटी नोच लेगी। फटी चदरी–सा यह घर अब न तुम्हारे सँभले–सँभलेगा और न मेरे।'[4] आर्थिक समस्या के कारण माँ पुत्रियों को लेकर असुरक्षा की भावना से इस सीमा तक ग्रस्त हो जाती है कि वह अध्यात्म को ही अपनी पुत्रियों का मुक्तिमार्ग समझने लगती है। इसलिए वह साध्वी बन जाना चाहती है। वह चाहती है कि उसकी पुत्रियाँ संघमित्रा और छुटकी भी इसी मार्ग को अपना लें, जिससे उनका जीवन सुरक्षित रह सके एवं माँ को भी उसके उत्तरदायित्वों से सम्मानसहित मुक्ति प्राप्त हो जाए। संघमित्रा उच्च शिक्षा प्राप्त कर रही है। वह विवाह को एक सामाजिक संस्कार मानती है और इस बात का समर्थन नहीं करती कि सारा परिवार दीक्षा ले ले। वह माँ को समझाने का प्रयास करती है, 'तुमने तो धर्म को, लोमड़ी की तरह चालाक बना दिया है। जीवन मुश्किल लगे तो धर्म का लबादा डाल लो। सोचो माँ, तुम्हारा डर और असुरक्षा बोध इस कारण है कि घर में कोई पुरुष नहीं। तुम्हें लगता है कि तुम अपने बूते हमारे लिए पति का जुगाड़ नहीं कर पाओगी तो इन्हें धर्मरूपी पति के हवाले कर दो। पर हमें न पति चाहिए न घर। हमें बस थोड़ा–सा भरोसा दो जिससे हमारे पंखों को मजबूती मिल जाए, फिर हम अपना आसमान खुद ढूंढ लेंगे। औरत होने के भय से तुम खुद भी मुक्त हो जाओ और हमें भी मुक्त कर दो।'[5]

संघमित्रा साध्वी जीवन एवं दीक्षा के विरुद्ध है। वह अपनी ग्यारह वर्षीया छोटी बहन को दीक्षा से बचाना चाहती है। उसके अनेक प्रयासों के बावजूद माँ का पलड़ा भारी पड़ जाता है। आक्रोश और हताशा में संघमित्रा कहती है, 'माँ तुम्हारा वैराग्य यदि जीवन के प्रति स्वाभाविक विरक्ति, किसी बड़ी रोशनी में आने की व्याकुलता, तत्त्व चिन्तन या परम की प्राप्ति के लिए होता तो मैं विरोध नहीं करती। मैं आगे बढ़कर खोल देती सारे दरवाजे–लो उड़ो, जितना ऊँचा उड़ सकती हो तुम। पर तुम्हारे ख्वाबों ने पटरी इस कारण बदली कि अंधेरा तुम्हारी आत्मा तक फैल गया है कि इस उजड़े घर में तीन खाने वाले और कमाने वाला कोई हाथ नहीं। तुम्हें संसार–असार तब जान पड़ने लगा, जब पाँच रुपयों की आमदनी के लिए तुम्हें दिन भर पापड़ बेलने पड़ गए। जब जिन्दगी तुम्हें डराने लगी तो तुमने धर्म की चादर ओढ़ ली।'[6]

संघमित्रा के समझाने का माँ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और माँ घर पर रहकर ही साध्वी जीवन की शुरुआत कर देती है। घर में सूर्यास्त के पश्चात् आहार ग्रहण न करने का नियम लागू हो जाता है। छोटी पुत्री छुटकी पर माँ का प्रभाव बढ़ता चला जाता है। वह खेलने–कूदने की आयु में ही धर्मरूपी दलदल में फँसने लगती है। संघमित्रा लाख प्रयास करने के बाद भी छुटकी को माँ के प्रभाव से मुक्त नहीं कर पाती। माँ और छुटकी दीक्षा लेने के लिए कलकत्ता चले जाते हैं। संघमित्रा छुटकी की दीक्षा लेने का विरोध करना चाहती है। वह अपनी सहेली मालविका की सहायता लेती है, जिससे वे संघप्रमुख गुरुदेव श्री जीवसिद्धि से मिलकर इस दीक्षा को रुकवा सके। संघमित्रा उनसे कहती है–'गुरुदेव जैसे एक वीणावादक का सत्य उसकी वीणा में, नृत्यांगना का सत्य उनके घुँघरुओं में, कुम्हार का चाक में, पक्षी का उड़ान में, वैज्ञानिक का प्रयोगशाला में ... क्योंकि यहीं वे अपनी आत्मा का सर्वश्रेष्ठ उड़ेलकर ... अपना सर्वश्रेष्ठ मानवता को देकर मुक्त हो सकते हैं, मोक्ष पा सकते हैं वैसे ही एक ग्यारह वर्षीय बालिका का सत्य तो उसके खिलौने और उसकी पुस्तक ही हो सकता है। उसके सत्य पर किसी और सत्य का आरोपण करना क्या उसके सत्य के साथ बलात्कार नहीं होगा? जवानी के कपड़े बचपन में नहीं पहने जा सकते हैं गुरुदेव ! आपसे अपेक्षा है ... गुरुदेव कि आप छुटकी ... जी मेरा मतलब है राशि विनायिका की बाल दीक्षा की अनुमति वापस ले लें क्योंकि यह उनके हित के विरुद्ध होगा।'[7]

लेकिन अनेक प्रयास करने के बाद भी संघमित्रा को छुटकी की दीक्षा को रोकने में सफलता नहीं मिलती। दीक्षा के दिन छुटकी को साध्वी दिव्यप्रभा घोषित कर दिया जाता है और पूर्णिमा देवी को साध्वी मणिप्रभा। मुँह पर श्वेत पट्टी, नंगे पैर, केश लुंचन आदि प्रक्रियाओं से उन्हें गुजरना पड़ता है। संघमित्रा वापस आकर जीवन को पुनः जीने का प्रयास करती है लेकिन वह सुख से जी नहीं पाती। जीवन को नए सिरे से जीने के प्रयास में उसे कुछ कटु अनुभव प्राप्त होते हैं। वह एक सॉफ्टवेयर कम्पनी में नौकरी करने लगती है, जहाँ का मैनेजर मि. मेहता उससे अश्लील व्यवहार करता है। वह उसे सबक सिखाना चाहती है। वह अपने सम्मान एवं स्वाभिमान के लिए लड़ाई लड़ती है। वह कम्पनी के एम.डी. से कहती है –'हाँ सर, इतनी ही सी तो बात है। एक अदना सी स्टाफ की अदना सी इज्जत। अपराध तो सिर्फ बलात्कारी और हत्यारे ही करते हैं। इन चमचमाते अफसरों की ये सूक्ष्म कमीनी हरकतें अपराध थोड़े ही हैं। ये इनका चारित्रिक पतन नहीं, हल्का–फुल्का दिल बहलाव है और हमें इसका आदी हो जाना चाहिए। इसलिए जिस अपमान ने मुझे हिला डाला, आपको एक हिचकी तक नहीं आई ... क्योंकि आधुनिकता की इस चकाचौंध ने आपको इतना मोटा देखने का अभ्यस्त बना डाला कि नारी स्वाभिमान और सम्मान की ये बारीक हरकतें आप लोगों को दिखलाई ही नहीं पड़ती। पर यदि मेरी जगह आपकी

बेटी होती ... तो भी क्या ...' ।[8]

आधुनिकता के वर्तमान दौर में स्त्री के सम्मान को ठेस पहुंचते हुए देखकर संघमित्रा स्वयं को आहत महसूस करती है। समाज से प्राप्त हुए कटु अनुभव के कारण वह स्त्री के सम्मान एवं व्यक्तित्व की रक्षा करने के लिए नारी शक्ति संघ की नींव रखती है। वह कहती है, 'बाबा, आपकी बात यही है कि कितनी नौकरियाँ बदलूँगी मैं। पर मैं अपनी आदत से मजबूर हूँ। अपमान की यह रोटी तो मुझसे नहीं निगली जाएगी। जब तक धरती का वह गन्दा धब्बा मुझसे माफी नहीं माँग लेता मैं यहाँ काम नहीं कर पाऊँगी ... न्याय का सूरज अगर उगाना होगा तो आसमान की ओर छलाँग मारने की चोट भी खानी ही पड़ेगी।'[9] बाद में मि. मेहता उससे लिखित माफी माँगकर वचन देते है कि जीवन में कभी किसी स्त्री के साथ ऐसा दुर्व्यवहार नहीं करेंगे। दूसरी ओर छुटकी अर्थात् साध्वी दिव्यप्रभा पाँच वर्षों तक संन्यासी जीवन में रहने के बाद अपनी बहन संघमित्रा की बातों का मर्म समझ पाती है। उसे साध्वी जीवन के खुरदुरेपन का अहसास होने लगता है, 'मन करता है इतना रोए, इतना रोए वह कि आँसुओं से धरती डूब जाए। पर उसकी भी इजाजत नही है। रोना इस दुनिया में निषिद्ध है। साध्वी रो नहीं सकती। जिसे दुनिया के दुःख छू लें, विचलित कर दें, जो रो पड़े, वह भला कैसी साध्वी? फाँसी खाई शशिप्रभा को देख वह चीख पड़ी थी और फफक–फफक कर रोने लगी थी। तब उसे दंड दिया गया था– तीन उपवास और दो एकासना (एक बेर आहार)।'[10] दिव्यप्रभा के मन में संसार के प्रति आकर्षण उत्पन्न होता है। वह परिव्रज्या अर्थात् विहार भ्रमण करके अपने जीवन को गतिशील बनाने का प्रयास करती है। उसी समय अन्तर्राष्ट्रीय धार्मिक सम्मेलन में उसे आठ दिनों के लिए बाहर भेजा जाता है। वहीं विजयेन्द्र मुनि और दिव्यप्रभा एक–दूसरे के प्रति आकर्षण में बँध जाते है। विजयेन्द्र मुनि कहते है, 'नहीं देवी, तुमने तो सिर्फ मुझे आईना दिखाया है ... तुमने तो सिर्फ यही सिद्ध किया है कि मैंने स्त्री को जिया नहीं वरन् इसे सिर्फ परे सरका दिया था और इसीलिए स्त्री के प्रथम संसर्ग ने ही मेरी आन्तरिक सत्ता को हिलाकर धर दिया। तुमने सिर्फ मुझे अपने अस्तित्व का नया और गहरा अर्थ महसूस कराया है। आज जान सका हूँ कि बिना स्त्री को जाने जीवन को सम्पूर्णता में नहीं जाना जा सकता है।'[11] वे दोनों सन्न्यासी जीवन को छोड़ने के लिए तत्पर हैं। विजयेन्द्र मुनि पलायन के स्थान पर संघ प्रमुख के नाम एक पत्र छोड़कर जाना चाहते हैं। इस कार्य के लिए विजयेन्द्र मुनि अपने गुरुभाई अभय मुनि की सहायता लेते हैं। अभय मुनि दिव्यप्रभा को निकालने में सफल हो जाते हैं लेकिन वे दिव्यप्रभा के साथ बलात्कार कर देते हैं और विजयेन्द्र मुनि को सन्देश देते हैं कि दिव्यप्रभा ने उनके साथ पलायन से मना कर दिया। धर्म के नाम पर अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पित करने के बावजूद दिव्यप्रभा को बलात्कार जैसी घिनौनी स्थिति का सामना करना पड़ता है। दिव्यप्रभा गर्भवती हो जाती है और संसार की सबसे पापी औरत घोषित करके उसे संघ से निष्कासित कर दिया जाता है। पुत्री पर कलंक लगने से आहत माँ संथारा ग्रहण कर लेती है।

अठारह वर्षों के बाद दोनों बहनें पुनः मिलती हैं। अब संघमित्रा सामाजिक कार्यकर्ता बन चुकी है। वह नारी शक्ति संघ की स्थापना कर चुकी है और अब इस संस्था में दस हजार महिलाएँ हैं। संघमित्रा का परिचय ऋषिकन्या नामक लड़की से होता है, जो उसे अपने घर ले जाती है। उस लड़की की माँ दिव्यप्रभा है। दिव्यप्रभा बताती है कि संघ द्वारा उसे चाचा को सौंप दिया गया लेकिन चाचा ने भी उसे घर से निकाल दिया। चाचा का दरबान उसे नौकरी दिलवाने का लालच देकर कोठे पर बेच गया। अब उसे कैंसर हो चुका है और वह संघमित्रा

को ऋषिकन्या की जिम्मेदारी देकर मरना चाहती है। दिव्यप्रभा अपनी जिन्दगी का सच संघमित्रा को बताते हुए कहती है, 'और सच पूछो जीजी, तो यह दुनिया भी उतनी बुरी नहीं। यहाँ कम–से–कम कोई किसी को बदचलन तो नहीं कहता। उस तपोवन से भी अच्छी है यह दुनिया, जिसने आज तक जाने कितनी औरतों को सहारा दिया पर किसी को पापिन कहकर निकाला नहीं। मुझे गलत मत समझना जीजी, पर मुझे तुम्हारी पवित्र दुनियां से अब डर लगने लगा है। सोचो जीजी, कितनी कमजोर थी वह दुनिया, जिसकी नींव हिल गई एक अजन्मे गर्भ के चलते। कहीं अच्छी है यह दुनिया। यहाँ हम सब एक जैसी हैं। जैसी भीतर वैसी बाहर। न कोई पाखंड, न पवित्रता का झंझट, न धर्म की थानेदारी। हम सबके माथे पर चिपकी है हमारी हकीकत। हम सबका धर्म एक है– रोटी का धर्म। हम सबका सत्य एक है– ग्राहक। जो भी आ जाए हमारे आँगन, राजा, रंक, योगी, कोढ़ी. सबको समान भाव से स्वीकार करती हैं हम। वह दुनिया मेरे किस काम की जीजी, जो भेद करे इन्सान इन्सान में'[12] नारी शक्ति संघ को राष्ट्रीय संघ बनाने वाली और सम्पूर्ण स्त्री जाति की सहायता करने वाली संघमित्रा अपनी बहन की दशा देखकर बहुत दुखी होती है। संघमित्रा उन दोनों को अपने घर ले आती है। दिव्यप्रभा की मृत्यु हो जाती है। संघमित्रा बदले की आग में जल रही है। वह अभयमुनि को ढूँढ निकालती है और उसे अपने प्रेम के जाल में फँसाकर उसकी हत्या कर देती है। वह अभयमुनि से कहती है, 'नहीं मुनि, मुझे दुःख है कि मैं तुम्हें माफ नहीं कर सकती क्योंकि तुम सिर्फ मेरे नहीं, तुम पूरी मनुष्यता के गुनाहगार हो। एक धर्मगुरु होकर तुमने ऐसा किया ... इसलिए तुम्हारा अपराध अक्षम्य है मुनि। जो धोखा, जिल्लत और अकथनीय आँसू तुमने दूसरों को दिए, देखो, कैसे लौटकर वे आते हैं तुम्हारे पास। तुम धरती के धब्बे, पृथ्वी की गन्दगी... देखो, कैसे मिटाती हूँ मैं तुम्हें।'[13] अभयमुनि की हत्या करके संघमित्रा आत्मसमर्पण कर देती है। उसे आजीवन कारावास की सजा मिलती है।

अन्त में वह अदालत में स्त्री सशक्तीकरण एवं स्वस्थ समाज के निर्माण का मुद्दा उठाते हुए कहती है, 'मी लॉर्ड, मैंने खुद को समाज सेवा में झोंक दिया था। अपने जीवन के स्वर्णिम समय को मैंने बसन्त देखने में नहीं वरन् औरतों को शिक्षित, स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बनाने में लगाया क्योंकि मुझे लगा था कि मेरी माँ यदि आत्मनिर्भर होती और यदि अपनी ताकत को उन्होंने जाना होता तो सम्भवतः हमें ऐसा जीवन नहीं जीना पड़ता पर छुटकी के असामयिक अवसान के बाद यह पीड़ादायक सत्य मरे समक्ष उजागर हुआ कि मैं जो कर रही हूँ सिर्फ वही पर्याप्त नहीं है। मुझे समझ में आ गया कि गाँधी क्यों इस देश में असफल हुए। मी लॉर्ड, सुगन्ध फैलाने से कहीं ज्यादा जरूरी है दुर्गन्ध के स्रोतों का सफाया करना।

निष्कर्ष :-

'सेज पर संस्कृत' उपन्यास में स्त्री के दमन एवं शोषण की गाथा कही गई है। सदियों से स्त्री का शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक शोषण होता आया है। स्त्री इस शोषण को मूक भाव से सहती आई है। आज की स्त्री भी इस शोषण–चक्र में पिसी जा रही है। कुछ नारी संगठन स्त्री को शक्ति प्रदान करके, उसे संगठित व एकजुट करके पुरुष की दमनकारी प्रवृत्ति के विरुद्ध उसे खड़ा करने का प्रयास कर रहे हैं। स्त्रियाँ भी अपना अबलापन भूलकर नारी कल्याण संस्थाओं एवं संगठनों की छत्र–छाया में सबला बनने का प्रयास कर रही हैं और अपनी अस्मिता को ढूँढ़ने की कोशिश कर रही हैं। स्त्री–जीवन में आए इस परिवर्तन को एक स्त्री की दृष्टि से अनुभव करते हुए मधु काँकरिया ने इस उपन्यास की रचना की है।

संदर्भ सूची :-

1. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, पृष्ठ 51
2. कृष्णदत्त पालीवाल, उत्तर आधुनिकता की ओर, पृष्ठ 139
3. सीमोन द बोउवार, अनुवादक – प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता, पृष्ठ 121
4. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 50–51
5. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 51
6. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 53
7. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 117
8. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 159
9. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 158
10. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 169
11. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 184
12. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 211
13. मधु कांकरिया, सेज पर संस्कृत, राजकमल प्रका ान, प्रा.लि.दरियागंज, नई दिल्ली, 2010 पृ.सं. 226

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 77–81

नासिरा शर्मा के रचनाओं में स्त्री चेतना

रचना चौधरी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, मणिपुर इनटर्नेशनल विश्वविद्यालय।
डॉ. तेलेम कमलावती देवी, निर्देशक
प्रोफेसर एवम विभागाध्यक्ष भारतीय भाषा विभाग (हिंदी) मणिपुर इंटर्नेशनल विश्वविद्यालय।
डॉ. मो. मजीद मियाँ, सह निर्देशक
सहायक अध्यापक, हिंदी विभागाध्यक्ष, श्री अग्रसेन महाविद्यालय।

सारांश :–

स्त्री सचेत हो जाये तो ही रूढ़गत समाज, परम्पराएँ और दृष्टिकोण तभी परिवर्तित हो सकते हैं। लेखिका का मत है– 'वह दिन बहुत करीब है जब समाज स्त्री के प्रति अपने क्रूर व्यवहार को न केवल बदलेगा बल्कि उसके प्रति अपना नजरिया खुला रखने पर भी मजबूर होगा।'[10] अर्थात् नारी यदि सकल्प कर ले तो सब कुछ संभव है, वह सभी दशाओं और दिशाओं का रूख अपनी तरफ मोड़ सकती है, आवश्यकता है तो बस दृढ़ इच्छा शक्ति की। इतिहास गवाह है कि संघर्षों का प्रमाण परिवर्तन ही रहा है जो अवश्य ही होकर रहेगा। आज भी समाज में एक बहुत बड़ा जनभाग रूढ़ और रूग्ण सोच के साथ क्रियाशील हैं। स्त्रियों के सामने उनके अधिकारों की रक्षा एक मूल प्रश्न बनकर सामने खड़ी है। महिला मन में पनपते हुए असन्तोष को लेखिकाएँ अपने लेखन के माध्यम से उसे क्रियात्मक साँचे में ढालती नजर आ रही है। कथाकार नासिरा शर्मा ने अपने जीवन के अनुभवों तथा आस–पास के परिवेश से कथानक गढ़े है जिनका स्वर समसामयिक परिस्थितियों में बदलता गया है। इनके स्त्री पात्र तथा कथानक शोषण से शोषित भी हैं, उनके विरुद्ध भी हैं तथा अपने जीवन मूल्यों के प्रति जागरूक भी हैं।

कुट शब्द :– कहानि, अभिव्यक्त, स्त्री, रूढ़गत समाज, आधुनिक युग संक्रमण, शिक्षा।

प्रस्तावना :–

शिक्षा, बदलते परिवेश और नए विचारों ने वर्तमान पीढ़ी को प्राचीन रूढ़ियों और जड़ परम्पराओं से तोडकर एक नयी विचाराधारा की ओर मोड़ देने का कार्य किया है। ऐसी दशा में रचनाकार अपने लेखन के माध्यम से हमें युग विशेष की परिस्थितियों का अवबोध कराते हैं, जो बहुत कुछ उनके साहित्य के माध्यम से पूरा होता है। हिन्दी साहित्य में महिला कथाकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिनमें 'नासिरा शर्मा' का विशिष्ट स्थान है। इनका लेखन विविधताओं से परिपूर्ण है जिसकी सबसे बड़ी विशेषता है– राष्ट्रीय से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय पृष्ठभूमि को अपने रचनात्मक परिवेश में शामिल करना। साहित्य जगत में इनका आगमन कहानी कला के

माध्यम से ही होता है जिसके जरिए इन्होंने विभिन्न समस्याओं के प्रति समाज का ध्यान आकृष्ट किया है।

चूँकि एक महिला कथाकार होने के नाते लेखिका को स्त्री अनुभूतियों की विशेष पहचान है जिसे कथा–साहित्य के माध्यम से इन्होंने सामाजिक फलक पर प्रस्तुत करने का सहज प्रयास किया है। अपने कथा लेखन के विषय में इनका कथन है– 'मैं तो केवल दो हाथ, दो पैर, दो कान, दो आँख, एक दिल और दिमाग वाले इन्सान को पहचानती हूँ। वह जहाँ भी जिस सीमा, जिस परिधि में जीवन की सम्पूर्ण गरिमा के साथ मिल जाए, वही मेरी कहानी का जन्म होता है।'[1]

लेखिका के अब तक नौ कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें 'शामी कागज', 'पत्थरगली', 'संगसार', 'इब्ने मरियम', 'सबीना के चालीस चोर', 'खुदा की वापसी', 'दूसरा ताजमहल', 'इन्सानी नरल' और 'बुतखाना' प्रमुख है। इन संकलित कहानियों में नासिरा शर्मा ने सभी सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि मुद्दों के साथ–साथ स्त्रियों की यथार्थ दशा, उनकी मानसिक स्थिति तथा अन्तर्द्वन्द्व से भरे जीवन की यातनाओं का अति सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण किया है। नारी पात्रों द्वारा समस्याओं की अभिव्यक्ति कर इन्होंने जड़ मानसिक प्रवृत्तियों पर प्रहार करते हुए भविष्य के तिमिर को मिटाने के लिए उनका उज्ज्वल समाधान ढूँढ़ने का भरसक प्रयास किया है। औरत के परिप्रेक्ष्य में लेखिका का अपना दृष्टिकोण है– 'औरत को लेकर जो संवेदना मेरे अन्दर उपजी थी उसका प्रभाव मुझे समय–समय पर अपने कहे लिखे शब्दों द्वारा होता था कि, औरत अधिक ईमानदार, निष्ठावान, कर्मठ, धैर्यवान और बलिदान करने वाली एक ऐसी जीव है जिसका मुकाबला दुनिया का दूसरा प्राणी नहीं कर सकता है।'[2]

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लेखन करने के कारण नासिरा जी के कहानी पात्रों का चयन देशी तथा विदेशी दोनों ही पृष्ठभूमि को अपनाकर चलता है। चूँकि नारी की संवेदनाओं, उसकी पीड़ा और व्यथा की कोई सरहद नहीं होती और न ही उसका कोई पैमाना है, इसलिए उनकी अनुभूतियाँ आपस में सदैव मेल खाती हैं जहाँ एक देश दूसरे देश से आक्रांत और भयभीत हैं वहीं सामाजिक दृष्टि से स्त्री की अस्मिता भी टूट कर खण्डों में विभक्त हो रही है। ये कहानियाँ और इनके पात्र इस विभाजित होती मानवता की जीवंत दस्तावेज हैं। इनके विषय में नासिरा शर्मा का वक्तव्य है– 'कहानी इंसान की होती है ओर वह पात्र जो मेरे लेखक मन को छू सके, उसकी चेतना को हिला सके अपनी कहानी लिखवाने का दम रखे ऐसे पात्र का देशी या विदेशी होना कोई फर्क नहीं रखता।'[3] महिलाओं की परेशानियों राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही सरोकारों से सम्बन्ध रखती हैं, इसलिए ये कहानियाँ राजनीतिक संज्ञान, समाजशास्त्रीय अध्ययन और मानवीय उत्तरदायित्व की उपज हैं। लेखिका का प्रथम कहानी संग्रह 'पत्थर गली' जो 1986 में प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह की लगभग सभी कहानियाँ मुस्लिम परिवेश की रूढ़िवादी परंपराओं का चित्रण करती हैं। मुस्लिम महिलाओं की पीड़ा और उनके दर्द को संवेदनात्मक अनुभूति की कसौटी पर कसकर उन्हें प्रस्तुत किया गया है। इन्हें पढ़कर यह अनुभव होता है कि, मनुष्य की वास्तविक समस्या धर्म से बढ़कर उसके आपस में उलझे हुए रिश्ते हैं। धर्म–समप्रदाय में बँटकर तो मानवता खतरे में पड़ती है किन्तु रिश्तों में ही यदि मनुष्य बँट जाय तो वह अस्तित्व विहीन हो जाता है श्बावली कहानी की नायिका श्सलमाश का जीवन भी ऐसा ही है। दूसरों को सर्वस्व दे देने पर भी मातृत्व सुख न मिल पाने से वह रूढ़ समाज व परिवार की अवहेलना का शिकार होती है।

'ताबूत' कहानी में समाज की निम्न वर्ग के मुस्लिम परिवार की अविवाहित लड़कियों को अभावग्रस्त

जीवन की नियति के साथ कुत्सित मानसिक प्रवृत्ति के पारिवारिक शोषण का शिकार होना पड़ता है। 'पत्थर गली की कथा' इस संग्रह की उच्चकोटि की कहानी है, जहाँ सामंती परिवेश में स्त्रियाँ अपने जीवन की कुरबानी देती हैं। वेदों और पुराणों में नारी की महिमा का वर्णन है, उसके विविध रूपों का विवेचन है किन्तु 'सिक्का' कहानी हमें वास्तविक सामाजिक सोच से परिचित कराती है कि– नारी वेश्या का रूप तो ले सकती है किन्तु प्रेम करने का अधिकार उसे नहीं है, बल्कि इस रूप में उसका अस्तित्व उस सिक्के के समान है जो एक व्यक्ति से दूसरे के हाथ में जाता रहता है। इस संग्रह की समग्र कहानियों में समाज में पनपी जर्जर मान्यताओं को उकेरा गया है तथा स्त्री जीवन की जटिलताओं उसकी भावनाओं को भाषा का संस्कार दिया गया है। संग्रह के सम्बन्ध में 'डॉ० विजय कुमार राउत' का कथन है– 'एक रूढ़ग्रस्त समाज में नारी जाति की घुटन, बेबसी और उनकी मुक्ति की छटपटाहट का यथार्थ चित्रण इसमें मिलता है।'[4]

सामाजिक, धार्मिक व्यवस्थाओं और उनके ठेकेदारों से आजीज अबलाओं का चित्रण 'संगसार' कहानी संग्रह की कहानियों में मिलता है, जिसमें नायक 'अफजल' स्वेच्छाचारी तो हो सकता है किन्तु नायिका 'आसिया' को दोषी मानकर संगसार होने का दण्ड दिया जाता है। मनुष्य न चाहते हुए भी राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियों का दास होता है– 'दरवाज–ए–कजविन' कहानी की 'मरियम' को भी ऐसी ही परिस्थिति का सामना करते हुए अपनी इच्छा के विरुद्ध जाकर वेश्यावृत्ति का पेशा अपनाना पड़ता है और वह इसलिए क्योंकि औरत का मर्द के खिलाफ जाकर अपने अधिकार के लिए सड़क पर उतरना पुरुष कानून की किताब से बाहर का विषय बन जाता है और ऐसे में नारी जाति पुरुष समाज के हाथ की कठपुतली बनकर रह जाती है।

डॉ० सोनल नंदनूरवाले के शब्दों में– 'मरियम दरवाज–ए–कजविन (नारी मुक्ति केन्द्र) के दरवाजे पर दस्तक देती है।'[5] इस कहानी संग्रह की सभी कहानियाँ राजनीतिक, समाजिक और धार्मिक ठेकेदारों के कुकर्मों से उपजी यन्त्रणाओं का जीवन्त दस्तावेज हैं। भूख की पीड़ा और विस्थापन की मार झेलती महिलाओं की दुःख की कथा 'इब्नेमरियम' कहानी संग्रह की है। मानवीय संघर्षों में अबला जाति की संवेदनाओं का दखल स्वाभाविक है। 'तीसरा मोर्चा' कहानी इसका प्रमाण है। नायिका का कथन ही व्यवस्था के सन्दर्भ में यह प्रश्न करता है कि 'क्या वह हिन्दू है? या मुसलमान या सबसे पहले औरत या सिर्फ औरत ही तब उसे ही क्यों नफरत, घृणा, उन्माद के नाम पर रौंदा जाता है।"[6]

वैधव्य जीवन का निर्वाह तथा प्रेम–विवाह एवं अनमेल विवाह की कठिनाईयों का विवरण हमें 'शामी कागज' संग्रह की कहानी 'पतझड़ का फूल' में मिलता है। यह एक ऐसी कहानी है जो नारी जीवन को आत्मनिर्भर बनने और स्वस्थ मानसिक निर्णय लेने का संबल देती है। 'शामी कागज' की कथा भी एक ऐसा ही मार्ग आधुनिक नारी जीवन के लिए प्रशस्त करती है जिसके परिप्रेक्ष्य में नायिका 'पाशा' का उससे विवाह के लिए इच्छुक 'महमूद' के लिए कथन है कि 'मैं भी कोई शामी कागज थोड़े ही हूँ कि जब जरूरत पड़ी, उसे धोकर दूसरा फरमान लिख दिया।'[7] निश्चय ही यह कथन एक नया दृष्टिकोण पैदा करता है। जरूरी नहीं कि शादी के रंग धुल जाने के बाद अकेली स्त्री अपने जीवन में एकाकी होकर अपने निरर्थक जीवन को सार्थक मार्ग नहीं दे सकती।

एक स्त्री की दूसरी स्त्री संवेदनाओं के प्रति निष्ठुरता का परिचय देती है और जब उसे अपना स्वार्थ नजर आता है वह अपना रंग बदल लेती है ऐसी ही दास्तान को बयान करने वाली कहानी है 'ततईया'। नारी की

पवित्रता के विषय में दूसरी नारी दोहरा मानदण्ड क्यों अपनाती है? इस समस्या से यह कहानी हमें परिचित कराती है। स्त्री के आत्मनिर्भर और स्वाभिमानी स्वरूप का परिचय हमें कहानी 'खुदा की वापसी' से मिलता है। पति–पत्नी के रिश्ते में ऐसी शर्त आ जाये जो उसके जीवन को नारकीय बना दे तो उचित है कि स्त्री भी इनका जवाब सकारात्मक शर्त के माध्यम से दे। नायिका 'फरजाना भी छल का जवाब चतुरता से देती है। 'खुदा की वापसी' संग्रह के विषय में लेखिका का मत है– 'दरअसल खुदा की वापसी की सभी कहानियाँ उन बुनियादी अधिकारों की माँग करती नजर आती है जो वास्तव में महिलाओं को मिले हुए हैं, मगर पुरुष समाज के धर्म पण्डित मौलवी मौलिक अधिकारों को भी देने के विरुद्ध हैं।'[8] नासिरा शर्मा जी ने नारी के अर्न्तद्वन्द्वों का चित्रण तो अपनी कहानियो में किया ही है इसके साथ–साथ समाज में फैले ज्वलन्त मुद्दों को भी अपनी लेखनी का प्रमुख विषय बनाया है। ऐसा ही एक विषय है– भ्रुण परीक्षण के माध्यम से लिंग भेद को बढ़ावा देना। 'अपनी कोख' कहानी का कथानक इस समस्या का चित्रण करता है नायिका 'साधना' पहले तो शादी के नाम पर अपने सपनों की कुरबानी देती है और उसके बाद लिंग भेद की समस्या का सामना करती है। अपने वात्सल्य को दो खेमों में न बाँटकर वह अपनी बेटियों के लिए अपने बच्चे (पुत्र) का गर्भपात करवा देती है। भ्रुण परीक्षण पर आधारित अनुमानतः यह प्रथम कहानी है।

आधुनिक युग की विदुपताओं और विसंगतियों से स्त्री जगत अछूता नहीं है बल्कि वह इनका शिकार होती जा रही है, अनैतिकता अपने चरम पर है जिसमें फँसकर नारी अपने पतन का कारण स्वयं बनती है। 'प्रोफेशन वाइफ', गली घूम गई, कहानियाँ ऐसी समस्याओं का इसका जीवन्त प्रमाण हैं। स्त्री चाहे तो अपनी अन्धी भावनाओं पर विवेक का अंकुश लगाये और अनर्थ के भँवरजाल से बाहर निकलकर अतीत को बिसरा कर वर्तमान में सुनहरे भविष्य का निर्माण करे। नारी उदारता की प्रतिमूर्ति है। मुस्लिम धर्म में बहुपत्नीत्व को वैधता दी गयी है। परिवार की खुशी और वंश की चाहत भी इसका कारण है जिसे स्त्रियाँ सह जाती हैं। वर्तमान युग में यह एक विसंगति है कि पति–पत्नी के मध्य तीसरी महिला का प्रवेश आम बात हो चुकी है। 'बुतखाना' कहानी संग्रह की कहानी 'नमकदान' एक ऐसी ही हृदय विदारक व्यथा है जिसकी नायिका की पीड़ा को देखकर डॉ० सोनल नंदनूरवाले का वक्तव्य है कि 'हालात को बदलते देख अपनी विवशता का ध्यान रख वह परिस्थिति से समझौता करने के लिए विवश हो जाती है।'[9]

इस प्रकार से नासिरा शर्मा के समग्र कहानियों का यदि हम अध्ययन करें तो यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि– इन्होंने समाज में प्रचलित सर्जनात्मक आन्दोलन से हटकर स्वस्थ और सामाजिक चेतना जागरित करने वाली जीवन विषयक दृष्टिकोण को अपनाया है जहाँ स्त्री चरित्रों की भी प्रधानता रही है। स्त्री जीवन कई प्रकार की यातनाओं से गुजर रहा है, उसकी प्रतिक्रिया में मानवता का धर्म क्या होना चाहिए, अपने अधिकारों के प्रति महिलाएँ कितनी सशक्त और सजग हैं और कितनी ही समस्याएँ ऐसी हैं जिनका समाधान उसे प्राप्त नहीं होता है, इन सभी दृष्टिकोणों को लेखिका ने अपने सृजन कार्य में स्थान दिया है। निश्चयपूर्वक यह कहा भी जा सकता है कि इनकी स्त्री–पात्र व्यवस्था का विरोध तो करती हैं किन्तु दायित्वों के निर्वहन के साथ न कि उनसे मुक्त होकर।

निष्कर्ष :-

स्वरूप यह सर्वविदित है कि रूढ़गत समाज, परम्पराएँ और दृष्टिकोण तभी परिवर्तित हो सकते हैं जब

स्त्री स्वयं इनके प्रति सचेत हो जाये। लेखिका का मत है– 'वह दिन बहुत करीब है जब समाज स्त्री के प्रति अपने क्रूर व्यवहार को न केवल बदलेगा बल्कि उसके प्रति अपना नजरिया खुला रखने पर भी मजबूर होगा।' अर्थात् नारी यदि संकल्प कर ले तो सब कुछ संभव है, वह सभी दशाओं और दिशाओं का रूख अपनी तरफ मोड़ सकती है, आवश्यकता है तो बस दृढ़ इच्छा शक्ति की। इतिहास गवाह है कि संघर्षों का प्रमाण परिवर्तन ही रहा है जो अवश्य ही होकर रहेगा। आज भी समाज में एक बहुत बड़ा जनभाग रूढ़ और रूग्ण सोच के साथ क्रियाशील हैं। स्त्रियों के सामने उनके अधिकारों की रक्षा एक मूल प्रश्न बनकर सामने खड़ी है। महिला मन में पनपते हुए असन्तोष को लेखिकाएँ अपने लेखन के माध्यम से उसे क्रियात्मक साँचे में ढालती नजर आ रही हैं। कथाकार नासिरा शर्मा ने अपने जीवन के अनुभवों तथा आस–पास के परिवेश से कथानक गढ़े हैं जिनका स्वर समसामयिक परिस्थितियों में बदलता गया है। इनके स्त्री पात्र तथा कथानक शोषण से शोषित भी हैं, उनके विरुद्ध भी हैं तथा अपने जीवन मूल्यों के प्रति जागरूक भी हैं।

संदर्भ :-

1. शामी कागज, नासिरा शर्मा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2009, पृ० दो शब्द,
2. औरत के लिए औरत, नासिरा शर्मा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2011, पृ० 6,
3. पत्रकार सदन, पृ० 20
4. कहानीकार नासिरा शर्मा, डॉ० विजय कुमार राउत, अमर प्रकाशन, कानपुर, संस्करण–2016, पृ० 21
5. नासिरा शर्मा की कहानियों में नारी विमर्श, डॉ० सोनल नंदनूरवाले, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण–2011, पृ० 168
6. इब्ने मरियम, नासिरा शर्मा, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1994, पृ० 372
7. शामी कागज, नासिरा शर्मा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2009, पृ० 97
8. खुदा की वापसी, नासिरा शर्मा, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, चतुर्थ संस्करण–2018, मूल पृष्ठ।
9. नासिरा शर्मा की कहानियों में नारी विमर्श, डॉ० सोनल नंदनूरवाले, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण–2011. पृ० 143

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 82-86

जीवनानुभवों के आरंभिक पक्ष को उभारती आत्मकथा 'आत्मस्वीकृति'

डॉ. सपना शर्मा, भोध निर्देि ाका, असिस्टेंट प्रोफेसर
प्रीति शर्मा, भोध–छात्रा,
हिन्दी–विभाग, गुरु नानक देव वि वविद्यालय, अमृतसर।

साहित्य के गद्य विधाओं में आत्मकथा अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखती हैं। यह आत्मकथा विधा जीवनी, संस्मरण से मेल खाती हुई भी अपना एक भिन्न अस्तित्व रखती हैं। गद्येत्तर साहित्य में आत्मकथा के साथ–साथ अनेक विधाएं है जो आधुनिक समय में बहुचर्चित एवं प्रसिद्धि लिये हुए हैं जिसमें जीवनी, संस्मरण, डायरी, रेखाचित्र इत्यादि विधाएं हैं।

''आत्मकथा विधा गद्येत्तर साहित्य के अन्तर्गत आती हैं। गद्येत्तर साहित्य में रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी, आत्मकथा आदि विधाएं आती है।''[1]

आत्मकथा में आत्कथाकार स्वयं की जीवनी लिखता हैं और इसमें वह स्वयं के जीवन संबंधी अनुभवों, घटनाओं और अपने जीवन से संबंधित विचारों, बातों का एवं मनोभावों को व्यक्त करता है। लेखक आत्मकथा में सकारात्मक–नकारात्मक विचारों को ईमानदारी से व्यक्त करता है, क्योंकि यह कार्य अधिक कठिन होता है। आत्मकथा एक ऐसी विधा है, जो सच्चाई के आधार पर लिखी जाती है। इसमें लेखक का आत्मप्र ंसा मात्र करना ही एकमात्र कार्य नहीं होता, यद्यपि स्वयं त्रुटियों को भी निःसंकोच होकर पाठको के समक्ष प्रस्तुत करना पड़ता हैं।

''हिन्दी साहित्य को ा में भी आत्मकथा को परिभाशित किया गया है, ''आत्मकथा–लेखक के अपने जीवन से संबंधित वर्णन है। आत्मकथा के द्वारा अपने बीते हुए जीवन का सिंहवालोकन और एक व्यापक पृश्ठभूमि में अपने जीवन का महत्व दिखलाया जाना संभव हैं।''[2]

यहाँ आत्मकथा को जीवन के गहन अध्ययन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

नरेन्द्र कोहली वर्तमान समय के चर्चित कथाकार, नाटककार, निबंधकार, व्यंग्यकार और साहित्य के गम्भीर अध्येता हैं। वह भारतीय अस्मिता और संस्कृति से गहरा संबंध एवं लगाव रखने वाले आधुनिक लेखक है। साहित्यकार का व्यक्तित्व उसके द्वारा रचित साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। इसलिए साहित्यकार के साहित्य तक पहुँचने के लिए उसके जीवन की पूर्व जानकारी हासिल करने की आव यकता होती हैं।

'आत्मस्वीकृति' आत्मकथा की चर्चा करने के पूर्व आत्मकथा के स्वरूप एवं अर्थ समझना आव यक है।

आत्मकथा लेखक के निजी जीवन का ब्यौरा होती है जिसमें लेखक स्वयं जीवन की घटनाओं का क्रमिक वर्णन अपनी आत्मकथा में करता है।

'आत्मस्वीकृति' आत्मकथा मे नरेन्द्र कोहली ने अपनी जीवन रूपी अनुभूतियों एवं अनुभवों को अभिव्यक्त किया हैं। वह आजीवन सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति करने वाले यथार्थवादी परंपरा के कथाकार रहे है। कोहली जी ने व्यक्तिगत जीवन में जो अनुभव किया जो देखा, सुना, जिया उसे अपनी कलम के माध्यम से लेखन का अंग बनाया।

नरेन्द्र कोहली का जन्म 6 जनवरी 1940 ई. को स्यालकोट में हुआ, यह स्थान वर्तमान समय में पाकिस्तान में स्थित हैं। उनके दादा पंजाब के वन–विभाग के हेडक्लर्क थे। दादा का नाम हरकि ानदास और दादी का नाम भाइयादेई था। छोटी दादी उनकी सौतेली दादी का नाम दुगदेवी था। इनके पिता परमानन्द कोहली के कुछ निजी मु कलों के कारण से वह सातवी–आठवीं से आगे नहीं पढ़ सके। उनके दादा ने उनके पिता को स्यालकोट में पुस्तकों और पत्रिकाओं की एक दुकान खोल दी थी। किन्तु वे दुकानदार नही, साहित्यकार बनना चाहते थे। उन्होंने दो–एक कहानियाँ भी लिखी थी, जो उस समय के चर्चित समाचार पत्र में प्रका ित हुई थी। किन्तु वह साहित्यकार नहीं बन सके और न ही दुकानदार।

इस आत्मकथा में नरेन्द्र कोहली के बाल्यकाल से प्रौढ़ावस्था की यात्रा का वर्णन है जिसमें उनके बचपन का वर्णन, कुछ ऐसी स्मृतिया जिनके प्रभाव ने लेखक के जीवन निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

कोहली जी का भौ ावकाल नटखट और भारारती बच्चों के जैसा नहीं रहा था। आरम्भ से वे काफी बीमार रहा करते थे वह सदैव अपनी मां से चिपके रहते थे। जिसका वर्णन उनकी आत्मकथा आत्मस्वीकृति में मिलता है : ''मेरा भौ ाव कभी भी नटखट और खिलंडरे बच्चों का–सा नहीं रहा। आरम्भ में मैं काफी बीमार और रोना बच्चा रहा होऊँगा। भारीर पर फोड़े–फुंसियाँ भी बहुत थी। अधिकां ातः माँ से ही चिपका रहता था। भाक्ति की कमी रही होगी, पर उर्जा की कमी नहीं थी, क्योंकि.....उसे मैंने बिखरने नहीं दिया।''[3]

नरेन्द्र कोहली सदैव अधिक श्रम करने वाले व्यक्ति के रूप में प्रसिद्ध रहे हैं। कोहली के बड़े भाई सोमदेव को उनकी सौतेली दादी ने गोद लिया था। लेखक उन्हें चाचा जी कह कर पुकारते थे। स्वयं वह अपने दोनो भाइयों भूशण और रवीन्द्र तथा माता–पिता के साथ लाहौर में रहते थे।

नरेन्द्र कोहली ने स्वयं जीवन को जिस रूप से अनुभूत किया, उसका अपने साहित्य में अंग बनाया। वह बचपन से ही पढ़ने में रूचि रखने वाले बालक थे। बचपन से ही इन्होंने कई पुरस्कार प्राप्त कर लिए थे। आज के समय वे सुपरिचित लेखक के रूप में चर्चित हैं। इनकी मृत्यु 7 अप्रैल 2021 को दिल्ली में हुई।

नरेन्द्र कोहली एक महान व्यंग्यकार की दृश्टि से समाज के सम्मुख आते है। वह अपनी आत्मकथा के प्रारंम्भ में ही यह व्यंग्य करते हुए कहते है कि ''यदि मेरे किसी भाोधार्थी ने मेरी रचनाओं मे से मेरे जीवन को खोज निकाला होता तो भाायद मुझे आत्मस्वीकृति लिखने की आव यकता न पड़ती।''[4]

'आत्मस्वीकृति' आत्मकथा में वह अपनी नज़र में स्वयं को देखते है कि उनका जीवनानुभाव बहुत ही अलग–अलग ढंग से गुज़रा है पढ़ाई के साथ–साथ लिखने के भौकीन नरेन्द्र कोहली ने अपनी पहली कविता छठी कक्षा में लिखी। उर्दू में जो कक्षा की हस्तलिखित पत्रिका में प्रका ित हुई थी। उर्दू कविता के साथ–साथ उन्होंने सातवीं में एक कहानी लिखी जो प्रका ित न हुई जिससे उन्हें निरा ाा हुई। पुस्तकें खरीदने का भौक

था ही साथ ही पढ़ने का, लिखने का और वह कहते है कि बचपन में कई बार घर से पैसे मिलते तो वह पैसे जोड़–जोड़ कर किताबे खरीद लाते थे।

जिससे उनकी मां नाराज़ होती थी कि खाने पीने के बजाय फालतू रद्दी खरीद लाता है वह कहते है कि ''किसी बच्चे को पैसे दो तो कुछ खाता पीता है, और यह है कि खरीद–खरीद कर रद्दी–कागज़ जमा किया करता है।''[5]

उन्ही दिनों में वह अपने दोस्तो के साथ मिलकर एक पुस्तकालय भी खोलते है जिसमें लड़के गली–मुहल्ले के साथ–साथ और कुछ स्कूल के बच्चे भी उस पुस्तकालय के सदस्य भी बने थे। जम ोदपुर में उनके पिताजी ने एक फलों का काम करना प्रारंम्भ किया था जिसमें पहले वह बाज़ार में पटरी पर बैठा करते थे, फिर एक दुकान ले ली थी। वह कहते है, चौथी से मैट्रिक पास करने तक वह स्वयं अपने भाइयों और पिताजी के साथ पटरी वाली दुकान में बैठा करते थे।

नरेन्द्र कोहली आठवीं कक्षा में पढ़ते थे तब वह अपनी स्मृति से बताते है उन्होंने एक दृ य ऐसा देखा जिसने उनकी जिन्दगी में परिवर्तन किया। वह बताते हैं– ''आठवीं में पढ़ता था, तो पटरी पर की दुकान पर बैठे हुए एक ऐसा दृ य था कि मंडी से आई आमों की टोकरी को उनके पिता जी ने खोला तो कुछ सड़े गले आमों को सड़क पर फैंक देते ताकि आते–जाते प ाु उसे खा ले। पर एक गाय उन सड़े आमों को सूंघकर छोड़ गई थी, एक बकरी उन्हें चाटकर आगे बढ़ गई..... पर तभी एक छोटा–सा काला कलूटा नंगा बच्चा वहां आया। उसकी छाती के पंजर नज़र आ रहे थे और पेट बेतहा ाा फूला हुआ था। उस बच्चे ने उनके सामने बैठ कर सड़े आमों को बड़े स्वाद से खाया था।''[6] यह दृ य देखकर कोहली ने इस किस्से को अपनी एक कहानी में लिख डाला जिसका नाम 'हिन्दुस्तां जन्नतनि ो' है।

वह उस समय की स्कूल चर्चित पत्रिका में प्रकाि ात भी हुई थी। वह अपनी स्मृतियों एवं अनुभवों के माध यम से उस समय की वातावरण एवं स्वयं को द ार्शाते हैं। उन दिनो ''वह अपना लेखकीय नाम 'नरिन्दर कुमार कोहली स्यालकोटी' मानते थे, वाद–विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेने लगे थे। कक्षा में प्रथम आया करते थे, स्कूल में प्रथम स्थान हासिल करना। एजुके ान वीक मनाई जाती थी जिसमें टिस्को के सारे स्कूलों में प्रथम आए–आठवीं, नौवीं, दसवीं, ग्यारहवी–पूरे चार वर्श। स्कूल की ओर से 'कि ाोर दल' द्वारा आयोजित वाद–विवाद प्रतियोगिता में हिस्सेदारी के लिए पुरूलिया गए। वहाँ उर्दू में सर्वश्रेश्ठ वक्ता घोशित भी हुए।

अगले वर्श छपरा गये और बिहार के स्कूली बच्चों में उर्दू में सर्वश्रेश्ठ, लड़कों में सर्वश्रेश्ठ तथा सब वक्ताओं में उन्हें सर्वश्रेश्ठ वक्ता घोशित किया गया। वापस जम ोदपुर लौटने पर के.एम.पी.एम. हाईस्कूल के सारे लड़कों को मैदान में जमा कर उनकी सफलता की घोशणा करते हुए असिस्टेंट हैडमास्टर श्री.बी.पी. श्रीवास्तव ने घोशणा की कि नरेन्द्र कोहली ने सारे पुरस्कार जीते है.....तीन बड़ी–बड़ी ट्राफियां.....बस एक ही नहीं जीत पाए–'लड़कियों में सर्वश्रेश्ठ वक्ता' वाला पुरस्कार।''[7] इन सब उपलब्धियों के कारणों से वह अपनी ही नज़रों में हीरो हो गए। किसी अन्य की उन्हें कोई चिंता नहीं थी।

नरेन्द्र कोहली अपने जीवनानुभवों में अपनी साहित्यिक रूचि होने का श्रेय अपनी बहन को देते है। उस समय उनकी बहन कॉलेज में पढ़ रही थी और उन्होंने 'हिन्दी साहित्य' वैकल्पिक विशय को चयनित किया था। जिसका प्रभाव कोहली पर पड़ा। उस समय वे 'पंत' और 'प्रसाद' के काव्य–संग्रह पढ़ती थी। 'रामचरितमानस'

पढ़ा करती थी, 'रत्नाकर' और 'सूरदास' के कई प्रसंगों को वह उन्हें पढ़ाया करती थी। जिसके परिणामस्वरूप नरेन्द्र कोहली में हिन्दी साहित्य को और गहराई से पढ़ने की रूचि पैदा हुई।

उन्होंने अपने 'हिन्दी साहित्य' विशय चयन से परिवार की कुछ परिस्थितियों का वर्णन भी किया है कि जिसमें उनके भाई, पिताजी नहीं चाहते थे वह साहित्य पढ़े। वह चाहते थे कि वह विज्ञान पढ़े। जिसका उदाहरण वह बताते हुए कहते है– ''मैट्रिक में छहत्तर प्रति ात अंक लेकर वह पास हुए और अनोखी जिद्द कर बैठे कि न वह विज्ञान पढेगा.....न इंजीनियर बनेगा, न डॉक्टर, न वैज्ञानिक.....तब तो बी.ए. करेगा और बी.ए. में गणित न लेकर हिंदी साहित्य पढ़ेगा और अंतः हिंदी में एम.ए. करके हिंदी का अध्यापक बनेगा और खूब लिखेगा।''[8] और ऐसा हुआ भी।

कोहली जी अपने पढ़ने–लिखने के साथ–साथ अनेक गतिविधियों में हिस्सेदारी लेते थे। जिसमें वह प्रथम श्रेणी में आकर गर्व महसूस करते थे।

वह अपनी आलोचनात्मक दृश्टि से स्वयं को देखते हुए कहते है– ''दिल्ली वि वविद्यालय में अध्यापकों के चेहरे की अफसरी उसे खली, सहपाठी–लेखकों की अपेक्षा चुभी, आलोचक वर्ग की उदासीनता ने उसे कोंचा. .....पर पढ़ाई के साथ–साथ कहानियां लिखने से वह बाज नहीं आया। कहानियां लिखे बिना कैसे रहा जा सकता था। एम.ए. हुआ। नौकरी लगी। विवाह हुआ। गृहस्थी के ताने–बाने में उलझा। हारी–बिमारी देखी। थीसिस लिखा। पी.एच.डी हुआ, पर लिखना नहीं छूटा। धीरे–धीरे सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो गया..... लिखना.....लिखना और छपना..... ।''[9]

नरेन्द्र कोहली के जीवन को लेकर विभिन्न लेखको ने अपने मत प्रस्तुत किए है, जिसमें से रमे ा बतरा का मानना है कि नरेन्द्र कोहली : 'लेखक बने ही नहीं बनाए भी' भीर्शक में वह मानते है कि वह स्वयं लेखक बने भी नही और न बनाए गए। पढ़ने–लिखने के साथ–साथ कोहली जी ने अपने विद्यार्थियों को अध्ययन के साथ लिखने के लिए भी प्रोत्साहित किया। इस कार्य के लिए वह प्रत्येक रविवार को अपने ही घर पर एक गोश्ठी का मंचन किया करते थे। इन गोश्ठियों के परिणाम से अनेक लेखकों का निर्माण भी हुआ। कोहली के निर्दे ान में प्रेम जनमेजय, सुभाश अखिल, और हरी ा नवल जैसे लेखकों ने अधिक नाम कमाया और अपने जीवन में तरक्की भी की।

रमे ा बतरा का मानना है ''हरि अनंत हरि कथा अनंता' के सुर में श्री मान नरेन्द्र कोहली को उनकी लेखकीय क्षमताओं के संदर्भ में 'अंनत' कहा जाता है। वर्शों पूर्व वह जम ोदपुर की पृश्ठभूमि पीठ पर लादे हुए दिल्ली आए और दिल्ली वि वविद्यालय में प्राध्यापक हो गए। आज वह अपनी धर्म पत्नी प्राध्यापिका मधु जी और दो बच्चों के साथ चैन की जिंदगी बसा रहे है।''[10] उनका मानना यह भी है कि वह एक प्रसिद्ध कहानीकार, व्यंग्यकार के रूप में चर्चित रहे। वह 'रामकथा' के 'रामायणकार' के रूप में सर्वाधिक प्रचारित और प्रसारित हो गए। उनके साहित्य में अनेक रूप से अप्रतिम कथा–संग्रह, व्यंग्य–संग्रह और उपन्यासों में वह प्रतिश्ठित रहे है। नरेन्द्र कोहली स्वयं कहते है–''जीवन में अच्छी–अच्छी बाते ही याद रहे, यही एक लेखक की सफलता है। इससे मेरा लेखन भी सार्थक होता है।''[11] साथ ही कोहली ने रामकथा का जो वर्णन किया उसमें उन्होंने एक ऐसा नया आयाम प्रदान किया जिसमें ऐसा प्रतीत होता है कि रामकथा उस समय की नहीं बल्कि वर्तमान समय की कथा हो।

इस तरह से हरि जो ी का मानना है। नरेन्द्र कोहली एक अप्रतिम साहित्य–साधक के रूप से प्रसिद्ध हुए। वह कहते है–''कोहली जी से मेरा व्यक्तिगत परिचय 1980 के लगभग हुआ था, तब से आज तक मैंने उन्हें निर्विवाद, दृढ़ नि चयी, निश्कंप निर्बाध, अपने लक्ष्य की ओर चलते हुए ही पाया, यही सिद्धांत मेरे लिए प्ररेणा की 'वस्तु' बना हुआ है। इस वस्तु का थोड़ा अं ा.....उनसे प्रत्येक मुलाकात में 5–10 प्रति ात चुरा लाता हूँ, उन्हें मालूम भी नहीं पड़ता।''[12] उनका मानना है कि कोहली जैसे महान् साहित्यकार जो तत्कालीन पौराणिक संदर्भों की वर्तमान के परिवे ागत परिस्थितियों से जोड़कर उन्हें प्रासंगिक बनाने में अपनी महान् भूमिका निभाते है। वह कोहली के जीवन रूपी वर्णन उपरांत यहाँ तक मानते है कि कोहली ने तपस्या और सिर्फ तपस्या ही की है, जिसके कारण वह मेरे आदर के पात्र सिद्ध होते हैं।

निश्कर्शतः कहा जा सकता है कि किसी लेखक के कृत्तित्व की जानकारी के लिए उसके साहित्य को पढ़कर जानकारी प्राप्त की जा सकती है जबकि लेखक के व्यक्तित्व को समझने के लिए उनके सम्पर्क एवं व्यक्तित्व निर्माण में सहायक लोगों का वर्णन आव यक है। जिसके साथ लेखक ने समय बिताया, मित्रों, संबंधियों, परिजनों आदि द्वारा ही उनकी जीवन संबंधी जानकारी प्राप्त होती हैं। अतः नरेन्द्र कोहली एक महान कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार तथा व्यंग्यकार है। 'आत्मस्वीकृति' आत्मकथा कोहली के सम्पूर्ण जीवन यात्रा न होकर जीवन के आरंम्भिक पक्षों को उभारती हुई आत्मकथा सिद्ध होती है, जिसमें उनका बाल्यकाल बचपन की कुछ स्मृतियां, लेखन कार्य की यात्रा एवं कुछ जीवन संबंधी पहलुओं को उजागर किया है। ये सब होते हुए भी वे अपने समकालीन साहित्यिकारों से भिन्न स्वतंत्र अस्तित्व रखते हैं। साहित्य के योगदान में वह अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कैला ाचन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएं, (नई दिल्ली : तक्षि ाला प्रका ान, 1996), पृ. 45
2. हिन्दी साहित्य को ा, धीरेन्द्र वर्मा, (संपा.), (वाराणसी : ज्ञानमण्डल : दूसरा संस्करण, 1963), पृ. 98
3. आत्मस्वीकृति, नरेन्द्र कोहली, हिन्द पॉकेट बुक्स, 2014, पृ. 7
4. वही से, फ्लैप से।
5. 'एक व्यक्ति नरेन्द्र कोहली', कार्त्तिकेय कोहली, क्रिएटिव बुक कंपनी, पृ. 140
6. वही, पृ. 140
7. वही, पृ. 142
8. वही, पृ. 143
9. वही, पृ. 144
10. वही, पृ. 59
11. वही, पृ. 62
12. वही, पृ. 65

पत्र व्यवहार के लिए पता – Pritti Sharma D/o Vijay Sharma, V/P: Khour, Ward No.6, Distt. Jammu, Teh. Khour, 181203, Jammu, Mob: 7889600091, Email: Prittisharma1234@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 87-93

महिलाएं एवं आर्थिक निर्भरता
(कुमाऊँ मण्डल के विशेष सन्दर्भ)

डॉ. श्वेता चनियाल
सहायक प्राध्यापक, अर्थ ाास्त्र विभाग परिसर अल्मोड़ा,
सोबन सिंह जीना वि ववविद्यालय, अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

शोध सारांश :-

वर्तमान समय में महिलाएं प्रत्येक क्षेत्र में संलग्न है वे क्षेत्र संगठित हो या असंगठित में श्रमिक या कर्मिक के रूप में कार्य करने के साथ–साथ महिला अपने के उद्यम का भी कर रही हैं जो कि पूर्णतः असंगठित क्षेत्र है। ये उद्यम आजीविका का महत्वपूर्ण स्रोत होने के साथ ही परिवार को भी आर्थिक रूप से सहयोग प्रदान कर रहे हैं। किन्हीं स्थानों में सूक्ष्म उद्यम एवं किन्हीं स्थानों पर वृहद उद्यम को भ्रारू करके ये महिलाएं अपने साथ–साथ अन्य लोगों को रोजगार प्रदान करा रही है। प्रस्तुत भोद्य पत्र उत्तराखण्ड के कुमाऊँ मण्डल के जनपद बागे वर के विकासखण्ड कपकोट की महिलाएं जो कि कालीन निमार्ण का कार्य कर रही हैं से सम्बन्धित है जो कि घरेलू स्तर पर कालीन बनाने का उद्यम करके आजीविका प्राप्त करते रही है। प्रस्तुत भोध के माध्यम से स्पश्ट करने का प्रयास किया जा रहा है कि ये उद्यमी महिलाएं अपने आव यकता की पूर्ति हेतु आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयासरत है, उन्हें इस कार्य को निरन्तर बढ़ावा देने की आव यकता हैं।

मुख्य शब्द :- 1. असंगठित क्षेत्र 2. आर्थिक निर्भरता 3. आजिविका 4. पारिवारिक सहभागिता 5. उद्यम।

अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहाँ महिला कार्य नहीं कर रही है अधिकां ा महिलाएं आजकल कहीं न कहीं काम करती है वह घरेलू कार्य करने के साथ घर्नाजन के लिए बाहर भी काम करती है (सोनी : 2022:76) ये महिलाएं पारिवारिक दायित्व के निर्वहन के उपरान्त आजिविका हेतु विभिन्न उद्यमों एवं उद्योगों में संलग्न हैं और आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने के लिए अग्रसर रहती हैं, आत्मनिर्भर कोई नया विशय या भाब्द नहीं है, ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योग के माध्यम से वस्तुओं को बेचकर परिवार का खर्च चलाना ही आत्मनिर्भरता है, (सिंह : 2023 : 54) ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक समस्या भी एक महत्वपूर्ण विशय है। कोई नवीन कार्य भ्रारू करने के लिए सर्वप्रथम माँग पूँजी की व्यवस्था आव यक है। प्रस्तुत भोध पत्र उत्तराखण्ड के कुमाऊँ मण्डल के जनपद बागे वर के विकासखण्ड कपकोट में घरेलू स्तर पर कालीन निमार्ण का कार्य करने वाली 30 महिलाओं का अध्ययन किया गया है जिसमें चयन हेतु दैव पद्धति का प्रयोग किया है ये महिलाएं हस्तसिद्ध कार्य में संलग्न होकर धन अर्जित कर रही है। कालीन निर्माण का कार्य वर्तमान ही नही अपितु प्राचीन समय से ही

किया जाने वाला कार्य है। कालीन भाब्द पुरानी फ्रांसीसी भाब्द "भारी सजाया हुआ कपड़ा" से लिया गया है। भारत में स्वतन्त्रता के समय कालीन निर्यात 3.22 करोड़ रूपये तथा 1950–51 में 5.56 करोड़ रूपया 1960–1970 में 11.69 करोड़ रूपया 1979–80 में 135.38 करोड़ रूपया तथा 2001–02 24 36.13 करोड़ रूपया का निर्यात किया गया (यादव : 2025:54 60–69) कालीन उद्योग दे ा का एक वेहद प्राचीन उद्योग है और मुख्यतः निर्यात से जुड़ा हुआ है। कालीन उत्पादन के प्रमुख केन्द्रों में भदोही, वाराणासी, मिर्जापुर, आगरा, जयपुर, बीकानेर और उत्तराखण्ड, कर्नाबक के कुछ क्षेत्रों और आंध्रप्रदे ा का एल्लुरू भामिल है (ांतमनुः योजना अप्रैलः 2019:75) कालीन की बुनाई प्राचीन कलाओं में महत्तवपूर्ण स्थान रखने के साथ यह ि ाल्प दे ा के ग्रामीण व कस्बों के लोगों को रोजगार दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कालीन का इस्तेमाल कई रूपों मे जैसे फ र्ा पर बिछाने, दिवार पर सजाने इत्यादि कामों में आता है तथा कालीन की बुनाई भी कई प्रकारों से की जाती है विभिन्न रंग व आकृशक डिजाइन वाली कालीन सर्वाधिक प्रचलित है। (इकारामुद्रदीनः 2001ः 01,02) प्रस्तुत भाोध पत्र उत्तराखण्ड राज्य के पर्वतीय सम्माज में बसे जनपद बागे वर से सम्बन्धित है, उत्तराखण्ड वर्श 2000 में उत्तर प्रदे ा से पृथक होकर अस्तित्व मे आया जो कि दो मण्डलों कुमाऊँ मण्डल एवं गढ़वाल मण्डल तथा 13 जनपदों में विभक्त है जिसमें 6 जनपद कुमाऊँ मण्डल एवं 7 जनपद गढ़वाल में आते है। कुमाऊँ मण्डल में जनपद अल्मोड़ा, बागे वर, चम्पावत, नैनीताल, पिथौरागढ़ व उधमसिंह नगर आते है, जब कि गढ़वाल मण्डल के अन्तर्गत जनपद चमोली, रूद्रप्रयाग, पौड़ी गढ़वाल, उत्तरका ाी, देहरादून, हरिद्वारा, टिहरी गढ़वाल जिसमें अधिकतम जनपद पूवर्तया पर्वतीय क्षेत्र में है। अध्ययन क्षेत्र बागे वर नव निर्मित जनपद है, जो कि 15 सितम्बर 1997 को अस्तित्व में आया (http://bageshwar.nic.in) जिसमें तीन विकास खण्ड है विकास खण्ड कपकोट, बागे वर, गरूड़, बैजनाथ हैं।

तालिका संख्या– 01

जनपद बागेश्वर की ग्रामीण जनसंख्या

क्रम सं0	विकासखण्ड	पुरूश	स्त्री	कुल
1	कपकोट	35754	39200	74954
2	बागेश्वर	41374	44825	86199
3	गरूड़ बैजनाथ	30200	35168	65368
4	योग विकासखण्ड	107328	119193	226521
5	वन	102	63	155
6	योग ग्रामीण	107430	119246	226676

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका जनपद बागे वर वर्श 2024, अर्थ व संख्या विभाग बागे वर पृश्ठ संख्या– 10

अध्ययन क्षेत्र विकासखण्ड जनपद बागे वर में चयनीत विकासखण्ड कपकोट पूर्णतया ग्रामीण व पर्वतीय सम्माग है जिसकी जनसंख्या 74954 है जो कि जनपद बागे वर से 25 किलोमीटर की दूरी पर है। कपकोट में घरेलू स्तर पर कालीन निर्माण करने वाली महिलाओं आर्थिक वि लेशण विभिन्न तालिकाओं के माध्यम से किया गया है जिसमें उनकी जाति, आयु, ि ाक्षा, कालीन निर्माण की लागत, प्राप्त वार्शिक आय, बचत व पारिवारिक सहयोग विवरण दिया गया है।

तालिका संख्या – 2

महिलाओं की जातिगत संरचना –

क्रम सं0	जाति	महिलाओं की संख्या	प्रति ात
1	सामान्य	–	–
2	अनुसूचित जाति	18	26.7
3	अनुसूचित जनजाति	12	73.3
4	अन्य पिछड़ा वर्ग	–	–
5	कुल	30	100.00

स्रोत : सर्वेक्षण के आधार पर।

उपरोक्त तालिका के माध्यम से स्पश्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र कुल न्याद र्ा महिलाओं का 26.7 प्रति ात अनुसूचित जाति एवं 73.3 प्रति ात अनुसूचित जनजाति महिलाएं इस कार्य में संलग्न है जो कि इससे आय अर्जित कर रही है। इसमें विभिन्न आयु वर्ग की महिलाएं संलग्न है, जिसका विवरण तालिका के माध्यम से द र्ाया गया है।

तलिका संख्या– 03

महिलाओं की आयु का विवरण (वर्ष में)

क्रम सं0	आयु–वर्गान्तर	मध्यमूल्य x	महिलाओं की संख्या (f)	fx
01	18–28	23	03	69
02	28–38	33	10	330
03	38–48	43	08	344
04	48–58	53	04	212
05	58–68	63	05	315
06	कुल	–	N = 30	∑fx- 1270

स्रोत– सर्वेक्षण के आधार पर

$$\text{औसत आयु} = \frac{\sum fx}{N}$$

$$= \frac{1270}{3\ 0}$$

$$= 42.3$$

$$= 42 \text{ वर्ष}$$

उपरोक्त तालिका के माध्यम से स्पश्ट हो रहा है कि विकासखण्ड कपकोट में 18 से 65 वर्श के मध्य की महिलाएं उद्यमी कार्य कर रही है जिनकी की औसत आयु 42 वर्श है जो कि दन व कालीन बनाने के कार्य संलग्न है, प्राथमिक स्तर पर महिला उद्यमियों के भौक्षिक विवरण को भी तालिका के माध्यम से स्पश्ट किया गया है।

तालिका संख्या-04

महिलाओं की शैक्षिक स्थिति का विवरण

क्रम सं0	भौक्षिक स्थिति	महिलाओं की संख्या	प्रति ात
01	प्राथमिक स्तर	23	76.67
02	उच्च प्राथमिक स्तर	03	10.0
03	हाईस्कूल	–	–
04	इण्टरमीडिएट	–	–
05	स्नातक	04	13.33
06	परास्नातक	–	–
07	कुल	30	100.00

स्रोत – सर्वेक्षण के आधार पर।

उपरोक्त तालिका स्पश्ट कर रही है कि ये महिलाए ि ाक्षित है जिसमें सर्वाधिक प्रति ात प्राथमिक स्तर का है जबकि अन्य भौक्षिक स्तरों पर कम प्रति ात पाया गया है।

कालीन निर्माण का कार्य अत्यन्त मेहनत से किया जाने वाला अत्यन्त आकर्शक कार्य है जिसमें श्रम के साथ समय भी काफी लगता है। ये महिलाएं वर्श में 3, 4 या 7 कालीन का निर्माण कर पाती है ये महिलाएं कई वर्शों से इस कार्य में संलग्न है। सर्वेक्षण के माध्यम से ज्ञात हुआ है कि 10, 20, 30, 40 से इस कार्य को कर रही है। महिलाओं द्वारा एक वर्श में कालीन निर्माण में लगायी जाने वाली लागत को भी तालिका संख्या–04 के माध्यम से द ार्शाया गया है। उक्त तालिका में एक वर्श आने वाली औसत लागत को द ार्शाया जा रहा है।

तलिका संख्या-05

कालीन निर्माण की वार्षिक औसत लागत (रूपये में)

क्रम सं0	लगत वर्गान्तर (हजार में)	मध्यमूल्य x	महिलाओं की संख्या (f)	fx
01	10000–20000	15000	05	75000
02	20000–30000	25000	03	75000
03	30000–40000	35000	05	175000
04	40000–50000	45000	17	765000
05	50000–60000	55000	–	–
06	कुल	–	N = 30	∑fx- 1090000

स्रोत– सर्वेक्षण के आधार पर

$$\text{औसत वार्षिक लागत} = \frac{\sum fx}{N}$$

$$= \frac{1090000}{30}$$

$$= 36333.00$$

तालिका संख्या 5 के माध्यम से स्पश्ट हो रहा है कि ये महिलाएं वर्श में रू0 36000 की धनराि ा की औसत लागत से कालीन का निर्माण करती है जिसे ये स्थानीय बाजारों तथा अन्य स्थानों में बेचकर आय प्राप्त करती है। इनकी एक वर्श में औसत आय को भी तालिका संख्या 05 से द ार्शाया गया है।

तलिका संख्या- 06

कालीन निर्माण की औसत वार्षिक आय (रूपये में)

क्रम सं0	आयु–वर्गान्तर	मध्यमूल्य x	महिलाओं की संख्या (f)	fx
01	10000–20000	15000	–	–
02	20000–30000	25000	–	–
03	30000–40000	35000	04	140000
04	40000–50000	45000	21	945000
05	50000–60000	55000	01	55000
06	60000–70000	65000	02	130000
07	70000–80000	75000	–	–
08	80000–90000	85000	02	170000
09	कुल	–	N = 30	∑fx- 1440000

स्रोत– सर्वेक्षण के आधार पर

$$\text{औसत वार्षिक आय} = \frac{\sum fx}{N}$$

$$= \frac{14\ 4\ 0000}{30}$$

$$= \text{रू0– } 48000$$

उपरोक्त तालिका के माध्यम से स्पश्ट हो रहा है कि एक वर्श में औसतन रू0 48000 तक ये महिलाएं आय प्राप्त कर रही है। सर्वेक्षण के माध्यम से ज्ञात हुआा है कि ये महिलाए बचत भी करती है परन्तु जिसका प्रति ात कम पाया गया है जिसे तालिका के माध्यम से द ार्शाया गया है।

तालिका-07

बचत करने वाली महिलाओं की संख्या

क्रम सं0	बचत	महिलाओं की संख्या	प्रति ात
01	हॉ	19	63.3
02	नहीं	11	36.7
03	कुल	30	100.00

स्रोत – सर्वेक्षण के आधार पर।

ये महिलाएं आर्थिक रूप से अपने परिवार को सहयोग दे भी रही है पारिवारिक दायित्वों को पूर्ण करने के उपरान्त ये महिलाएं उक्त कार्य में संलग्न रहती है। इस कार्य के लिए परिवार का सहयोग भी इन्हें कम मात्रा में प्रदान होता है।

तालिका संख्या-08

परिवारिक सहयोग करने वाली महिलाओं की संख्या

क्रम सं0	परिवारिक सहयोग	महिलाओं की संख्या	प्रति ात
01	हॉ	27	90.00
02	नहीं	03	10.00
03	कुल	30	100.00

स्रोत– सर्वेक्षण के आधार पर।

उपरोक्त तालिका के माध्यम से स्पश्ट हो रहा है अपने द्वारा अर्जित आय व बचायी जाने वाली धनरा ि ा को भी ये पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन करने पर सहयोग करती है। सर्वेक्षण के माध्यम से ज्ञात हुआ कि इन्होंने किसी प्रकार की सरकारी योजना से लाभ प्राप्त नहीं किया है अपने कार्य को आगे बढ़ाने या उसे बढ़े पैमाने पर कार्य को करने के लिए धनरा ि ा की आव यकता है जिसके लिए ये प्रायः ऋण लेते है जो कि कुछ उद्यमी द्वारा 50 हजार से 1 लाख के मध्य लिया गया है ये महिलाएं वर्तमान में सूक्ष्म स्तर पर कार्य कर रही है। इनके इस कार्य को जहाँ प्रोत्साहन व धनरा ि ा की आव कता है वहीं इन्हें कालीन निर्माण के लिए प्रचार व प्रसार की भी आव यकता है। उत्तराखण्ड का यह जनपद दूरस्थ इलाके में होने के कारण यहाँ पर अपने उत्पाद को बेचने के लिए उत्तम बाजार का भी आभाव है, केवल स्थानीय बजारों मे ही इनकी पहुँच हो पाती है जिसके कारण उत्पाद का उचित दाम भी इन्हें प्राप्त नहीं हो पाता है।

निष्कर्ष :-

निश्कर्श रूप में यह कहा जा सकता है यदि कालीन निर्माण के इस कार्य को इस क्षेत्र मे सरकारी प्रयासों द्वारा व योजनाओं का सुचारू रूप से कार्यान्वित करके किया जाये तो इन महिलाओं के कालीन निर्माण के कार्यो को प्रोत्साहित किया जा सकता है जिससे इनकी कला व कौ ाल का भी विकास होगा और ये आर्थिक रूप से सबल हो पायेंगी और अन्य क्षेत्रों के सम्पर्क में आकर अपने कार्य को उन्नत रूप से करके और अधिक आय

अर्जित करके आर्थिक रूप से पूर्ण निर्भरता कर सकेंगी। महिलाओं के उद्यम हेतु सरकार के द्वारा विभिन्न योजनाओं का संचालन किया जा रहा है जिनका लाभ उठाकर ये कालीन निर्माण के इस कार्य को वृहद रूप देकर महिला उद्यमिता के श्रेणी पर ला सकती है। जागरूकता का आभाव, ि ाक्षा की कमी, प्रचार व प्रसार की कमी, पूँजी अभाव के कारण यह कालीन निर्माण का कार्य इस क्षेत्र तक सीमित हो गया है इसे विकास के पथ पर अग्रसर करने की परम आव यकता है जो कि महिलाओं के विकास के साथ क्षेत्र के विकास का भी आयाम सिद्ध होगा।

सन्दर्भ साहित्य :-

1. सिंह पूनम कुमारी (2023) "आत्मनिर्भर भारत में महिलाओं की भूमिका" अनामिका पब्लि ार्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लिमिटेड नई दिल्ली, पृश्ठ संख्या – 55
2. सोनी भूमी (2022) "भारत में कार्य ील महिलाएं" आक्सब्रिज बुक्स कम्पनी, पृश्ठ संख्या – 76
3. यादव भूपे ा कुमार : (2025) "भदोई जनपद के विकास पर कालीन उद्योग का प्रभाव एक भौगोलिक अध्ययन" भाोध ग्रन्थ वी0 बी0 एस0 पूर्वाचल वि वविद्यालय जौनपुर (उत्तरप्रदे ा) पृश्ठ संख्या –54,60,69
4. भाांतमनु; (2019 अप्रैल) योजना पत्रिका मे प्रकाि ात लेख "प्रतिभावना हाथों का जादू – हस्ति ाल्प कलाकारों का स ाक्तीकरण", पृश्ठ संख्या – 15
5. इकरामुद्दीन (2001) भाोध ग्रन्थ "भदोई मिर्जापूर क्षेत्र में कालीन उद्योग" का ी हिन्दू वि वविद्यालय वाराणसी (उत्तर प्रदे ा) पृश्ठ संख्या – 01, 02
6. जनपद बागे वर सांख्यिकीय पत्रिका वर्श 2024 अर्थ व संख्या विभाग उत्तराखण्ड।
7. सांख्यिकीय पत्रिका कुमाऊँ मण्डल अर्थ व संख्या वर्श 2022, विभाग कुमाऊँ मण्डल उत्तराखण्ड। https://bageshwar.nic.in
8. बागे वर जिला विकिपीडिया – https://bh.wikipedia.org
9. Brief industrial profile of district Bageshwar Government of India, Ministry of MSME "mico small and mediam enterprises" Nainital Uttarakhand .

Dr. Shweta Chaniyal
Almora, Uttarakhand
Mob. No. 9084510220

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 94–99

PROPERTY RIGHTS OF MUSLIM WOMEN UNDER MUSLIM LAW

Tabassum Baig,
Dr. Farhat Khan
Professor, Dean, School of Law, GHRUA
G. H. RAI SONI UNIVERSITY.

ABSTRACT :

This paper examines how the Quran, particularly Surah AN-Nisa (4:7, 11,12) empowers Muslim women and illustrate that it does not discriminate between male and female.

Historically, women lacked property rights, but the Quran radically changed this by guaranteeing them specific inheritance shares.

Chapter 4 verse 7 establish the fundamental rights for all individual male and female, to inherit, giving women financial independence. Importantly, ch:4 verse 11,12 provide detail allocation that also reveal instances of gender equality. For example, both parents receive an equal one sixth 1/6 share if the deceased has children Ch 4 verse 12

This nuanced approach shows Islam's balanced justice. The life of Prophet Muhammed's wife, Khadijah, powerfully reinforce this. As a wealthy, independent businesswomen who was the first lady to support Islam, Khadija embodies female empowerment and leadership. Her story, alongside Quranic text, proves that Islam champions women's dignity and rights demonstrating a framework that is far from discriminatory.

KEYWORD : Muslim women, property rights, Islamic law, women's economic empowerment, inheritance, Quran.

INTRODUCTION :

Women are often treated unfairly in many cultures and societies around the world. This unfair treatment can be seen in many areas of life, including in families, Women are often left out of important family decision, such as inheriting property or wealth (Hapis,Ali 2018) However in Islam the Quran and Sunah clearly state that women are entitled to a share of their family's property and wealth.

The issue of women's property rights has historically been a complex and often contentious one across diverse legal traditions. In pre–Islamic Arabia, women typically possessed limited or no rights to inheritance, often being considered chattels themselves.

However, the advent of Islam, particularly through the revelations in the Quran, significantly transformed this landscape.

LITERATURE REVIEW :

This literature review examines foundational Quranic verses within chapter 4 verse 7, 11, 12, to demonstrate the explicit provisions for Muslim women's property rights. The analysis will highlight not only the general guarantee of inheritance but also crucial instance where these verses mandate gender equality in inheritance of Islamic inheritance law.

The Fundamental Right to inheritance: Surah An-Nisa, verse 7 :

The bedrock of women's property in Islam is unequivocally established in An-Nisa, verse 7 :

In Quran chapter 4 verse 7 Allah swt says :

For men is a share of what the parents and close relatives leave, and for women is a share of what the parent and close relative leave, be it little or much -an obligatory share. :

This verse fundamentally shifted the prevailing societal norms by explicitly granting both men and women a right to inherit from their deceased relatives, irrespective of the estate size. It directly countered pre- Islamic customs that largely excluded women from inheriting, declaring their shares as "legally determined "and thus divinely mandated and non -negotiable. These provisions laid the groundwork for women's independent ownership of property within the Islamic legal framework.

Thus, Surah Nisa Ch : 4 Verse 7 states that Islam secured and granted a limited number of shares for women. However, the exact portion of inheritance allocated to women is not clear in this verse.

Detailed Allocations and Instances of Equality :

Chapter 4 Surah An-Nisaa, verse 11 :

Surah An-Nisa, verse 11 provides more detailed instructions concerning inheritance shares, particularly for children and parents :

Allah instruct you concerning your children ,for the male ,what is equal to the share of two females. But if there are only daughters, two or more, for them is two thirds of one's estate. And if there is only one, for her is half. And for one's parent, to each one of them is a sixth of his estate if he has child. But if he had no children and the parent (alone) inherit from him, then for his mother is one third. And if he has brothers and sisters, for his mother is a sixth, after any bequest he may have made or debt.Your parents or your children-you know not which of them are nearest to you in benefit.

these shares are an obligation imposed by Allah swt. Indeed, Allah is ever Knowing and Wise.

While this verse includes the well-known allocation where a male child inherits double the share of a female child -a provision often understood in the context of men's traditional financial responsibilities within the Islamic household—Those who misunderstand Islam claim that Islam does injustice to women in terms of inheritance, How could it be fair to grant the son a portion equal to two portion of that of the female, although they are sisters and brothers of the same parents. But the fact is that Islam does not injustice to women, IN fact Islam allows women the rights of inheritance not only as a daughter but also as a wife or mother :

Equal Share for Parents :

This verse precisely states : "And for one's parent, to each one of them is a sixth of what he leaves." This provisions clearly dictates that when a deceased individual leaves behind children both the father and the mother are each entitled to an identical one-sixth (1/6) share of the inheritance. This scenario explicitly demonstrate that the Quran does not universally apply a differentiated male-to-female ratio. Instead, in this specific and common familial context, it mandates absolute equality between male and female parents as inheritors.

Spousal and Specific Sibling Inheritance :

Chapter 4 Surah An-Nisaa, Verse 12

Verse 12 of Surah An -Nisa further elaborate on inheritance shares, addressing spouses and a specific type of sibling inheritance :

And for you (husband) is half of what your wives leave if they have no child. But if they have a child, for you is one forth of what they leave, after any bequest they may have made or debt. And for the wives is one fourth if you leave no child. But if you leave a child ,then for them is an eight of what you leave, after any bequest you (may have) made or debt. And if a man or women leaves neither ascendents nor descendent but has a brother or sister, then for each one of them is a sixth. But if they are more than two, they share a third, after any bequest which was made or debt, as long as there is no detriment (caused) (This is) an ordinance from Allah, and Allah is knowing and Forbearing.

Islam secured the right to inheritance for a wife to her husband. This verse outlines the fixed shares of wives (one -fourth or one-eight depending on the presence of children) and husbands (half or one-fourth). Significantly, it also presents another instance of gender equality concerning in a particular situation :

Equal Share for Siblings in "Kalalah "scenario, where a deceased person leaves "no direct heir "(i.e., no parents or children). In this specific context, the Quran stipulates :

"And if a man or a woman leaves no direct heir but has a brother or a sister, then for each one

of them is a sixth. But if they are than two, they are sharers in a third "

This provisions clearly mandates that in the absence of direct lineal heirs, brothers and sisters inherit equally from the deceased's estate. If there are multiple such siblings, they collectively share one -third, which is divided equally among them regardless of gender.

UNENCUMBERED OWNERSHIP :

CHAPTER 4 SURAH AN NISAA VERSE 32 :

Chapter 4 verse 32 : And do not wish for that by which Allah has made some of you exceed others. For men is a share of what they have earned, and for women is a share of what they have earned." and ask Allah of his bounty. Indeed, Allah is ever, of all things, knowing.

This is the primary message. It advises against coveting or envying what Allah has bestowed upon others in terms of wealth, status, abilities or any other blessings.

This crucial part emphasizes that both men and women will receive a share based on their own efforts, deeds, and conduct. It promotes the idea of individual responsibility and reward for one's work.

Unencumbered property ownership for women is necessary; a financial independency is most important. In India, Muslim women generally have the unencumbered ownership of property under Muslim personal law, which is governed by Personal Law (Shariat) Application Act 1937. This means they can own, manage and dispose of their property as they wish, largely without needing consent from male family members like Husband or father and children. Absolute ownership, no concept of "joint family" property, unlike some other personal laws in India the concept of coparcenary property, Muslim law does not recognize a joint family property where sons have a birthright. According to Islamic law, these properties are absolutely for hers.

FROM QURANIC MANDATES TO JUDICIAL REALIZATION :

A CASE STUDY ANALYSIS OF MUSLIM WOMEN'S PROPERTY RIGHTS :

Building upon the foundational understanding established in the preceding literature review regarding the Quranic mandates for Muslim women's property rights and the jurisprudential interpretation thereof, this section delves into the practical application and judicial enforcement of these rights. While the literature review elucidated the Divine origins and comprehensive scope of these entitlements- encompassing inheritance, absolute ownership and the efficacy of these provisions is best understood through the lens of legal precedent.

This analysis of landmark cases is crucial for achieving the study's objective of investigating the mechanism and real-world impact through which these divinely ordained rights can be fully realized. By examining significant judicial pronouncement, this section aims to illuminates how courts have

upheld the true spirit and intent of Islamic law, identifying instances where deviation from Quranic principles have been challenged and corrected.

These cases not only exemplify the judiciary role in affirming women's economic empowerment but also provide valuable insights into the persistent socio-legal challenges that necessitate continued vigilance and informed application of Muslim Personal Law´"

LANDMARK CASES :

1) Imam Bandi vs Mutsaddi :

This case dealt with to property rights of a Muslim women as a legal heir. The court recognized the right of a Muslim women to inherit property and emphasized her entitlement to a share in the ancestral property.

2) **Bushra Ali vs Irfan Ahammed & Ors :**

This case reinforced the principle that Muslim women have the rights to inherit property according to Islamic law and the Indian Succession Act.

3) **Mohd. Abdul Ghani v. Fakhr Jahan Begum :**

In this case, the court held that a Muslim widow is entitled to inherit a share of her husband's property, and that her right to inherit is not affected by the fact that she is not a child -bearing women. These cases have helped shape the law on property rights and inheritance for Muslim women in India, emphasizing their entitlement to a share in ancestral property and protection of their rights under Islamic law and the Indian legal system.

Challenges faced by Women :

Despite legal provisions all women in India often face practical challenges in realizing their property rights due to :

1) Patriarchal interpretation :

Traditional and patriarchal interpretations of religious texts by community leader and families.

2) Lack of Awareness :

Limited awareness among women themselves about their legal rights.

3) Social Pressure :

Social pressure to forgo their share in favour of male relatives.

CONCLUSION :

CHAPTER 4 SURAH AN -NISA, VERSES 7, 11 , 12 :

Surah An-Nisa's verses 7, 11,12 collectively form the cornerstone of Muslim women's property rights under Islamic laws. They not only fundamentally guaranteed women the right to inherit -a revolutionary concepts at the time – but also ensure their independent ownership and full control

over their inherited wealth.

Crucially, a close textual analysis of these verses reveals that the 2:1 inheritance ratio for male -to -female children is not a universal principal applied across all familial relationship. Instead, the Quran meticulously specifies conditions under which Muslim women are granted explicitly equal shares to their male counterparts. This is evident in the clear mandate for equal inheritance for both parents when the deceased leaves children (4:11) and for equal shares among siblings in the absence of direct lineal heirs (4:12)

Understanding these nuances is essential for a comprehensive and accurate appreciation of the justice, balance, and equity in Islamic inheritance principles for women.

REFERENCES :

1. **Quran**
2. Dr. Paras diwan's Family law (11th edition)
3. The Holy Quran (Ali, A.Y. Trans). Islamic Propagation Centre International.
4. Pearl, D (1979) A textbook on Muslim law London : Routledge
5. Aqil Ahmad, Muhammad Law, central Law Agency.
6. Asghar Ali Engineer, Women's Rights in Islam.
7. Dr. Harun Rashid Kadri; Rights of Muslim Women.
8. Women In the shade of Islam: Abdul Rehmaan Al Sheha
9. Women 's Rights to Inheritance and Property Ownership in Islam: Najmun Khatun, Research Article, July 27 2023
10. Women Rights to Inheritance in Muslim Family Law: An Analytical Study. International journal of Islamic Business and Management.
11. **Sir Dinshaw Fardunji Mulla:** "Principles of MAHOMEDAN LAW "
12. **Dr. S. R. Myneni :**" Muslim Law & Other Personal Laws (Family Law)

tabassumbaig76@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 100–103

महिला आत्मकथाकारों के आत्मकथा में स्त्री शोषित जीवन

प्रा. डॉ. गायके मुंजाजी मारोतराव
राजर्षी शाहु महाविद्यालय, परभणी, महाराष्ट्र।

प्रस्तावना :–

साहित्य में समाज का प्रतिबिंब दिखाई देता है। साहित्यकार लेखक, कवि, नाटककार समाज में घटित प्रसंग के स्वानुभूती तथा आँखो देखी और कही सुनी बातों पर आपने विचार अंलकारीत शब्दों का प्रयोग करते हुऐ रचना का निर्माण करता है। साहित्यकार समाज का एक घटक होता है। इसीकारण साहित्यकार समाज में घटीत घटना प्रसंगो से अपने आपको अलग नहीं रख सकता।

हिंदी साहित्य लेखन मे पुरुष के साथ साथ स्त्रीयों द्वारा लेखन की परम्परा प्राचीन काल से आधुनिक काल तक चली आ रहीं है। पुरुषों से अधिक स्त्री संवेदनशील और सहनशील होती है। महिला ही समाज में सबसे ज्यादा शोषीत रही है। जब महिला खुद शोषित होने के कारण महिलाओं की आपबीती और संघर्ष तथा होनेवाले अत्याचार को सही न्याय देने का कार्य कर सकती। महिला लेखिका आपने स्वंय अनुभूती का यथार्थ चित्रण करते है।

साहित्य की अनेक विधा है जिनमें से स्वंय अनुभूती तथा आपबीती को व्यक्त करने की सशक्त विधा आत्मकथा मान जाती है। आत्मकथा मे स्वंय के अनुभूती को बताया जाता है। आत्मकथा का कथानक यथार्थ होता है।

उद्देश :–

महिला आत्मकथाकारों हे माध्यम से शोषीत जीवन को उजागर करना। महिला आत्मकथाकारो की आपबीती के माध्यम से समाज का वास्तविक रूप प्रकट करना। महिला आत्मकथाकारों ही अनुभूतीपूर्ण रचना के आधार पर सामाजिक संवेदना को समझना।

विषय प्रतिपादन :–

महिला आत्मकथाकारों की आपबीती के आधार पर स्त्रीयों पर होने वाले अत्याचार शोषण का लेखा–जोखा कुछ एक महिला आत्मकथाकारों के माध्यम से अध्ययन करना है। जिसमें अजीत कौर मैत्रेयी पुष्पा, सुशीला टाकभौरे, कृष्णा अग्निहोत्री आदी प्रमुख है।

जब शोषितों को आपणा शोषण हो रहा है यह समझता है। तब वह शोषण का विरोध करना सुरू करता है। इसी अध्याय की सुरुवात महिला आत्मकथाकारोंने की उसे विस्तार से समझना। महिलाओं पर शारीरिक, वैवाहिक, सामाजिक, धार्मिक, परम्परा के आधार पर अत्याचार किये जाते है। इस बात को अजीत कौर पंजाबी

आत्मकथाकार अपने 'कुडा–कबाड' 'खानाबदोश' आत्मकथा में अपनी कैदनुमा संघर्षपूर्ण जीवन की आपबीती व्यक्त करती है। 'कुडा–कबाड' आत्मकथा स्त्री के संघर्षपूर्ण जीवन की व्यथा है। अजीत कौर का बचपन एक सुशिक्षित और आर्थिक दृष्टि से संपन्न डॉक्टर परिवार में बिता फिर भी बचपन में ही स्त्री–पुरुष लिंग भेदभाव की शिकार रही तथा लडकी होने के कारण पढाई तथा परिवार मे भाई से कम सुविधा और पाबंदी जादा ऐसा भेदभावपूर्ण व्यवहार को झेल चुकी है। अजीत कौर बचपन से ही दुय्यम और हिंनताभाव को अपने सीने मे दबा बैठी है। बाहर घुमने किसी से बातचीत करने से मनाई घर में कैद जीवन से त्रस्त थी। बचपन से ही पढाई मे रुची थी इसी कारण घरवालों से छुपकर शिक्षा और साहित्य लेखन को जीवीत रखा। बलदेव नामक प्राध्यापक से प्यार करती पर उससे बलदेव शादी नही करता। मजबूरन पिता व्दारा डॉक्टर से शादी करा दी जाती है। सुहागरात के दिन ही पती का चक्कर किसी और लडकी के साथ पता चलता। तब से पति के प्यार से वंचीत रहती। पति व्दारा अजीत कौर को प्रताडीत किया जाता है। पती व्दारा घृणा, तिरस्कार प्राप्त और वैवाहिक सुखोसे वंचित रखा जाता। पती–पत्नी संबंधो में संघर्ष होता रहता क्योंकि अजीत कौर को दोनों ही लडकियाँ होती है। परिवार को वारीस लडका चाहिये था। पुरुषी मानसिकता की शिकार अजीत कौर होती रही है। परिवार में उसे कोई प्रेमपूर्ण व्यवहार नहीं करता। पति के घर में कुडा–कबाड जैसी अवस्था में जी रही थी। आखिरकार घर छोडने पर मजबूर होना पडा।

'खानाबदोश' इस आत्मकथा में बडी बेटी कैंडी का विदेश मे जलकर मर जाना और स्वार्थपूर्ण पुरुषो की मानसिकता का अनुभव कथन इसमे किया है। ना पति का प्यार मिला ना बेटी का प्यार, बस बेबस और प्यार को तरसना आदी जीवन संघर्ष करती अजीत कौर साहित्य लेखन का कार्य करती हुई दिखाई देती है। अंत में अजीत कौर ओमा नामक पुरुष के साथ रहती है। वहीं पर भी प्यार कम और दु:ख दर्द जादा मिला। स्त्री सम्मान नहीं मिलता यही दर्दनाक शोषण का चित्र किया गया है।

मैत्रेयी पुष्पाजी एक साधारण से घर में पली बडी हुई है। पिता के चले जाने के बाद परिवार का बोझ माता कस्तुरी पर आ गया। घर चलाने के लिए जो संघर्ष माता को करना पडा मैत्रीयी जी ने आँखो देखा। पुरुषों के गिद् सी नजरों से मैत्रेयी अपने आपको जादा दिन तक बचा नहीं पाती। वह और पुरुषो की शिकार होने से पहले शादी कर पुरुषो के संरक्षण में जाना चाहती है। इसी कारण माँ मैत्रेयी की शादी करा देती लेकिन मैत्रेयी का पती संभोग के समय ही शारीरिक संबंध रखकर उसकी इच्छाओं तथा अकांक्षाओं को अनदेखी करता है। मैत्रेयी पती का प्रेम और संपूर्ण शारीरिक सुख चाहती तब, पती उसे शक की नजर से देखता है। पती–पत्नी के बीच तनावपूर्ण और संशययुक्त जीवन बिता दिखाई देता है। पती से अतृप्त जीवन व्यथा को अपने आत्मकथा 'कस्तुरी कुंडल बसै' और 'गुडिया भीतर गुडिया' में अभीव्यक्त करती है। मैत्रेयी को शादी गुड्डी–गुडियों का खेल सा लगता है। मैत्रेयी पुष्पा के अंदर दो नारियाँ जीती हुई दिखाई देती है। जो एक लेखिका और पत्नी इनमें चल रही कश्मकश भरा जीवन मैत्रीयी का रहा है।

सुशीला टाकभौरे जी का जन्म निछले जाती व्यवस्था और पिछली बस्ती मे हुआ है। सुशीला टाकभौर जी समाज व्यवस्था व्दारा नकारे गये ऐसे समाज में जीवन बीता है। बचपन से ही वर्ण व्यवस्था, जाती व्यवस्था और शूद्र–अतिशूद्र इस चक्रव्यह में फंसा दिखाई देती है। सुशीला जी को बचपन से ही हिनतापूर्ण जीवन मिला है। जहाँ स्त्री को किसी भी प्रकार की आजादी नही थी। ऐसे समय में वह अछुते समाज से है और उसमें स्त्री जीवन

बडा संघर्ष पूर्ण रहा है। बचपन से ही सुशीलाजी को पढाई के प्रति लगाव दिखाई देता है। इसी कारण वह बी. ए. तक की शिक्षा पुरी करती है। पिताजी और भाई शादी की बात घर में करती तब सुशीलाजी अपने पती के सपने देखते हुऐ कहती "मेरे सपनो का शहजादा जरूर आयेगा, वही मुझे प्यार देगा। कोई बडा नेकदिल इनसान होगा जो मुझसे विवाह करेगा" ऐसा सपने देखनेवाली को अपने से अठराह साल बडे पुरुष के साथ अनमेल विवाह करना पडा। क्योंकी सुशीलाजी की आर्थिक स्थिती संपन्न नही थी। सुशीलाजी को शरद, पिंकी, मोहिनी नामक संतान है।

'शिकंजे का दर्द' सुशीला टाकभौरे जी की आत्मकथा है। जिसमें एक पिछडे अछुते समाज के स्त्री की संवेदना, दर्द को उजागर करती है। लोगों से मांगकर झुठा खानेवाले समाज में स्त्री सभी की भोग की वस्तू मानी जाती रही है। ऐसे नारी की पीडा को 'शिकंजे का दर्द' इस आत्मकथा में अभिव्यक्त किया है। सुशीला जी पढी–लिखी और नौकरीपेशा स्त्री होने के बावजूद भी उसे पती व्दारा और सास ननंद व्दारा प्रताडीत किया जाता रहा है। नारी को नारी व्दारा ही प्रताडणे का दर्द सुशीलाजी को जादा दिखाई देता है। इस आत्मकथा में सुशिलाजी नारी के विकास में नारी ही रुकावट होती यह दर्शाती है। उसी के साथ सुशीला जी ये बताती की इस जातीय व्यवस्था तथा वर्णव्यवस्था का निर्माण सवर्णां ने किया पर इस व्यवस्था को और मजबूत करने का कार्य दलीत पिछडी जाती की उच्च–नीच जाती व्यवस्था ने किया क्योंकि एस.सी. संवर्ग में अनेकों जाती आती है। इन जाती में भी श्रेष्ठता और कनिष्ठता का भाव इन्ही पिछडी जाती के लोगों ने आज तक बरकरार रखने से जाती व्यवस्था को समाप्त नही कर पाये है। यही दर्द इस आत्मकथा में सुशीलाजी टाकभौरे ने किया है।

कृष्णा अग्निहोत्री आर्य समाजी ब्राह्मण परिवार से थी। ब्राम्हण सवर्ण समाज से होने पर भी स्त्री पर होनेवाले अत्याचार कम नही होते। स्त्री उपभोग की वस्तू माननेवाले पुरुष प्रधान समाज का वास्तविक और यथार्थ चित्र कृष्णा अग्निहोत्री जी ने अपने आत्मकथा 'लगता नही दिल मेरा' में किया है। इस आत्मकथा में बचपन में माँ के प्यार को तरसती कृष्णा जीवन गाथा रही है। बचपन से जवानी के दहेलीज पर कदम रखते समय तक रिश्तेदारों, पडोसी, नौकर व्दारा शारिरीक शोषण की शिकार कई बार हुई। कृष्णा दिखने मे सुंदर थी। कृष्णाजी का विवाह सत्यदेव अग्नीहोत्री के साथ हो जाता। पती सत्यदेव कृष्णा के सुंदरता के कारण सदैव संदेह शक करता रहता। परिणाम कृष्णाजी को पति व्दारा मार–पीट, गालियाँ खानी पडती थी। कृष्णाजी को पती व्दारा वैवाहिक जीवन का सुख कभी नशीब नही हूँआ। सत्यदेव व्दारा मारपीट के साथ बलात्कार का भी अनुभव होता रहा।

त्रासदी पूर्ण जीवन से तंग आकर पती को छोडकर अकेली रहने का निर्णय लेती। तो अकेली और पती व्दारा छोडी औरत समाज में पुरुषों व्दारा प्रताडना की शिकार होती रही है। अकेली औरत समाज के भेडियों से बचने के लिए एक पुरुष के सहारे जाते हुए शादी करती। वहीं पर भी उस पुरुष का कृष्णा के जिस्म की हवस पूरी हो जाती तो वह पुरुष कृष्णा को छोड देता है। 'लगता नहीं दिल मेरा' इस अर्थपूर्ण शिर्षक के माध्यम से समाज में स्त्री कौन से भी जाती व्यवस्था से हो वह अखिरकार पुरुषों व्दारा शोषीत होती रही है। यही संदेश हमे आत्मकथा देती है।

निष्कर्ष :-

भारतीय सामाजिक व्यवस्था पुरुष प्रधान रही है। पुरुषो की समप्रभुता होने से सहज रूप नारी को दुय्यम

स्थान पर रखा गया। अपनी श्रेष्ठता को बरकरार राखने के लिएघि नारीयाँ पर अनेकों पाबंदीयाँ आयी। इन पाबंदीयों में स्त्री अपने आपको परम्परा के नाम पर बंदिस्त कर बैठी। पुरुषों के साथ घर की बडी औरत अपने श्रेष्ठत्व को बनाये रखने के लिए अपने से छोटे नारी पर अत्याचार करती रही है। इसी कारण नारीयों पर होनेवाले अत्याचार समाप्त नही हो पा रहे है। नारी को अपने उत्थान की पहल खुद करनी होगी। महिला आत्मकथाकरों के आत्मकथा से भारतीय समाज की पुरुषी मानसिकता और स्त्री–पुरुष लिंग भेदभाव के कारण समाज के शरीर का एक अंग आज भी अपाहिज दिखाई देता है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. हिंदी की महिला आत्मकथाओं का समाजशास्त्रीय अनुशीलन : डॉ. दिपक खिल्लारे
   प्रकाशन : अतुल प्रकाशन कानपूर, संस्करण– प्रथम 2016.
2. कुडा–कबाड, खानाबदोश–अजीत कौर, किताबघर प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली।
   प्रकाशन : 1991, 2001
3. कस्तुरी कुण्डल बसै, गुडिया भीतर गुडिया, मैत्रेयी पुष्पा– राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2002, 2008.
4. शिकंजे का दर्द– सुशीला टाकभौरे– वाणी प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली प्रकाशन, वर्ष –2011.
5. लगता नहीं दिल मेरा– कृष्णा अग्निहोत्री, सामयीक बुक्स दरियागंज नई दिल्ली प्रकाशन, वर्ष 2010.

मो. नं. 8888918971

munjajigayake@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 104–116

A.D.R. Mechanism in Resolving Matrimonial Dispute

Adv. Mrunal Ghate, Research Scholar
Dr. Farhat Khan, Research Guide
Professor & Dean School of Law GHRU Saikheda, G. H. Raisoni University Saikheda.

ABSTRACT :

Alternative Dispute Resolution (ADR) has become an increasingly popular way to resolve family law disputes, offering a less adversarial and often more cost-effective approach to traditional litigation. This report examines the challenges and opportunities associated with alternative dispute resolution in the context of family law. This brief highlights that, although ADR presents some challenges in family law, the opportunities it provides for more personal, effective and amicable solutions make it a valuable option for many disputants. Addressing the issues through appropriate regulation, support systems and training can improve the efficiency and fairness of out-of-court dispute resolution in family law.

Matrimonial disputes, due to their sensitive and personal nature, frequently extend beyond mere legal rights into emotional, social, and cultural realms. While traditional litigation offers formal justice, it is often adversarial, time-consuming, and emotionally taxing for the parties involved. Conversely, Alternative Dispute Resolution (ADR) methods such as mediation, conciliation, arbitration, and negotiation provide flexible, confidential, and less confrontational options for resolving family conflicts. This study critically analyzes the use of ADR in matrimonial disputes, concentrating on its legal framework within the Indian judicial system, the function of Family Courts, and the judicial rulings of the Supreme Court and High Courts that emphasize mediation in matrimonial matters. Additionally, it investigates the challenges associated with implementing ADR—such as power imbalances between spouses, cultural obstacles, lack of awareness, and issues of enforceability—while also highlighting its benefits in terms of preserving relationships, lowering litigation costs, and facilitating prompt justice

- **INTRODUCTION :**

Alternative dispute resolution (ADR) refers to a process that provides parties with alte rnative ways to resolve disputes. In family law, ADR includes processes such as mediation, a rbitration and collaboration. This process is designed to provide a fairer, more efficient and m ore flexible way to resolve disputes than through litigation. Family law often addresses perso nal issues such as child custody, property division, and spousal support. Litigation can be stre ssful and result in outcomes that may not be in the best interest of all parties involved, especia lly the children. ADR offers an approach to dispute resolution that emphasizes collaboration, communication and consensus.

Family disputes are often filled with emotion, which makes it difficult for the parties to engage constructively in ADR processes. Arbitrators and arbitrators must carefully navigate this dynamic to facilitate productive discussions.

In some cases, there is a significant power imbalance between the parties, such as in situations involving domestic violence or financial control. This imbalance can undermine the integrity of the ADR process and the voluntariness of the agreements reached.

Many people are unaware of ADR options or may have misconceptions about their effectiveness. This can lead to litigation, which they may see as a more authoritative method of resolution.

Agreements concluded through ADR processes must be legally enforceable. Legal compliance and court recognition of these agreements can be difficult.

Although ADR can be cheaper than litigation, costs can still be expensive for some parties. In addition, access to qualified ADR professionals may be limited, especially in rural or underserved areas.

ADR processes encourage cooperative problem solving and can lead to more amicable solutions. This is particularly useful in family law, where ongoing relationships and shared parenting are common.

ADR allows parties to tailor solutions to their needs and circumstances, rather than the court imposing a one-size-fits-all solution.

ADR can significantly reduce the time required to resolve disputes compared to the often lengthy court process. This can provide faster relief and stability for families in transition.

ADR processes are usually private, while court proceedings are public. This confidentiality can protect the privacy of the parties and any children involved.

By focusing on cooperation and communication, ADR can help reduce the adversarial nature of family disputes, leading to better long-term relationships and outcomes for all involved.

In conclusion, although ADR in family law disputes has some challenges, its potential benefits

make it a valuable tool for more humane and effective dispute resolution. Understanding these challenges and opportunities is critical to effectively integrating ADR into family law practices and improving outcomes for families in conflict.

- **OBJECTIVES OF THE STUDY :**
- To understand and identify various Governments' laws, rules and tools used for Alternative Dispute Resolution so that to find its challenges and opportunity.
- To find out the tools of Alternate Dispute Resolution by examined critically.
- To assess and evaluate the usefulness of ADR methods.
- To understand if ADR is a particularly useful or not.
- To understand alternative dispute resolution options and their locations.
- To review and identify potential gaps and inconsistencies in existing rules and practices.
- To learn more about the various precautions a court must take with ADR methods.
- **LITERATURE REVIEW :**

The 1984 Act is part of a trend of legal reforms affecting women. The researcher familiarized himself with the literature related to the research work. Here are non-exhaustive examples of some of the more important literary sources.

- The study, written by P. K. Bandopadhya and published in the Central Indian Law Quarterly Journal in 1993, examines how Rajasthan's family courts operate. According to the survey, Ajmer, Jaipur, and Jodhpur family court judges and litigation are having issues. The research also looked for the causes of family law. Finding out how long mediation and mediation led to dispute resolution, as well as whether attorneys' roles in family courts are helpful, are also significant study goals.
- It is evident from V. G. Rangnath's research that Indians are not unfamiliar with ADR. Panchayat resolution was a significant factor in resolving family conflicts. The creation of family courts in India is a topic of extensive debate. The necessity of counselling is also emphasized by the author. The plans call for family courts to have more resources, personnel, and knowledge of the laws currently in place regarding women and children. Furthermore, it offers services like free legal aid, educational opportunities, and health care, among others.
- Namita Singh contends that a thorough examination of family courts' actual operations and their ability to address The author makes the point that although many courts are devoid of advisers, these courts offer apathetic advisory and agreement services. The author also highlights the fact that the material laws do not require any modifications. Furthermore, there are a few issues with the 1984 Act. A restraining order may be issued by the court to stop violence or to evict abusive spouses. A family is not defined by the 1984 Act.

- Dispute resolution techniques were a key concern for all legal systems, according to Joseph Jasmine10. They function within the framework of the law, in its shadow, or outside of it. In order to identify alternative dispute resolution, this working paper aims to quantify the various forms of dispute resolution mechanisms. The justifications put forth for ADR mechanisms are examined critically in order to assess the validity of the ADR process. It follows the evolution of ADR, highlighting the Indian experience in particular. It aims to select the claim that alternative forums developed in India will develop from alternative forums.
- The author of a piece that appeared in The Hindu Daily emphasizes that family reconciliation is a prerequisite for any kind of reconciliation. The author stressed how arguments within families have an impact on society as a whole. Long-term solutions for the general harmony and tranquillity of society can be obtained through their successful resolution through conciliation or mediation. The author comes to the conclusion that more family courts must be established in order to employ ADR. However, there isn't the infrastructure to recognize this, particularly in the context of a family conflict.
- The fifth chapter includes a significant case study that outlines the rules that apply in the court as well as the composition and operation of family courts. The second chapter describes the real reasons behind domestic conflicts, the total number of cases that are pending in court, the reasons behind delays, the number of cases that were resolved between 1999 and 2003, and how the Family Court in Varanasi operates in terms of support services, if any are available.
- Vandana Kumar attempted to identify the reasons behind court proceedings' delays and offer corrective actions to strengthen the system in her paper. The number of cases has increased, there are too many judges compared to the population, state government delays, and inadequate court infrastructure are some of the causes. The primary causes also include the absence of computer records, the infrequency of their deletion, the role of attorneys and judges, the intricacy and rigidity of procedural laws, and the rotation of seats. Corrective action was suggested as a constructive strategy for all parties involved; a shift system is required to fill open positions and create newones. There should be no encouragement for disputes to arise between the parties; the hearing should be scheduled with expert advice; the hearing and decision should have a set time limit; delays should be minimized; and references to forums for alternative dispute resolution should be made.
- Utsav Mukherjee made a comparison of Australia, the United States, and India's family courts. In his article, the author pointed out that all domestic relationships are covered by the broader jurisdiction of American family courts. As a result, family courts, which are set up in various states in accordance with various legal standards, handle family matters. The Supreme Court and the federal government are not authorized to bring legal action in family court. He berated American family

courts for their resource allocation, lack of coordination during litigation, and delays brought on by legal disputes. The Family Law Act of 1975 allowed for the establishment of the Family Court of Australia, a federal court, as the author pointed out. It is a unique court that hears cases pertaining to family law. This jurisdiction addresses a range of applications related to matrimonial matters in Australia. This court has more authority to grant annulments of marriage and divorce as well as to decide cases involving contact, residence, alimony, and property.

- **In 1919, Reginald Heber Smith published Justice and the Poor :-** Reginald Heber Smith was a Boston Legal Aid Society director by happenstance. His 1919 article focused mostly on law and ethics. He explained how the impoverished in the US were not allowed to access the courts at the time. He attempted to demonstrate how the US had fallen short of giving the impoverished equal justice. He placed a strong emphasis on preserving the social order by giving the impoverished access to legal representation at no cost to them and streamlining court procedures. According to Reginald Heber Smith, justice needs to be served because of this appalling situation. He asserts that someone in poverty cannot attend court.He claims that because a poor person cannot access the court system unless he hires an attorney and deposits funds to cover the cost of the appeal, justice is purchased and not available to the underprivileged.
- **India's Ancient Past, by R. S. Sharma, Oxford University Press, 2005 :-** The author of this book covered the beginnings and development of empires, administration, and civilizations. It gives a thorough overview of early Indian history. The author has discussed the administrative structures of the Guptas, Central Asian states, and the Mauryan era. He also gave a brief overview of recent business, commercial, and development initiatives linked to research.
- **V.D. Mahajan, Reprint Edition, Ancient India 557, S. Chand & Company PVT. LTD, New Delhi, 2015 :-** The Vedic literature, the later Vedic civilization, the age of sutras and Dharam Sastras, the epic age, Kautalyas Arthasastra, Asoka's reign, the Mauryan administration, the Mauryan judicial system, jails, welfare states, Sakas, the Kushan Empire, the Gupta Empire, the Joint Family System during the Gupta period, the Cholas, etc. are all extensively covered by the author.
- MP Jain, Outlines of Indian Legal and Constitutional History, Lexis Nexis, Butterworths, Wadhwa, 6th Edition, Reprint 2009; the author has explained his cooperation relations, highlighted their contributions to the development of the Indian legal system, and arranged the various phases of the judicial system based on his brief knowledge. The author made reference to a number of court procedures. He talked about English law prior to independence. He also talked about the legal system's shortcomings and absence.
- Durga Das Basu, The Indian Shorter Constitution, Butterworths, Wadhwa, Lexis Nexis, 14th

Ed., 2009: Nearly all of the Supreme Court's rulings on constitutional jurisprudence have been incorporated by the author. It is a book with two volumes. It includes a thorough explanation of the goals of free legal aid (Article 39A) and the protection of life and liberty (Article 21), as well as the Supreme Court's guidance in achieving these goals.

- Handbook of Arbitration, Mediation, and Other ADR Techniques: An Anthology of Keynote Addresses, Articles, and Cases, International Center for Alternative Dispute Resolution, New Delhi, 2008:- This book includes articles on a variety of ADR topics written by well-known individuals, including the then-President of India, Dr. Manmohan Singh, the then-Prime Minister of India, Dr. H. R. Bhardwaj, the then- Union Law and Justice Minister and President of ICADR, T.K. Viswanathan, the then-Union Law Minister, and judicial luminaries, including the then-Chief Justice of India, Justice K.G. Balkrishnan, Justice V.N. Khare, Justice Y.K. Sabharwal, Justice

R.C. Lahoti, Justice S. B. Sinha, Justice A.R. Lakshmanan, Justice Ashok Bhan, Justice Dalveer Bhandari, Justice Madan B. Lokur, Justice R.V. Ravindran, Justice

A.K. Sikri, Attorney Jonathan Hugh Mance, Attorney General; Jagannadha Rao; Mr.

K.K. Venugopal; Dr. Abhishek u Singhvi; Justice ManjuGoel; Justice Arden DBE;

T.K. Viswanathan. Significant rulings from the Indian Supreme Court are also cited in the handbook.

- Nayan Joshi (2019) Kamal Publishers, New Delhi, Fast and Fair Trial:-An outline of the accused's and prisoners' rights to a prompt and impartial trial has been provided by the author. The author has covered a wide range of relevant subjects, including bail, fair trials, prosecution and investigation, and expedited trials. The author has cited every pertinent case law.
- J. C. Goldsmith, ADR in Business, Kluwer Law International, 2006; authored by Arnold Ingen-Housz, Gerald H. Point on. The writers conducted a critical analysis of the many ADR procedures used globally explains the methods established by the Netherlands, Belgium, and other countries, as well as the dispute resolution systems of Asian nations, the United States, Great Britain, and Africa. This book is actually a compilation of ADR issues and practices from various nations and cultures.

RECENT SCENARIO ON ADR :

- **Incidence of Adverse Drug Reactions in Indian Hospitals: A Systematic Review of Prospective Studies :**

Authors : K. Patel, Tejas; B. Patel, Parvati

Source : Current Drug Safety, Volume 11, Number 2, 2016,

Pages 128-136(9)

Publisher : Bentham Science Publishers

This systematic review evaluated the factors influencing hospital admissions in the Indian population as well as the impact of leading against adverse events (ADRAs) and hospital-acquired adverse events (ADRIs). Electronic databases detailing adverse reactions were searched by two independent investigators. The incidence of ADRAs and ADRIs was reported as median (interquartile range, IQR) due to high heterogeneity. We conducted a subgroup analysis of effect according to the features of the studies that were included. For the incidence of fatal adverse events, a meta- analysis using the generalized inverse variable method and a random effects model was feasible. The studies that were included also looked at risk factors for negative outcomes. For analysis, we employed "Graph Pad Prism version 6.0" and "Review Manager software version 5.0". 77 thoroughly evaluated references were narrowed down to 21 prospective studies. ADRIn and ADRAd had respective median incidences of 2.85% (IOR: 1.25 to 3.93%) and 6.34% (IQR: 3.36 to 16.37%). A high effect was found in the subgroup analysis for studies conducted in multidisciplinary groups, elderly age groups, intensive monitoring for more than a year, and intensive care units. A fatal adverse event occurred in 0.08% (95% CI: 0.00–0.15%) of cases. Three significant risk factors for unfavorable outcomes were age, gender, and receiving multiple therapies. The side effects for hospitalized patients are severe. Their occurrence could have been caused by multiple factors.

- **Underreporting of adverse drug reactionsChallenge to pharmacovigilance in IndiaTandon,**

Vishal R.; Mahajan, Vivek; Khajuria, Vijay; Gillani, ZahidAbout the AuthorIndian Journal of Pharmacology 47(1): pp 65-71, Jan-Feb 2015. | DOI: 10.4103/0253- 7613.150344

The aim of the study was to evaluate the degree and contributing factors to the underreporting of adverse drug reactions (ADRs) in India.

Materials and procedures: For the purpose of pharmacovigilance, a retrospective observational cross-sectional prospective questionnaire analysis was conducted to determine the nature and frequency of side effects.

Results : There were ninety ADR Monitoring Centres (AMC) in operation in India at the time of this report. Indian AMC's operating percentage was 56.45%. Our centre submitted 48,038 individual safety reports via Vigi Flow in a given month. Over the course of the three years, 3,024 adverse events were reported in total. There were

80.08 reports on average each month. Of all adverse events, 66.13% were accounted for by active surveillance, compared to 33.86% by spontaneous reporting ($P < 0.0001$). 76.05% of all reports came from the outpatient department (OPD), and 23.94% came from within ($P < 0.0001$). Department of Medicine (33%) is the highest, followed by Breast Diseases (13.49%) and Oncology

(19.27%). 16.20% of OPD cases were associated with monitoring pharmacological side effects.

Private medical schools, remote, sub, and regional hospitals, as well as surgeries on the eyes, ears, nose, and throat, did not have any negative effects. Based on the clinical picture, biochemical examination, and diagnostic tools, the rates of adverse event detection were 84.33%, 14.57%, and 1.09%, respectively ($P < 0.0001$). According to $P < 0.0001$, the percentages of graduates, registrars, consultants, and nurses were 72.65%, 6.58%, 16.56%, and 4.19%, respectively. Monthly average of AEs reported by PG students in pharmacology was 5.61. The most frequent causes of UR were workload, lack of training, lethargy, indifference, uncertainty, complacency, and ignorance of the Pharmacovigilance Program of India (PvPI). Graduate students' ability to communicate side effects was impacted by significant academic events, tests, thesis and summary submission deadlines, and other factors.

In summary, UR is a concerning PvPI. To increase ADR reporting, several steps must be taken.

REMARKS OF LITERATURE REVIEW :

- Although ADR offers many opportunities for cost savings, time efficiency, better relationships, tailored solutions and confidentiality in family law disputes.
- It also faces problems such as power imbalances, lack of legal guarantees, varying quality of practitioners, resistance to adoption and limited numbers applicability in certain situations.
- Addressing these challenges requires continued development of ADR processes, practitioner training, and public education to maximize the benefits of ADR in family law.
- **LITERATURE GAP :**
- ADR offers significant opportunities to improve the resolution of family law disputes, offering advantages such as lower costs, privacy and more amicable solutions.
- However, challenges such as power imbalances, implementation problems and the need for expert intermediaries must be addressed.
- Filling the identified research gaps is critical to improving the effectiveness and acceptance of alternative dispute resolution procedures in family law.
- **RESESARCH PROBLEM :**
- ADR, or alternative dispute resolution, is the umbrella term for a variety of techniques used to settle disputes outside of the traditional court system. ADR has limited discovery procedures compared to court litigation. This can make it difficult to gather all relevant information, particularly in cases involving hidden assets or financial misconduct.

Alternative dispute resolution in family law has a number of issues that can make it less effective, despite its potential advantages. In addition to the numerous difficulties that alternative

dispute resolution (ADR) in family law cases brings, including power disparities, high levels of emotion, and inconsistent practitioner caliber, ADR also provides significant advantages, including cost effectiveness, time management, flexibility, confidentiality, and relationship preservation. ADR's efficacy and appeal in settling family law disputes can be enhanced by addressing the issues through focused instruction, training, and assistance, which will ultimately help litigants and the legal system as a whole. In addition to offering significant benefits like cost effectiveness, time management, flexibility, confidentiality, and relationship maintenance, alternative dispute resolution (ADR) in family law disputes presents a number of challenges, including power imbalances, emotional intensity, and inconsistent practitioner quality. ADR's efficacy and appeal in settling family law disputes can be enhanced by addressing the issues through focused instruction, training, and assistance, which will ultimately help litigants and the legal system as a whole.

- **HYPOTHESIS OF THE STUDY :**

H1 : ADR is an opportunity for family disputes and not only a challenge. H2 : ADR is a challenge to solve disputes of family not an opportunity.

The hypothesis of this research is that ADR offers significant opportunities for more efficient and amicable resolution of family law disputes, but addressing the associated challenges is necessary to ensure fairness and efficiency.

SCOPE :

Enhancing training standards for mediators and arbitrators in family law could address issues of inconsistency in service quality

- **RESEARCH METHODOLOGY TOOLS AND TECHNIQUES :**

The study that is being suggested is a doctrinal study. This will entail an examination of pertinent laws, rules, guidelines, practices, regulations, and so forth. The effectiveness of alternative dispute resolution (ADR) methods as a specific mechanism to lower the number of pending cases is not well supported by empirical data.

Data will be gathered from secondary sources, including government publications, books, e-books, reports, articles, legal publications, jurisprudence, and webliography, among others. The Supreme Court, Bombay High Court, Wardha Nanded and Gadchiroli District Courts, National Law Academy, Bhopal, Maharashtra Judicial Academy, Uttan Thane, and Sardar Vallabhbhai Patel National Police Academy, Hyderabad (formerly known as IPS Training Academy), all have a variety of libraries and e-libraries available. S.T.M. The study also made use of Jaipur National University, Nagpur University, SRTM Nanded University, Narayanrao Chavan College of Law, and Seedling School of Law and Governance.

Based on this, trustworthy data will be gathered from secondary sources using doctrinal research methodology in order to validate the study's hypothesis. Selections from books, articles, reports, and jurisprudence will be helpful in highlighting the inadequacies in the courts' overall out-of-court dispute resolution practice. An analysis of the practices of various Supreme Courts and Supreme Courts will be conducted as part of a thematic non-empirical study to validate the outcomes of the chapter.

- **RESEARCH AREA/LIMITATIONS -**
- ADR often has limited discovery procedures compared to court litigation. This can make it difficult to gather all relevant information, particularly in cases involving hidden assets or financial misconduct.
- Family law cases often involve high levels of emotional stress, which can affect parties' decision-making abilities. Emotions like anger, guilt, or fear may prevent constructive negotiation or cause one party to make concessions against their best interests.
- Some family disputes, such as those involving complex property or custody arrangements, may be too intricate for ADR processes like mediation or arbitration to resolve effectively.
- Cultural differences and language barriers can affect the effectiveness of ADR, especially if the mediator or arbitrator lacks cultural sensitivity or understanding of the parties' backgrounds.

9. CHAPTER SCHEME OF THE THESIS :

Apart from declaration, certificate and acknowledgment related initial part, and the last part on various kinds of references, the present thesis is divided into 9 Chapters. They are as under

Chapter I : Introduction :

- Problem Statement.
- Review of Literature
- Rationale of study
- Aims and Objectives of research
- Hypotheses
- Research Methodology and Sources of Data Collection
- Chapter Scheme

Chapter II : Evolution of ADR in India :

- Introduction
- ADR Mechanism during ancient period
- ADR during the system of Trade-Guilds
- ADR during different periods

- ADR in post-independence period
- Adaptation of ADR institutions across the World
- Conclusion

Chapter III : Effective ADR methods in India :

- Mediation
- Lok-Adalat & Cases refer for Lok Adalat
- Arbitration
- Conciliation
- Conclusion.

Chapter IV : ADR Rules, Regulations, Laws & Schemes in India :

- Constitutional Law of India
- The LSA Act, 1987
- The AC Act and SCLSCR, 1996
- CPC (July 2002 amendment)
- CP – ADR & Mediation Rules, 2006
- NALSA (Lok Adalat) Regulation, 2009
- **Contracts and Agreements :**
- The object of Commercial Courts Act
- Impact of enactment and recent scenario
- Conclusion

Chapter V : Statistical Information of ADR :

- National Lok Adalat dated 08.02.2020
- ADR and Mediation statistical Information
- Statistics of Legal Services Clinics from April, 2019 to March, 2020

Chapter VI : Implementation of ADR with Problem in India :

- Implementation of ADR in India
- Barriers and suggestions to overcome
- Conclusion

Chapter VII : Conclusion, Findings, Criticism and Suggestion :

- Conclusion
- Findings
- Results

CONCLUSION :

The comprehensive analysis indicates that Alternative Dispute Resolution (ADR) methods, especially mediation and conciliation, are remarkably effective in addressing matrimonial conflicts where emotional, psychological, and relational factors take precedence over mere legal considerations.

Indian courts have progressively acknowledged the significance of consensual resolutions, requiring pre-litigation mediation in family disputes to promote either reconciliation or amicable separation.

Although arbitration is generally less appropriate for such delicate issues, mediation has surfaced as the most suitable ADR instrument, harmonizing legal entitlements with emotional recovery.

Nonetheless, the effective implementation of these methods necessitates institutional backing, skilled mediators, gender-sensitive strategies, and heightened awareness among parties involved in litigation.

Enhancing the structure of Family Courts, merging professional counselling with mediation, and ensuring the enforceability of agreements can bolster the credibility of ADR in matrimonial conflicts.

In conclusion, ADR should not be perceived as a replacement for formal justice; rather, it should be regarded as a supplementary approach that aligns legal solutions with social cohesion, ensuring that justice is not only administered but also perceived as equitable, compassionate, and restorative.

REFERENCES :

BOOKS :

1. Bhat, I. (2018). Law and Social Change in India. Eastern Book Company.
2. Sivakumar, R. (2017). Family Law in India: Theories and Practices. Oxford University Press.
3. Kumar, M. (2020). Alternative Dispute Resolution: What it means and how it works in India. LexisNexis India.

JOURNAL ARTICLES :

1. Menon, N.R. (2015). "ADR Mechanisms in Family Disputes: A Socio-Legal Study in India." Journal of Indian Law and Society, 6 (1), 45-68.
2. Sharma, A. (2019). Mediation in Family Disputes: Legal Framework and Practice in India. Indian Journal of Family Law, 11(2), 101-124.
3. Patel, S. (2021). "Challenges of Implementation of ADR in Family Law: Indian Scenario." Journal of Alternative Dispute Resolution, 5(3), 89-112.

REPORTS AND GOVERNMENT PUBLICATIONS :

1. Law Commission of India. (2009). Need for Family Courts in India: A Survey. Report No. 237. Government of India.
2. Department of Justice and Justice. (2013). Annual Report on Family Courts and Alternative Dispute Resolution in India. Government of India.

ONLINE RESOURCES :

1. National Academy of Justice. (2016). "ADR Mechanism Training Module for Family Judges." Available at: NJAIN.
2. Nalsar University of Law. (2020). "ADR in Family Law: New Trends and Practices." Available: Nalsar ADR.

CASE STUDIES :

1. Joshi, R. (2018). A Case Study on the Effectiveness of Family Dispute Mediation in India. Review of Legal Practice, 4(2), 33-45.
2. Kaur, G. (2020). "ADR in Divorce Matters: A Case Study of Family Courts in Delhi." Indian Journal of Legal Studies, 9(1), 77-98.

FURTHER READING :

1. Singh, P. (2017). Mediation in India: Law and Practice. Universal Law Publishing House.
2. Chopra, A. (2019). ADR and Family Law: Balancing Rights and Responsibilities. Eastern Book Company..

advmrunalghate2020@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 117-120

Transfer Pricing in India: Litigation Trends and Policy Recommendations for Dispute Resolution

Mamta Bhawanishanker Khandelwal
PHD Scholar, G.H. Raisoni University, Saikheda

Keywords: Transfer Pricing, India, Litigation, Dispute Resolution, Taxation

Abstract :

This white paper examines the escalating issue of Transfer Pricing (TP) disputes and litigation in India, a critical concern amid the growth of multinational enterprises (MNEs). It investigates the primary causes of TP disputes—selection of comparables, choice of TP methodologies, royalty payments, intra-group services, and intercompany loans—using landmark case studies and statistical data. The paper analyzes litigation trends, highlighting India's position among the top five countries for TP disputes, with resolution times averaging 5-7 years. It evaluates the effectiveness of dispute resolution mechanisms, including Advance Pricing Agreements (APAs), Mutual Agreement Procedures (MAPs), and the Dispute Resolution Panel (DRP). Recommendations include strengthening APA and MAP frameworks, introducing alternative dispute resolution (ADR) mechanisms, simplifying TP documentation, and leveraging artificial intelligence (AI) for risk assessment. The paper concludes that addressing these challenges can foster a more efficient and business-friendly tax environment in India.

Preface :

"This white paper draws from the author's ongoing PhD research, providing key insights tailored for industry stakeholders. The full thesis, upon completion, will offer a more detailed academic analysis."

Table of Contents :

1. Introduction
2. Legal Framework for Transfer Pricing in India
3. Analysis of Transfer Pricing Disputes in India
4. Litigation Trends and Challenges

5. Recommendations & Future Outlook
6. Conclusion
7. References

1. Introduction :

Transfer Pricing (TP) governs the pricing of transactions between associated enterprises across different tax jurisdictions. As a cornerstone of international taxation, TP ensures that related-party transactions align with the arm's length principle (ALP)—pricing as if the entities were independent. In India, an emerging market with a robust MNE presence, TP disputes have surged due to heightened scrutiny by tax authorities. Globally, TP remains a contentious issue as tax administrations seek to protect their revenue bases, but India's unique economic and regulatory landscape amplifies these challenges. This paper explores the causes of TP disputes, litigation trends, and resolution mechanisms, aiming to propose actionable solutions for improving India's TP framework.

2. Legal Framework for Transfer Pricing in India :

India's TP regulations are enshrined in Sections 92 to 92F of the Income Tax Act, 1961. These provisions mandate that international transactions between associated enterprises adhere to the ALP. The ALP ensures tax parity by requiring prices to reflect market conditions. Key dispute resolution mechanisms include :

- **Dispute Resolution Panel (DRP) :** An alternative to traditional appeals, offering faster resolution for TP adjustments.
- **Advance Pricing Agreements (APAs) :** Pre-agreed pricing arrangements between taxpayers and tax authorities to prevent disputes.
- **Mutual Agreement Procedures (MAPs) :** Bilateral negotiations under tax treaties to resolve cross-border disputes.

These mechanisms aim to balance enforcement with taxpayer certainty, though their efficacy varies due to procedural complexities.

3. Analysis of Transfer Pricing Disputes in India :

TP disputes in India often stem from disagreements over :

- **Selection of Comparables :** Differences in identifying comparable uncontrolled transactions.
- **TP Methodologies :** Conflicts over methods like the Comparable Uncontrolled Price (CUP) or Transactional Net Margin Method (TNMM).
- **Royalty Payments :** Disputes over the valuation of intellectual property transfers.
- **Intra-Group Services and Intercompany Loans :** Challenges in benchmarking service fees and interest rates.

Landmark cases illustrate these issues :

- **Vodafone India Services Pvt. Ltd. v. Union of India (2018) :** The Supreme Court addressed TP adjustments on share issuances, emphasizing ALP compliance.
- **Maruti Suzuki India Ltd. v. ACIT (2016) :** The Income Tax Appellate Tribunal (ITAT) ruled on royalty benchmarking, highlighting methodological disputes.

These cases underscore the complexity of defending TP adjustments against aggressive tax enforcement.

4. Litigation Trends and Challenges :

India ranks among the top five countries globally for TP disputes, driven by its large MNE presence and rigorous tax audits. Statistical data reveal an average resolution time of 5-7 years, a significant burden on businesses. For instance :

Year	Number of TP Disputes	Average Resolution Time (Years)
2018	**1200**	**6.2**
2020	**1350**	**5.8**

APAs and MAPs have gained traction, with over 300 APAs signed by 2020, yet delays persist due to limited staffing and procedural inefficiencies. Taxpayers face prolonged uncertainty, deterring foreign investment.

5. Recommendations & Future Outlook :

To mitigate TP disputes, the following reforms are proposed :

1. **Strengthen APA and MAP Frameworks :** Increase staffing and streamline processes to reduce resolution times to under 3 years.
2. **Introduce ADR Mechanisms :** Implement mediation or arbitration as alternatives to litigation, offering faster and less adversarial outcomes.
3. **Simplify TP Documentation :** Develop standardized templates or digital tools to ease compliance, reducing errors and disputes.
4. **Leverage AI for Risk Assessment :** Use AI to analyse transaction data, identifying potential disputes early and enabling proactive resolution.

Implementing these measures requires collaboration between policymakers, tax authorities, and businesses to ensure practicality.

6. Conclusion :

Transfer Pricing litigation in India remains a formidable challenge, fueled by aggressive tax enforcement and prolonged resolution timelines. The analysis reveals systemic issues in dispute causation and resolution mechanisms, with significant economic implications for MNEs. By

strengthening APA and MAP frameworks, adopting ADR, simplifying documentation, and integrating AI, India can enhance its TP ecosystem. These reforms promise a more efficient, transparent, and business-friendly tax environment, aligning with global best practices.

7. References :

1. OECD. (2017). Transfer Pricing Guidelines for Multinational Enterprises and Tax Administrations. Paris: OECD Publishing.
2. Income Tax Act. (1961). Sections 92-92F. Government of India.
3. Supreme Court of India. (2018). Vodafone India Services Pvt. Ltd. v. Union of India.
4. ITAT Delhi. (2016). Maruti Suzuki India Ltd. v. ACIT.
5. Tandon, S., & Damle, D. (2019). An Analysis of Transfer Pricing Disputes in India. National Institute of Public Finance and Policy (NIPFP).

Email: mamtakhandelwal0809@gmail.com

Phone: 7588630356

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 121-125

Artificial Intelligence in Education : Transforming Teaching and Learning

Dr. Beena Sharma
Assistant Professor, Education
Suresh Gyan Vihar University, Jaipur (Rajasthan)

Abstract :

The integration of Artificial Intelligence (AI) in education marks a paradigm shift in teaching and learning. This paper explores the current state, applications, benefits, and challenges of AI in educational contexts. It highlights how AI supports personalized learning, enhances administrative efficiency, and transforms pedagogy. Ethical concerns—such as data privacy, algorithmic bias, and equity—are critically examined alongside implications for the role of educators. Case studies including Carnegie Learning, Duolingo, and Georgia State University demonstrate practical applications and outcomes. Findings suggest that while AI offers immense opportunities for educational innovation, successful adoption requires strategic planning, ethical safeguards, and professional development. The paper concludes with recommendations for institutions and future research directions.

Keywords : Artificial Intelligence, Educational Technology, Personalized Learning, Intelligent Tutoring Systems, Learning Analytics, Educational Innovation.

1. Introduction :

The 21st century has witnessed rapid technological change, with Artificial Intelligence emerging as a transformative force across industries, including education. Traditionally resistant to change, educational systems are now embracing AI, accelerated by the digital adoption during the COVID-19 pandemic.

AI applications in education include intelligent tutoring systems, adaptive learning platforms, automated assessments, and predictive analytics. These tools promise personalization, efficiency, and evidence-based decision-making. However, AI also raises concerns around privacy, data security, digital equity, and the evolving role of educators.

This paper critically examines the opportunities and challenges of AI integration in education,

offering insights for educators, policymakers, and technology developers.

2. Literature Review and Theoretical Framework :

2.1 Historical Context :

Educational technology has evolved from audiovisual aids to computer-assisted learning in the 1960s, intelligent tutoring systems in the 1970s–80s, and widespread online education in the 1990s. These developments laid the groundwork for AI by generating digital learning data and enabling remote, technology-mediated instruction.

2.2 Foundations of AI in Education :

Early systems like SCHOLAR (1970) and SOPHIE (1976) pioneered individualized instruction. Modern AI incorporates machine learning, natural language processing, and learning analytics to provide adaptive, personalized, and data-driven education.

Key applications include :

Adaptive Learning Systems – Adjusting pace and difficulty (VanLehn, 2011).

Intelligent Tutoring Systems (ITS) – Delivering feedback comparable to human tutoring (Ma et al., 2014).

Learning Analytics – Predicting success and optimizing pedagogy (Siemens & Long, 2011).

2.3 Theoretical Frameworks :

Constructivism – AI provides scaffolded, exploratory learning.

Social Learning Theory – AI supports collaboration and peer interaction.

Cognitive Load Theory – AI optimizes information delivery to reduce overload.

3. Current Applications :

3.1 Personalized Learning :

AI platforms create individualized pathways, adapting content and assessments in real time. Examples include DreamBox (mathematics) and Duolingo (languages). Benefits include tailored pacing, immediate feedback, and accommodation of learning styles.

3.2 Intelligent Tutoring Systems :

Cognitive Tutors (e.g., Carnegie Learning) model student thinking and misconceptions, while conversational AI (chatbots, virtual assistants) provide 24/7 guidance.

3.3 Administrative Automation :

AI automates grading, scheduling, and student inquiries, reducing teacher workload. Natural language processing tools can even assess essays with feedback.

3.4 Learning Analytics and Predictive Modeling :

AI helps identify at-risk students early, optimize curriculum, and predict academic outcomes. Georgia State University's predictive analytics system significantly improved graduation rates.

4. **Benefits of AI Integration :**

4.1 Personalized Learning at Scale :

AI enables differentiated pacing, adaptive assessments, and culturally relevant content delivery—difficult to achieve in traditional classrooms.

4.2 Improved Learning Outcomes :

Meta-analyses show AI systems enhance mastery, accelerate feedback cycles, and support evidence-based teaching.

4.3 Teacher Support :

AI reduces administrative burdens, provides professional insights, and recommends resources—enhancing rather than replacing teachers.

4.4 Accessibility and Inclusion :

AI tools support multilingual education, assistive technologies for disabilities, and quality remote learning opportunities, broadening access.

5. Challenges and Concerns :

5.1 Privacy and Data Protection :

Massive data collection raises concerns about ownership, consent, and compliance with regulations (e.g., GDPR, FERPA).

5.2 Algorithmic Bias :

Biased datasets risk perpetuating inequities, particularly in assessments and predictive models.

5.3 Digital Divide :

Limited access to technology and digital literacy creates inequities between well-resourced and under-resourced institutions.

5.4 Educator Concerns :

Teachers worry about job displacement and misalignment of AI-driven methods with pedagogical values. Professional training is critical for acceptance and effective use.

6. Ethical Considerations :

Student Autonomy : Over-reliance on AI risks limiting student agency. Transparency and opt-out mechanisms are essential.

Human Connection : Education is inherently relational; AI must augment, not replace, teacher-student interaction.

Long-term Development : Overdependence on AI could reduce critical thinking, creativity,

and social skills.

7. Case Studies :

7.1 Carnegie Learning's Cognitive Tutor :

Widely used in U.S. schools, this AI math platform has shown significant achievement gains, demonstrating the value of cognitive modeling.

7.2 Duolingo :

With 500 million users, Duolingo uses adaptive algorithms and gamification to deliver effective language learning, rivaling university-level instruction.

7.3 Georgia State University :

AI-driven predictive analytics improved retention and graduation, especially for first-generation and minority students, showcasing AI's role in equity.

8. **Future Prospects :**

8.1 Emerging Technologies :

Large Language Models – Advanced tutoring and writing assistance.

Computer Vision – Gesture recognition and multimodal assessments.

AR/VR Integration – Immersive adaptive learning.

8.2 Educational Models :

Competency-Based Education – Continuous AI assessments support mastery.

Microlearning – Bite-sized, personalized modules.

Lifelong Learning – AI-driven upskilling across careers.

8.3 Institutional Transformation :

AI may reshape organizational structures, create new roles (AI specialists, ethics coordinators), and encourage partnerships with tech firms.

9. Recommendations :

Strategic Planning – Conduct needs assessments and pilot programs before scaling.

Professional Development – Train educators in technical, pedagogical, and ethical AI use.

Ethical Frameworks – Establish policies for privacy, bias mitigation, and accountability.

Equity Measures – Ensure universal access, inclusive design, and targeted support for disadvantaged students.

10. Conclusion :

AI in education offers powerful opportunities for personalization, efficiency, and improved outcomes. Case studies show measurable success, but challenges around privacy, bias, equity, and teacher adaptation must be addressed.

Future progress depends on balancing technological potential with human-centered values. Teachers remain central to emotional, social, and creative development. With ethical safeguards, equity initiatives, and collaborative stakeholder engagement, AI can create inclusive, effective, and inspiring learning environments that prepare students for a complex, technology-driven future.

References :

1. Ferguson, R. (2012). *Learning analytics: drivers, developments and challenges.* IJTEL, 4(5-6).
2. Kulik, J. A., & Fletcher, J. D. (2016). *Effectiveness of intelligent tutoring systems: a meta-analytic review.* RER, 86(1).
3. Ma, W., Adesope, O. O., Nesbit, J. C., & Liu, Q. (2014). *Intelligent tutoring systems and learning outcomes: A meta-analysis.* JEP, 106(4).
4. Murthy, S., & Iyer, S. (2018). *Role of AI in Engineering Education.* IIT Bombay.
5. NITI Aayog. (2018). *National Strategy for Artificial Intelligence.* Government of India.
6. Pant, M. M. (2019). *Learning in the Age of AI.*
7. Sharma, R. C. (2020). *ICT and AI in Indian Higher Education.* AIU Publications.
8. Siemens, G., & Long, P. (2011). *Penetrating the fog: Analytics in learning and education.* EDUCAUSE Review
9. Singh, A. K. (2022). *AI for Inclusive Education in India: Challenges and Opportunities.* BHU Journal.
10. VanLehn, K. (2011). *Effectiveness of human tutoring vs. ITS.* Educational Psychologist, 46(4).
11. Varghese, N. V. (2021). *AI and Indian Higher Education.* NIEPA.

डॉ. बीना शर्मा
सहायक प्रोफेसर, सुरेश ज्ञान विहार विश्वविद्यालय।
ईमेल– binasonthalia05@gmail.com
फोन नंबर–9799660911

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 126–130

विद्यालयों में ड्रॉप आउट के कारण और उपाय

राजीव प्रियदर्शनम
शोधार्थी, (शिक्षा शास्त्र)
सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला, पूर्वी सिंहभूम, झारखण्ड।

सारांश :–

ड्रॉप आउट का तात्पर्य है कि कोई छात्र या व्यक्ति योग्यता पूरी करने के पहले ही विद्यालय महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय को छोड़ दें। शिक्षा के संदर्भ में ड्रॉप आउट वैसे छात्र जो अपने शैक्षिक पाठ्यक्रम को पूरा करने से पहले ही अपना रजिस्ट्रेशन अथवा दाखिला रद्द कर देता है। भारत में स्कूल छोड़ने वालों का मुद्दा देश की शिक्षा प्रणाली में एक महत्वपूर्ण चुनौती बना हुआ है। शिक्षा तक पहुंच बढ़ाने के प्रयासों के बावजूद कई बच्चे अपनी पढ़ाई पूरी करने से पहले ही विद्यालय छोड़ देते हैं। यह समस्या व्यक्तिगत भविष्य को भी प्रभावित करती है और भारत के समग्र विकास में बाधा डालती है। शिक्षा के संदर्भ में ड्रॉप आउट एक छात्र होता है जो उनके पाठ्यक्रम को पूरा करने से पहले विद्यालय या महाविद्यालय से अपना रजिस्ट्रेशन या दाखिला रद्द कर देता है। यह आमतौर पर छात्र द्वारा विद्यालय या महाविद्यालय छोड़ने से पहले आता है। ड्रॉप आउट के कई कारण हो सकते हैं जैसे वित्तीय समस्याएं, शैक्षिक स्तर पर ध्यान नहीं देना सामाजिक या पारिवारिक दवा और अन्य व्यक्तिगत अथवा पेशेवर रुक सकता है,। ड्रॉप आउट छात्रों के लिए शैक्षिक योग्यता प्राप्त करने की संभावना काम हो जाता है, जो जो उनके भविष्य में कैरियर विकास के लिए एक बहुत बड़ी बाधा हो सकती है। संचालन अधिकारियों और शिक्षकों को छात्रों की समय–समय पर उपस्थित को बढ़ावा देने और उनकी सहायता करने की आवश्यकता प्रतीत होती है ताकि ड्रॉप आउट के दर को कम किया जा सके।

बीज शब्द :– ड्रॉप आउट, व्यक्तिगत शिक्षा, शैक्षिक कार्यक्रम, सर्व शिक्षा अभियान।

परिचय :–

शिक्षा एक समृद्ध और सशक्त समाज की नींव है। शिक्षक किसी भी राष्ट्र के विकास महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारतीय विद्यालयों में ड्रॉप आउट दर नीति निर्माता और शिक्षकों के लिए चिंता का एक प्रमुख कारण रही है। यह शब्द ड्रॉप आउट शब्द का इस्तेमाल उन छात्रों के लिए किया जाता है जो विद्यालय महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय की पढ़ाई पूरी करने से पहले छोड़ देते हैं।शिक्षा एक मौलिक अधिकार है जो सामाजिक पूर्वाग्रह और असमानताओं का मुकाबला कर सकती है। जबकि भारत में सर्व शिक्षा अभियान जो अब समग्र शिक्षा के रूप में जानी जाती है उसमें शिक्षा का अधिकार अधिनियम जैसी पहलुओं के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा में लगभग सार्वभौमिक नामांकन सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण प्रगति की है। देश की उन्नति असाधारण रूप से से

अपने नागरिकों के शिक्षा पर निर्भर करती है जो विश्वव्यापी परिप्रेक्ष्य का एक निर्माण सत्य है। शिक्षा एक व्यक्ति को एक उत्पादक नागरिक बनाने के लिए एक केंद्रीय भूमिका निभाती है और राष्ट्र की प्रगति में योगदान देने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारक है। हालांकि विकासशील देशों में बच्चे विभिन्न कर्म से पढ़ाई छोड़कर अपने शिक्षा के अधिकार से वंचित हो गए हैं। पढ़ाई छोड़ने के जोखिम वाले छात्र को आमतौर पर SARDO के रूप में जाना जाता है। यह फिलीपींस के शिक्षा विभाग द्वारा गढ़ा गया एक शब्द है जिसे एक छात्र के रूप में परिभाषित किया जाता है जो पढ़ाई छोड़ने वाला विद्यार्थी उम्मीदवार बनने की संभावना रखता है। कॉलेज डिक्शनरी ड्रॉप आउट को विश्लेषण और संज्ञा के रूप में सूचीबद्ध करती है, जिसमें ड्रॉप आउट भी लिखा है। यदि आवृत्ति के अनुसार देखेंगे तो ड्राप आउट समकालीन अमेरिकी अंग्रेजी के कपास में ड्रॉप आउट की तुलना में लगभग 10 गुना अधिक बार आता है।

समस्या की पहचान करना :-

अंतर्वस्तु, ड्रॉप का दर क्या है? ड्रॉप आउट ऑफ दर और निकास डर के बीच क्या अंतर है? ड्रॉप का दरो को मापने का महत्व। ड्रॉप का दर की गणना कैसे करें? ड्राप ऑफ दर उन उपयोगकर्ताओं का प्रतिशत है जो किसी विशिष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने से पहले किसी प्रक्रिया या कार्यवाही को छोड़ देते हैं।

ड्रॉप आउट समस्या :-

1. आर्थिक पृष्ठभूमि
2. पारिवारिक दबाव।
3. शैक्षणिक स्तर पर ध्यान ना देना।
4. विद्यालय से जुड़े कारण
5. सामाजिक मानदंड।
6. अन्य कारण।

उद्देश्य एवं लक्ष्य :-

ड्रॉप आउट बच्चों से जुड़े उद्देश्य :

1. ड्रॉप आउट बच्चों की संख्या को कम करना।
2. ड्रॉप आउट बच्चों की शैक्षणिक योग्यता हासिल करने में मदद करना।
3. ड्रॉप आउट बच्चों को फिर से विद्यालय में नामांकित करना।
4. ड्रॉप आउट बच्चों को शिक्षा की सार्वभौमिक पहुंच सुनिश्चित करना।
5. राजनीतिक इच्छा शक्ति और केंद्र एवं राज्य सरकारों के बीच उचित समन्वय स्थापित करना।
6. ड्रॉप आउट बच्चों को शिक्षा के सार्वभौमिक पहुंच सुनिश्चित करना।

धारणा या विचार :-

1. ड्रॉप आउट के कई कारण हो सकते हैं जैसे वित्तीय समस्या शैक्षिक स्तर पर ध्यान ना देना सामाजिक या पारिवारिक दबाव और अन्य व्यक्तिगत अथवा पेशेवर उत्सुकताएं।
2. समय प्रबंधन कौशल और ड्रॉप आउट इरादों के बीच संबंध पर विचार विमर्श करना।
3. ड्रॉप आउट इरादों और वास्तविक ड्रॉप आउट के बीच संबंध की जांच करें।
4. रुचि और ड्रॉप आउट के बीच संबंध पर विचार करना।

शिक्षा के संबंध में ड्रॉप आउट दर एक सुंदर एक सांख्यिकी माप है जो उन छात्रों के प्रतिशत को दर्शाता है जो अपना शैक्षिक कार्यक्रम पूरा करने से पहले आमतौर पर उच्च विद्यालय डिप्लोमा या समकक्ष प्रमाण पत्र प्राप्त करने से पहले ही छोड़ देते हैं।

उच्च ड्रॉप आउट दरो को व्यक्तियों और समाज पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है, क्योंकि वे भविष्य के शैक्षिक और रोजगार के अवसरों को सीमित कर सकते हैं।

शैक्षिक संस्थान और नीति निर्माता रुझान ऑन की पहचान करने और उन्हें कम करने के लिए राजनीति विकसित करने के लिए ड्रॉप आउट दलों की बारीकियां से निगरानी करते हैं। हस्तक्षेप में जोखिम वाले छात्रों को अतिरिक्त सहायता और संसाधन प्रदान करना, वैकल्पिक शिक्षा कार्यक्रम लागू करना और छात्रों के विघटन में योगदान देने वाले कारकों को संबोधित करना शामिल हो सकता है। शैक्षिक समानता को बढ़ावा देने और समग्र शैक्षिक परिणाम के में सुधार करने के प्रयासों में ड्रॉप आउट दर को कम करना एक प्रमुख प्राथमिकता है।

वर्तमान समय की समस्या की प्रासंगिकता :-

ड्रॉप आउट की समस्या का पता लगाना और उनका निराकरण करना। विद्यालय छोड़ने की समस्या आर्थिक रूप से वंचित बच्चों को मुख्य धारा के विकास पथ में लाने के लिए प्रयास करना।

कार्य की योजना :-

1. प्राथमिक कक्षाओं से ही बेहतर शिक्षा प्रदान करना।
2. सामुदायिक संगठनों और विद्यालयों का सहयोग।
3. परिवारों को शामिल करना।
4. छोटे विद्यालय बनाना।
5. प्रशिक्षण केंद्र खोलना।
6. छात्रों की सहभागिता बढ़ाना।

विद्यालय छोड़ने वालों पर साहित्य की आलोचनात्मक समीक्षा दिसंबर 2013 शैक्षिक अनुसंधान समीक्षा डी ओ आई 10, 1016/j, edurev2013, 05, 002[1]

यह पेपर समय से पहले स्कूल छोड़ने पर बढ़ते साहित्य की समीक्षा करता है। हम स्पष्ट करते हैं कि समय से पहले विद्यालय छोड़ने से क्या–क्या खतरनाक परिणाम होते हैं और साहित्य में उठाए गए अंतर निहित समस्याओं और पद्धतिगत मुद्दों पर बात करते हैं। यह पेपर उन स्तर, विधियों और मॉडल की जांच करता है। जिनके साथ विषय का अध्ययन किया गया है और उनमें से प्रत्येक के संभावित बिंदुओं पर चर्चा करता है।

विषय का विश्लेषण :-

सर्वेक्षण ड्रॉप आउट विश्लेषण के लिए शोधकर्ता को कम से कम दो पैरामीटर को ध्यान में रखना चाहिए।

1. प्रतिक्रिया दर :-

प्रतिक्रिया दर उन लोगों की संख्या है जिन्होंने अपने प्रतिक्रियाएं प्रस्तुत की है, जिन्हें कल नमूने से विभाजित किया गया है। यह देखा गया है की अधिकांश सर्वेक्षण के मामले में प्रतिक्रिया दर की औसत सीमा 10 : 15 प्रतिशत है।

2. पूर्णता दर :-

पूर्णता दर की गणना वास्तव में संपूर्ण सर्वेक्षण को पूरा करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या को सर्वेक्षण में शामिल होने वाले कुल उत्तरदाताओं की संख्या से विभाजित की जाती है।

एक शोध सर्वेक्षण ड्रॉप आउट विश्लेषण क्यों आयोजित किया जाना चाहिए?

1. शोधकर्ताओं के लिए प्रभावी सर्वेक्षण बनाना बहुत ही महत्वपूर्ण है, जिसमें ड्रॉप आउट दर कम हो। सर्वेक्षण ड्रॉपआउट विश्लेषण करने से ऐसे कारकों के बारे में जानकारी मिलती है।
2. सर्वेक्षण ड्रॉप आउट विश्लेषण परिणाम के आधार पर ही प्रश्नों का प्रवाह तय किया जा सकता है।

ड्रॉप आउट विश्लेषण :–

क्लिनिकल ट्रायल से ड्रॉप आउट होना आम बात है और यह अध्ययन के नतीजे को प्रभावित कर सकता है। भले ही ट्रायल के अलग–अलग हिस्सों में ड्रॉप आउटडोर एक जैसी दिखे। ड्रॉप आउट सांख्यिकीय विश्लेषण विशिष्ट डेटा विश्लेषण वीडियो को संदर्भित करता है जिसका उपयोग या सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है। इस विधि में हम अज्ञात समस्या को सरल भागों में विभाजित करते हैं और फिर अवलोकन करते हैं कि समाधान ज्ञात करने के लिए इन्हें कैसे पुनः संयोजित किया जा सकता है।

विश्लेषण की इकाई किसी शोध परियोजनाओं के लिए सबसे छोटा स्तर है। विश्लेषण की सही इकाई चुनना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आपको अपने डेटा के बारे में अधिक सटीक निष्कर्ष निकालने में मदद करता है।

विश्लेषण की इकाई क्या है?

विश्लेषण की इकाई डाटा सेट में सबसे छोटा तत्व है जिसका उपयोग किसी घटना की पहचान करने और उसके वर्णन करने के लिए किया जा सकता है अथवा सबसे छोटी इकाई जिसका उपयोग किसी विषय के बारे में डाटा एकत्र करने के लिए किया जा सकता है। भारत में विद्यालय छोड़ने की दर को कैसे कम करें यह एक विचारणीय प्रश्न है। स्कूल के बुनियादी ढांचे में सुधार ड्रॉपआउट दरों को कम करने में महत्वपूर्ण है। कई बच्चे विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं की कमी के कारण विद्यालय छोड़ देते हैं। समुदायों सामाजिक कार्यकर्ताओं और स्थानीय कारकों के साथ–काम करके CRY सुनिश्चित करता है कि विद्यालयों में पर्याप्त कक्षाएं, स्वच्छ पानी और स्वच्छता उपलब्ध है कि नहीं। यू डी आई एस ई (UDISE) 2021–22 के मुताबिक भारत में स्कूलों में ड्रॉप आउटडोर 12.6% है। यह दर माध्यमिक स्तर (कक्षा 9–10) पर सबसे ज्यादा है। वहीं प्राथमिक स्तर (कक्षा 1–5) पर ड्रॉप आउट दर 1.5% और उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा 6–8) पर 3% है। UDISE के आंकड़ों से पता चलता है कि भारत में प्राथमिक स्तर पर विद्यालयों में कल ड्रॉप आउटदर 1.5% है। जो पिछले वर्ष की तुलना में कम है।

विद्यालय छोड़ने की दर को लेकर कुछ खास बातें :–

– शिक्षा के सभी स्तरों पर लड़कियों की तुलना में लड़कों के लिए ड्रॉपआउट दर ज्यादा है।
– ड्रॉपआउट दर सबसे ज्यादा भारतवर्ष में उड़ीसा जैसे राज्य में है जहां 27.3 प्रतिशत है।

भारत में स्कूल छोड़ने की समस्या को काम करने के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार माता–पिता और समुदायों के बीच जागरूकता पैदा करना जरूरतमंद छात्रों को वित्तीय सहायता देना और बाल श्रम से जुड़े मुद्दों पर ध्यान देना होगा। विद्यालय छोड़ने के सबसे बड़े कर्म में घरेलू कामों में मदद, आर्थिक स्थिति और रुचि की कमी शामिल है। UDISE 21–22 के आंकड़ों से पता चलता है कि भारत में प्राथमिक स्तर पर विद्यालयों में कुल ड्रॉप आउट डर 1.5% है जो पिछले वर्ष से 1.8% की दर से काम है।

निष्कर्ष :-

विद्यालय छोड़ने की समस्या सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए आम बात हो गई है। ड्रॉप आउट को कम करने के लिए माता–पिता की सहभागीता उनसे बातचीत खेलों में भागीदारी और रोल मॉडल होना मजदूर होता है। ड्रॉप आउट में वैसे बच्चों को ज्यादातर देखा गया है कि वह परिवार की मदद के लिए कहीं ना कहीं रोजगार में लिप्त रहते हैं। विद्यालय की गुणवत्ता भी ड्रॉप आउट के लिए कुछ हद तक जिम्मेदार होती है और इसकी रोकथाम के लिए समाज में जागरूकता की काफी आवश्यकता है। सभी को सरकार के द्वारा प्रदत्त सारी योजनाओं को ग्रामीण के जमीनी स्तर तक बताना होगा और शिक्षा कितनी जरूरी है बाल्यावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक कितनी जरूरी होती है यह काफी आवश्यक है। शिक्षा मानव का बहू मुख्य विकास करता है और समाज को एक नई दिशा प्रदान करती है हमें राष्ट्र के नाम निर्माण में नौनिहालों को अधिक से अधिक संख्या में विद्यालय जाने के लिए प्रेरित करना होगा ताकि हमारा राष्ट्र एक संबल विकसित सुदृढ़ और पूरे विश्व मे अग्रगामी बने।

संदर्भ :-

1. फार्मिंग ड्रॉप आउट नोटिस ओं थे पॉलिटिक्स ऑफ एन अर्बन हाई स्कूल (सनी सीरीज टीचर एंपावरमेंट एंड स्कूल रिफॉर्म), लेखक मिशेलफाइन, पब्लिकेशन स्टेट यूनिवर्सिटी का न्यूयॉर्क 5 मार्च 1991
2. लेसन फ्रॉम ए थर्ड ग्रेड ड्रॉप आउट में, लेखक ऋषि रिग्वे, प्रकाशक थॉमस नेल्सन 2017
3. डोंट ड्रॉपआउट ऑन यू, लेखक व्हिटनीडी स्मिथ और ड्वेन ग्राहम, प्रकाशक आउट स्कर्ट्सप्रेम 30 अप्रैल 2019
4. इंश्योरिंग दैट नो चाइल्डईस लेफ्टबिहाइंड, लेखक जे. डी. जॉन्स, पब्लिकेशन यूनिवर्स 1 अगस्त 2018

मोबाइल – 9934039915

E-mail : rajivnamrata2002@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 131-135

दक्षिण भारत की कोरागा जनजाति : एक अंतदृष्टि अध्ययन

नयना जैन, शोधार्थी
डॉ० सुमन कौशिक, मार्गदर्शिका
सी० एम० आर विश्वविद्यालय, बैंगलुरु।

'कोल किरात भील्ल, बनवासी मधु, सूचि सुंदर स्वादु सुधा सी।
भरि भरि परन पुती रचि रूरी, कंदमूल फल आखर जुरि।
सबहि देहि कर विनय प्रनामा, कहि कहि स्वाद भेद गुण नामा।
देहि लोग बहु मोल न लेंही, फेरत राम दोहाई देही।।'[1]

उक्त चौपाई तुलसीदास के रामचरितमानस के अयोध्याकांड से हैं। भगवान राम के वन गमन के समय निषादराज (श्रंगवेरपुर के आदिवासी राजा तथा राम के बाल सखा जिन्होंने केवटराज से कहकर राम को गंगा पार करवायी) की प्रजा जिसमें कोल, किरात, भील वनवासी भी शामिल थे। भगवान राम की खोज में निकले भरत तथा समस्त अयोध्यावासियों का उनके क्षेत्र में पहुंचने पर कंदमूल तथा फल से सबका स्वागत करते हैं। शबरी जिसने राम को अपना झूठा फल खिलाया वह भी एक आदिवासी ही थी। महाभारत में भी जनजातियों का उल्लेख मिलता है। एकलव्य नामक भील जिसने द्रोणाचार्य को गुरु दक्षिणा में अपना अंगूठा अर्पित कर दिया था जिसका दंतकथाओं में एक आदर्श शिष्य के रूप में चित्रण किया जाता है। मुंडाओं तथा नागाओं ने युद्ध के समय कौरवों की ओर से पांडवों के विरुद्ध लड़ने का दावा किया है। भीम का पुत्र घटोत्कच जिसने महाभारत युद्ध में असाधारण वीरता का प्रदर्शन किया उसकी मां भी जनजाति से थी। अर्जुन ने भी एक नागा राजकुमारी चित्रांगदा से विवाह किया था।

प्राचीन काल से जनजातीय समुदाय के लिए वनवासी, गिरिवासी या अरण्यवासी शब्द का प्रयोग किया जाता रहा है क्योंकि जनजाति समुदाय प्रकृति प्रेमी होते हैं तथा वनों से उनका गहरा प्रेम होता है। ये लोग प्रकृति के उपासक होते हैं तथा उनकी आजीविका अधिकांशतरू वनों पर ही निर्भर होती है। इनका निवास स्थान मूलतः निर्जन स्थानों, पर्वतों तथा वनों के समीप पाया जाता है। आज इन्हें आदिवासी, आदिम जाति, जनजाति तथा अनुसूचित जनजाति आदि नाम से संबोधित किया जाता है। इन्हें आदिवासी इसलिए कहा जाता है क्योंकि आदिकाल से यह भारत के निवासी माने जाते हैं। ये अपनी अनोखी सांस्कृतिक विरासत से भारतीय संस्कृति को विशिष्ट पहचान प्रदान करते हैं।

डॉ० श्रीनाथ शर्मा के मतानुसार, 'भारतीय समाज में प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक आदि समूहों एवं वनवासियों का उल्लेख प्राप्त होता है। वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में जनजातियों के नाम भी उल्लेखित

है। जनजाति या आदिम जाति 'ट्राइब' Tribes शब्द का हिंदी रूपांतरण है।'[2]

सामाजिक मानवशास्त्री घुर्ये जनजाति समुदाय को पिछड़े हिंदू मानते हैं। यानि सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टि से यह हिंदू समाज के ही अंश हैं।

जनजाति समुदाय का इतिहास यशस्वी रहा है। इनका भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यह समुदाय युद्ध कौशल में भी निपुण रहा है। सन 1832 में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से पूर्व वीर बुधु भगत ने लरक्का संघर्ष नामक आंदोलन प्रारंभ किया । लरक्का संघर्ष जनजाति समुदाय को जमीन से बेदखल करने, अंग्रेजी शासन के विरुद्ध तत्कालीन राजाओं एवं जमींदारों के हाथ में देने और पेय पदार्थ पर आबकारी लागू करने व अत्याचार के विरोध में हुआ था । इसी प्रकार बिरसा मुंडा ने 23 वर्ष की अल्प आयु में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध ऐसा विद्रोह किया कि उसके विद्रोह की आग ब्रिटेन तक पहुंच गई थी। इसके अतिरिक्त संथाली विप्लव, भील विद्रोह, बस्तर विद्रोह, गोंड विद्रोह आदि भारत की जनजातियों में जागरूकता के कुछ प्रसिद्ध उदाहरण है।

भारत विविधताओं का देश है जहां जातीय सांस्कृतिक, भाषाई तथा भौगोलिक रूप से अनेक प्रकार की जनजातियां पाई जाती है। जनजातियों का जीवन प्रकृति से जुड़ा है और उनका अस्तित्व भी भौगोलिक परिवेश पर आधारित हैं। जनजातियां न केवल अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं के लिए जानी जाती हैं, अपितु उनके भौगोलिक वितरण ने भी उनके जीवन शैली को प्रभावित किया है। बी. एस. गुहा ने भौगोलिक क्षेत्र को देखते हुए भारतीय जनजातियों को तीन मंडलों में वर्गीकृत किया है :–

1. उत्तरी पूर्वी तथा उत्तरी मंडल।
2. केंद्रीय अथवा मध्य मंडल।
3. दक्षिणी मंडल।

उत्तरी पूर्वी तथा उत्तरी मंडल में कुकी, लुशाई, खाली तथा गारो समेत अनेक जनजातियाँ निवास करती हैं। केंद्रीय तथा मध्य मंडल में मुंडा, संथाल, ओराँव, बिराहोर, भटकारी, कोल, भील, कोराकु, अगरिया, भाडिया, गोंड आदि जनजातियाँ पाई जाती हैं। दक्षिणी मंडल में कड़ार, इरुला, कोटा, टोड़ा, लंबाडी, कुरंबा, कोरागा, बढ़ागा, मालवादिन आदि जनजातियां जंगलों में बसती है। हम यहां दक्षिण भारत की कोरागा जनजाति पर चर्चा करेंगे।

दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य के तटीय जिलों विशेष रूप से दक्षिण कन्नड़, उडुपी और केरल के कासरगोड जिले में बसने वाली कोरागा जनजाति को परंपरागत रूप से समाज के निचले पायदान पर रखा गया है। कोरागा समुदाय सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक रूप से हाशिये पर होने के बावजूद अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं। यह जनजाति मुख्य रूप से अनुसूचित जनजाति (ST) के अंतर्गत आती है और भारत के संवैधानिक संरक्षण के तहत कई विशेषाधिकार प्राप्त करती हैं। वर्तमान में कर्नाटक में लगभग 14800 और केरल में 1600 के करीब कोरागा जनसंख्या है।

कोरागा जनजाति की उत्पत्ति के विषय में स्पष्ट ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है, किंतु कुछ विद्वान इन्हें प्राचीन दक्षिण भारतीय द्रविड़ जातीय समूहों से संबंधित मानते हैं। कोरागा शब्द की उत्पति 'कोरा' शब्द से हुई है, जिसका संबंध सूर्य भगवान से है, इसलिए कोरागा जाति सूर्य भगवान की पूजा–उपासना में अधिक

विश्वास रखते है। इन्हे 'कोरुवर' भी कहा जाता है जिसका अर्थ है 'पहाड़ी लोग'। डॉ. एल. के. अय्यपन के अनुसार, 'कोरागा दक्षिण भारत के आदिम निवासियों में से एक है जो द्रविड़ जातीय समूह से संबंधित हो सकते हैं।'[3] अन्य विद्वान इनकी उत्पत्ति प्रोटो–आस्ट्रलॉयड जातीय समूह से मानते हैं। कुछ लोक कथाओं में इन्हें प्रारंभिक वानर जातियों से जोड़ा जाता है, जो दक्षिण भारतीय वनों में निवास करते थे। कोरागा अनेक ब्रह्मगोत्रीय वंशो या संप्रदायों में विभाजित हैं। जो कोरागा समतल भूमि पर रहते है, उन्हे 'कुन्टु' कोरागा तथा जो कोरागा जंगल में रहते है, उन्हे 'सप्पू' कोरागा कहा जाता है। उनके वंश को 'बली' कहा जाता हैं। कोरागा समुदाय में 17 बली पाये जाते हैं।

इतिहासकारों का मानना है कि कोरागा कभी अपने क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से निवास करते थे, किंतु ब्राह्मणवादी सामाजिक संरचना के उभार के साथ–साथ इन्हें समाज के निम्नतम स्तर पर धकेल दिया गया। औपनिवेशिक काल में इन पर 'जनजातीय असभ्यता' की मोहर लगा दी गई और यह 'आदिवासी श्रमिक वर्ग' में परिवर्तित हो गए।

कोरागा जनजाति की भाषा 'कोरागी' कहलाती है, जो द्रविड़ भाषा परिवार से संबंधित हैं। आधुनिक युग में अधिकांश कोरागा लोग कन्नड़, तुलु और मलयालम जैसी स्थानीय भाषाओं का प्रयोग अपने दैनिक जीवन में करते हैं, किंतु कोरागी भाषा का प्रयोग पारंपरिक रीति–रिवाजों गीतों और अनुष्ठानों में आज भी किया जाता है। भाषा संरक्षण की दृष्टि से कोरागी भाषा अब लुप्त होने के कगार पर है।

कोरागा जनजाति के धार्मिक विश्वास मुख्य रूप से प्रकृति पूजा, पूर्वज पूजा और स्थानीय देवी–देवताओं की पूजा पर आधारित है। इन्होंने हिंदू धर्म के कई देवी–देवताओं को भी अपने विश्वास में शामिल कर लिया है, किंतु 'कोरगज्जा' और 'मरगज्जा' उनके पारंपरिक देवता के रूप में विशेष पूजनीय है, जिसे वे अपना रक्षक देवता मानते हैं। 'कोरगज्जा काना' उत्सव विशेष रूप से प्रसिद्ध है जिसमें कोरागा जनजाति के लोग मिलकर देवता की आराधना करते हैं।

'भूत कोला' भी इनका एक प्रकार का पारंपरिक नृत्य अनुष्ठान है, जिसमे भूतों और आत्माओं (पंजुरली, कल्लुर्ती, कोरथी, गुलिगा आदि) को प्रसन्न करने के लिए रंग–बिरंगे परिधान पहनकर नृत्य किया जाता है। कोरागा अन्य तुलु भाषी समुदायों के त्योहारों में भी भाग लेते हैं। कोरागा समुदाय का 'पडनन' लोकगीत और 'ढोलू' और 'वूटे' (ढ़ोल और बांसुरी) वाद्य यंत्र के साथ किया जाने वाला नृत्य अत्यंत प्रसिद्ध है। इनके गीतों में जीवन संघर्ष, प्रकृति पूजा और सामाजिक जीवन की कहानियाँ परिलक्षित होती है।

कोरागा समाज में वरिष्ठों का सम्मान, सामूहिक निर्णय प्रक्रिया और पारंपरिक सहयोग की भावना वर्तमान युग में भी विद्यमान है। कोरागा समुदाय में परंपरागत रूप से 'गुरु' अथवा 'पाटेल' नामक व्यक्ति समाज का प्रमुख होता है, जो जनजातीय परंपराओं का संरक्षण करता है और सामाजिक विवादों का निपटारा करता है। कोरागा समुदाय के लोग आज भी अपनी पारंपरिक बस्तियों में सामूहिक रूप से निवास करते हैं। कोरागा जनजाति में पारंपरिक रूप से मातृसत्तात्मक व्यवस्था प्रचलित है। इसका तात्पर्य यह है कि परिवार की वंश परंपरा और संपत्ति का उत्तराधिकार महिलाओं के आधार पर चलता है। परिवार में महिलाओं का स्थान उच्च होता है और वह सामाजिक निर्णय में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कोरागा परिवार में पुत्र तथा पुत्री में संपत्ति का बंटवारा बराबर भाग से किया जाता है। कोरागा समाज में संयुक्त परिवार प्रणाली देखने को मिलती है, जहां कई पीढ़ियां

एक साथ रहती है। परिवार का प्रधान 'कुडुम्बा' कहलाता है। कोरागा समाज में विवाह सरल और सामुदायिक परंपराओं के अनुसार होता है। विवाह के समय गोत्र और कुल पर विशेष ध्यान दिया जाता है। विवाह संबंध पारिवारिक सहमति से तय किए जाते हैं। विवाह सामान्यतः समुदाय के भीतर ही होते हैं और इनमें दहेज जैसी कुप्रथा नहीं पाई जाती है। विवाह समारोह में धार्मिक अनुष्ठानों, लोकगीतों और सामूहिक भोज का आयोजन किया जाता है।

पारंपरिक रूप से कोरागा जनजाति वनों पर निर्भर रहती थी। वे पत्तों से बनी झोपड़ियों (कोप्पु) में रहते थे और पत्तों के कपड़े पहनते थे। जंगलों से लकड़ी, शहद और औषधीय जड़ी–बूटियां इकट्ठा कर यह जीवन यापन करते थे। किंतु अब इनका जीवन मुख्यतः श्रम पर आधारित है। यह लोग कृषि मजदूरी, निर्माण श्रमिक, बाँस तथा लकड़ी के हस्तशिल्प निर्माण और घरेलू सहायकों के रूप में कार्य करते हैं। कुछ कोरागा समुदाय के लोग नगरपालिकाओं में सफाई कर्मी, दिहाड़ी मजदूर, होटल उद्योग में छोटे कर्मचारियों के रूप में कार्य कर रहे हैं। हालांकि हाल ही के कुछ वर्षों में सरकारी योजनाओं के तहत कुछ लोग शिक्षा पाकर सरकारी नौकरियां तथा सामाजिक कार्यों में भी प्रवेश कर रहे हैं।

कोरागा जनजाति अनुसूचित जनजातियों के अंतर्गत आरक्षित हैं फिर भी इनकी साक्षरता दर बहुत कम है। सामाजिक अर्थशास्त्रीय अध्ययन के अनुसार कोरागा समुदाय के केवल 22.9% लोग ही प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर पाए हैं तथा केवल 2.2% जन ने हीं उच्च माध्यमिक शिक्षा पूर्ण की है। सन 2011 के सरकारी सर्वे के अनुसार कोरागा जनजाति की साक्षरता दर लगभग 72.7% थी जो की अन्य जनजातियों की औसत साक्षरता (62.1%) से बेहतर है। एक क्षेत्रीय सर्वेक्षण (उडुपी जिला) में वास्तविक जीवन के अनुभव अधिक चिंताजनक हैं, विशेषकर ग्रामीण और वंचित समूहों में बच्चों का स्कूल छोड़ना, शिक्षा तक पहुंच की समस्या अभी भी गहरी है। 40.7% लोग आज भी इस समुदाय के अशिक्षित हैं।

कर्नाटक सरकार ने कोरागा जनजाति के कल्याण के लिए कोरागा कल्याण विकास बोर्ड की स्थापना की है, जो शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में योजनाएं लागू कर रहा है। कोरागा समुदाय को अनुसूचित जनजाति (ST) और विशेष रूप से कमजोर जनजाति समूह (PVTG) के तहत आरक्षण का लाभ शिक्षा, सरकारी नौकरियों और राजनीतिक क्षेत्र में प्राप्त हैं। सरकार द्वारा चलाई जा रही 'जनजातीय आवास योजना', 'जनजातीय छात्रवृत्ति योजना' और 'कौशल विकास कार्यक्रम' उनके उत्थान में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। सन 2024 में केरल के कासरगोड जिले में 530 कोरागा परिवारों को भूमि प्रदान की गई, जो उनके जीवन स्तर में सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

कोरागा जनजाति दक्षिण भारत की सांस्कृतिक विविधता का महत्वपूर्ण हिस्सा है। उनकी विशिष्ट सामाजिक संरचना, मातृवंशी व्यवस्था और पारंपरिक आजीविका उन्हें अन्य जनजातियों से अलग बनाती है। 'अजालु प्रथा' एक अमानवीय और अपमानजनक परंपरा है, जिसके अंतर्गत कोरागा जनजाति के लोगों को उच्च जातियों के लोगों के लिए 'शुद्धिकरण' की रस्में करने के लिए मजबूर किया जाता था। इस प्रथा के अंतर्गतः कोरागा समुदाय के लोगों को मनुष्य के बाल, नाखून और अन्य अपवित्र माने जाने वाले चीजें एकत्र करनी होती थीं। उन्हें इन चीजों को अपने शरीर पर मलकर शुद्धिकरण संस्कार करना होता था। यह काम सामाजिक या धार्मिक आयोजनों के समय करवाया जाता था, जिसमें उन्हें अपमानजनक वस्त्र पहनाए जाते और अपमान सहना

पड़ता। यह प्रथा जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता का चरम उदाहरण है। इसमें कोरगा समुदाय को निम्न, अशुद्ध और अछूत समझा जाता था। यह उनकी मानव गरिमा का हनन करती थी और उन्हें मानसिक व शारीरिक रूप से उत्पीड़ित करती थी। भारत सरकार और राज्य सरकारों ने इस प्रथा को गैरकानूनी घोषित कर दिया है। मानव अधिकार संगठनों और न्यायालयों के हस्तक्षेप से इस प्रथा पर काफी हद तक रोक लगी है। लेकिन कुछ क्षेत्रों में यह अब भी अंधविश्वास या सामाजिक दबाव के चलते गुप्त रूप से चलती रहती है।

अजालु प्रथा भारतीय समाज की उन कुरीतियों में से एक है जिसे मिटाना आवश्यक है। यह केवल कोरागा समुदाय का नहीं, बल्कि मानवता का अपमान है। कोरागा जनजाति का इतिहास संघर्ष और उपेक्षा से भरा है, लेकिन उनकी संस्कृति और सामाजिक संगठन उनकी शक्ति का प्रमाण है। वर्तमान में सामाजिक समरसता, शिक्षा और आर्थिक विकास के साथ कोरागा समाज भी मुख्य धारा में सम्मिलित हो रहा है। हालांकि सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक पिछड़ापन, शिक्षा व स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, भाषा और संस्कृति के क्षरण जैसी चुनौतियां उनके अस्तित्व और विकास के लिए गंभीर खतरा है। यदि सरकार, समाज और स्वयं कोरागा समुदाय एकजुट होकर प्रयास करें तो इनका भविष्य उज्ज्वल और सशक्त हो सकता है।

संदर्भ सूची :-

1. तुलसीदास गोस्वामी, श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड।
2. डॉ. श्रीनाथ शर्मा, जनजातीय समाज, पृ. 11
3. डॉ. एल. के. अय्यपन, साउथ इंडियन ट्राइब्स एंड कास्ट।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 136–142

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक–बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. राजपाल सिंह यादव
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग), सिंघानिया यूनिवर्सिटी, पचेरी बड़ी, झुंझुनू (राज.)
केदार सिंह
शोधार्थी (शिक्षा विभाग), सिंघानिया यूनिवर्सिटी, पचेरी बड़ी, झुंझुनू (राज.)

सारांश :–

भौक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों द्वारा किये जाने वाले कक्षा–कक्षों की क्रिया होती है, जो विद्यार्थियों द्वारा सम्पूर्ण सत्र में अधिगम की जाती है जो कि विभिन्न परीक्षाओं द्वारा ज्ञात की जाती है। भौक्षिक उपलब्धि, कक्षाकक्ष का वातावरण, पारिवारिक वातावरण, सृजनात्मकता, बुद्विलब्धि, माता–पिता का अपने बच्चों के प्रति व्यवहार, कि ोरावस्था एवं बाल्यावस्था आदि घटकों से प्रभावित होती है। दिव्यांगता से तात्पर्य किसी स्थायी शारीरिक दोष से युक्त बालकों से है, शारीरिक दोष के कारण यह बालक सामान्य बालकों की भांति सामान्य क्रियाओं में भाग लेने से वंचित हो जाते हैं। शारीरिक और मानसिक बाधित बालक को विशिष्ट बालकों की श्रेणी में रखा जाता है। समावेशी शिक्षा का अर्थ दिव्यांग (विशिष्ट) बच्चों को सामान्य विद्यालयों के साथ जोड़ने की प्रक्रिया है उन बच्चों के अन्दर छुपी प्रतिभाओं को समाज के सामने लाने के लिए यह शिक्षा का अभिनव प्रयास है जिससे वह खुद को समाज से अलग नहीं समझे। शिक्षा के क्षेत्र में देखा जाए तो संवेगात्मक बुद्धि का शिक्षण प्रक्रिया से सीधा सम्बन्ध है। हम जानते हैं कि शिक्षा का कार्य बालक तथा बालिकाओं का सर्वांगीण विकास करना है। संवेगात्मक बुद्धि किसी भी व्यक्ति के जीवन की प्रत्येक अवस्था में अहम भूमिका अदा करती है। विद्यार्थी की किशोरावस्था में तो संवेगात्मक बुद्धि उनके व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

बीज शब्द :– माध्यमिक स्तर, दिव्यांग, सांवेगिक बुद्धि, शैक्षिक उपलब्धि।

प्रस्तावना :–

ि ाक्षा व्यक्ति की दक्षता बढ़ाने का साधन मात्र नहीं है बल्कि लोकतंत्र में सक्रिय भागेदारी एवं सामाजिक जीवन स्तर के सुधार के लिए भी आव यक है। बालक ही दे ा का भविश्य होते हैं। अतः बालकों को ि ाक्षा प्रदान कराना किसी भी राश्ट्र का प्रथम कर्तव्य होता है। इन बालकों में एक बड़ी संख्या निः ाक्त बालकों की है जिनकी ि ाक्षा के लिए भारत सरकार एवं स्वयंसेवी संगठनों ने कई कार्यक्रम भुरू किये। समावे ाी ि ाक्षा एक ऐसी

अवधारणा है जिसमें दिव्यांग विद्यार्थियों को समान विद्यार्थियों के साथ समान रूप से सभी भौक्षिक गतिविधियों में सम्मिलित करके भौक्षिक अवसर व सुविधायें उपलब्ध कराना है। इन दिव्यांग वर्ग के बच्चों की ि ाक्षा के लिए भारत सरकार ने समावे ाी ि ाक्षा लागू की।

भारत में समावे ाी ि ाक्षा की द ाा और दि ाा में समावे ाी ि ाक्षा की वर्तमान स्थिति एवं उसके विकास में आने वाली बाधाओं को द ार्शाया है। ि ाक्षा प्राप्त करना प्रत्येक बच्चे का अधिकार है। भारत सरकार ने भी निः ाक्त व्यक्तियों के समान अधिकार तथा ि ाक्षा और समावे ाीकरण हेतु मानव संसाधन विकास मंत्रालय, सामाजिक न्याय एवं परिवार कल्याण एवं श्रम मंत्रालय के अधीन अनेक योजनाओं एवं नीतियों का क्रियान्वयन किया जा रहा है। जैसे 1974 में समेकित बाल विकास योजना, 1986 राश्ट्रीय ि ाक्षा नीति, 1994 में जिला प्राथमिक ि ाक्षा कार्यक्रम में सुनि ित किया गया कि 14 वर्श तक के सभी बच्चों को गुणवत्तायुक्त निः ाुल्क एवं अनिवार्य ि ाक्षा प्रदान की जायेगी। 1995 में दिव्यांग जन कानून, 1999 में राश्ट्रीय न्यास अधिनियम, दिव्यांगों की ि ाक्षा के लिए प्रारम्भ किये गये।

ि ाक्षक ि ाक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण अंग होता जिसके संरक्षण एवं निर्दे ान में छात्रों की ि ाक्षा सम्पन्न होती है। बच्चे ि ाक्षक को अपने आद ार्श रूप में देखते हैं किन्तु यदि ि ाक्षक बच्चे के समाज, संस्कृति परिवे ा के प्रति संवेदन ाील नहीं हैं, बच्चे के नजरिये का सम्मान नहीं करता है, समूह वि ोश के प्रति हेय दृश्टिकोण रखता है तो बच्चे का अपने समाज, संस्कृति, परिवे ा के प्रति नजरिया बदल जाता है और बहुधा वह स्वयं को हीन–दीन समझने लगता है। वंचित वर्ग एवं वि ोश आव यकता वाले बच्चों के साथ अक्सर ऐसा देखने में आता है। अतः यह बच्चे धीरे–धीरे विद्यालय से दूरी बना लेते हैं। साथ ही साथ विद्यालयी पाठ्यचर्या की खामिया तथा दोशपूर्ण मूल्यांकन प्रणाली भी समावे ाी ि ाक्षा प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करती है।

भारत में समावे ाी ि ाक्षा को सफल बनाने के लिए कुछ बिन्दुओं पर प्रका ा डाला है जिसमें यह नि ित करना कि 18 वर्श की उम्र तक के दिव्यांग बच्चों को भौक्षिक वातावरण उपलब्ध कराकर निः ाुल्क ि ाक्षा प्रदान की जाए एवं दिव्यांग बच्चों को सामान्य विद्यालयों में समेकित किया जाये। सरकार द्वारा बनाई गई नीतियों का क्रियान्वयन भाहरी क्षेत्रों तक हीं सीमित रह जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसका क्रियान्वयन उचित रूप से नहीं हो पाता है। माध्यमिक स्तर पर छात्र एवं छात्राओं में समायोजन सम्बन्धी समस्या अधिक पायी जाती है। इस स्तर पर किशोरों में संवेगात्मक अस्थिरता व रूचि सम्बन्धी परिवर्तनों के फलस्वरूप समायोजन सम्बन्धी समस्यायें अधिक विधमान रहती हैं। इस स्तर पर विद्यार्थी कभी अपने को बालक समझता है और अपने से बड़ों के साथ समायोजन नहीं स्थापित कर पाता है और कभी स्वयं को प्रौढ़ समझता है और बालकों के साथ समायोजन नहीं स्थापित कर पाता है। इस समय वे भिन्न–भिन्न समाज के सदस्य होते हैं, इन भिन्न–भिन्न समाज के व्यवहारों व मानदण्डों में बड़ी भिन्नता होती है। जिसके कारण उनके सामने समायोजन की समस्या विकराल रूप में उपस्थित होती है। समायोजन से तात्पर्य वास्तविकता के धरातल पर विभिन्न परिस्थितियों में स्वयं को ढालने की प्रक्रिया है। समायोजन एक अनवरत् चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपने अन्दर उपस्थित गुणों को संगठित कर अपने जीवन मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करता है। जो व्यक्ति स्वयं को परिस्थितियों के अनुसार ढाल कर सामंजस्य स्थापित कर लेता है, वह व्यक्ति अपनी योग्यता व उपलब्धि का सही प्रदर्शन कर पाता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :-

उपलब्धि से तात्पर्य किसी भी क्षेत्र में अर्जित ज्ञान से नहीं हैं। सामान्यतः हम उपलब्धि को भौक्षिक क्षेत्र में ही देखते हैं। लेकिन यह जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बन्धित होती हैं। अतः उपलब्धि का तात्पर्य विद्यार्थियों द्वारा कक्षा में विभिन्न विशयों में प्राप्त अंकों से नहीं अर्थात् उपलब्धि विद्यालय में बालक के अध्ययन विशय के अर्जित ज्ञान से है। ि ाक्षा भाब्दकोश के अनुसार कु ालतापेक्षी क्षेत्र या ज्ञान के किसी क्षेत्र में प्राप्त दक्षता का स्तर जिसे साधारणतः विद्यालयी परीक्षा द्वारा प्राप्त किया जाता है।

अन्य अर्थ में भौक्षिक उपलब्धि का प्रमुख आ ाय ि ाक्षा के क्षेत्र में प्राप्त परिणाम से है। भौक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों द्वारा किये जाने वाले कक्षा–कक्षों की क्रिया होती है, जो विद्यार्थियों द्वारा सम्पूर्ण सत्र में अधिगम की जाती है जो कि विभिन्न परीक्षाओं द्वारा ज्ञात की जाती है। भौक्षिक उपलब्धि, कक्षाकक्ष का वातावरण, पारिवारिक वातावरण, सृजनात्मकता, बुद्विलब्धि, माता–पिता का अपने बच्चों के प्रति व्यवहार, कि ाोरावस्था एवं बाल्यावस्था आदि घटकों से प्रभावित होती है। स्पश्ट रूप में भौक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों की सभी उपलब्धियों को प्रभावित करती है तथा स्वयं भी अन्य गतिविधियों व उपलब्धियों से प्रभावित होती है।

दिव्यांगता से तात्पर्य किसी स्थायी शारीरिक दोष से युक्त बालकों से है, शारीरिक दोष के कारण यह बालक सामान्य बालकों की भांति सामान्य क्रियाओं में भाग लेने से वंचित हो जाते हैं। शारीरिक और मानसिक बाधित बालक को विशिष्ट बालकों की श्रेणी में रखा जाता है।

कुछ बालक ऐसे होते हैं जिनमें भिन्न प्रकार के शारीरिक व मानसिक बाधिता होती है। है। बहरा–अन्धा बालक, मानसिक पक्षाघात और मेरूदण्ड में वक्र से पीड़ित बालक, गूँगा–बहरा, अन्धा बालक, मिर्गी और अपंगता से पीड़ित बालक, मेरूदण्डीय द्वि ााखी और गूँगेपन से पीड़ित बालक, माँसपे ाीय डायसट्रोकीज पाँवफिरा–वाक् दोश से पीड़ित बालक, बहरा, एक आँख वाला, हथकटा, वाक् दोश से पीड़ित बालक आदि भाारीरिक रूप से बाधित बालक होतें हैं।

वै ि वक स्तर पर देखा जाये तो प्रत्येक 20वाँ व्यक्ति किसी न किसी दिव्यांगता से ग्रस्त है। भारत में दिव्यांगता की समस्या न सिर्फ अधिक है बल्कि धीरे–धीरे बढ़ भी रही है। वर्श 2011 की जनगणना के आँकड़ों से पता चलता है कि भारत में दिव्यांगों की कुल जनसंख्या वर्श 2001 के 21.9 मिलियन से बढ़कर वर्श 2011 में 26.8 मिलियन हो गई है। दिव्यांग जनसंख्या में बढ़ोत्तरी होने के साथ–साथ ि ाक्षा ाास्त्रियों के मानस पटल पर दिव्यांगों के ि ाक्षण अधिगम की जटिल समस्या अभी बनी हुई है। यद्यपि भारत का संविधान अपने सभी नागरिकों के लिए समानता, स्वतंत्रता, न्याय व गरिमा सुनि ि चत करता है और स्पश्ट रूप से यह दिव्यांग व्यक्तियों सहित एक संयुक्त समाज बनाने पर जोर डालता है। हाल के वर्शों में दिव्यांगों के प्रति समाज का नजरिया तेजी से बदला है। यह माना जाता है कि दिव्यांग बालक दे ा के लिए मूल्यवान मानव संसाधन होते हैं। यदि इन्हें समान अवसर, इनके अधिकारों की सुरक्षा तथा समाज में पूर्ण भागीदारी के अवसर मिले तो नि ि चत ही गुणवत्तापूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं। भारत में समावेशी विकास की अवधारणा कोई नई नहीं है। प्राचीन धर्मग्रन्थों का यह भी अवलोकन करें तो उनमें भी सभी लोगों को साथ लेकर चलने का भाव निहित है सर्वे भवन्तु सुखिनः।

समावेशी शिक्षा का आशय दिव्यांग विद्यार्थियों को सामान्य बच्चों के साथ बैठाकर सामान्य रूप से पढ़ाना

है, ताकि सामान्य व विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों में कोई भेदभाव न रहे तथा दोनों तरह के विद्यार्थी एक दूसरे को ठीक ढंग से समझते हुए आसानी से सहयोग से पठन–पाठन के कार्य को कर सकें। समावेशी शिक्षा का एक व्यापक लक्ष्य यह भी प्रतीत होता है कि एक साथ शिक्षित होने पर भविष्य में समाज के अन्दर विशिष्ट आवश्यकता वाले व्यक्तियों के सरोकारों को आम लोग बेहतर ढंग से समझ सकें तथा उनमें उनके प्रति आपेक्षित संवेदनशीलता का विकास हो सके। समावेशी शिक्षा को प्रोत्साहित करने का अपना एक राजनीतिक अर्थशास्त्र भी है। जो भूमण्डलीय या उदारीकरण की प्रक्रियाओं से प्रेरित है यह राजनीतिक अर्थशास्त्र इस मान्यता पर आधारित है कि सरकार को जन–कल्याण, सामाजिक तथा गैर उत्पादक कार्यों पर कम से कम खर्च करना चाहिए। विशिष्ट आवश्यकता बच्चों के लिए विशेष विद्यालय चलाना मंहगा सौदा है (वह भी दिव्यांगों की कम से कम पाँच श्रेणियों के लिए) इसलिए समावेशी शिक्षा को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

समावेशी शिक्षा का अर्थ दिव्यांग (विशिष्ट) बच्चों को सामान्य विद्यालयों के साथ जोड़ने की प्रक्रिया है उन बच्चों के अन्दर छुपी प्रतिभाओं को समाज के सामने लाने के लिए यह शिक्षा का अभिनव प्रयास है जिससे वह खुद को समाज से अलग नहीं समझे।

वर्तमान में विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं वाले बालकों के लिए शिक्षा की दो प्रकार की व्यवस्थाएं है। एक वह जिन्हें हम विशेष विद्यालय कहते है, जो ज्यादातर शहरों मे स्थित आवासीय है, जिनका उदेद्श्य केवल एक प्रकार के विशिष्ट बालकों की विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करना होता है, और दूसरा तरीका है कि उन्हें अन्य सभी बालकों के साथ आस–पड़ोस के सामान्य विद्यालय में भेजा जाये और वही उनकी विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने की व्यवस्था की जायें। यदि बालक इस प्रकार के विद्यालय में जाता है तो वह अपने अन्य भाई–बहनों के समान अपने माँ बाप के साथ रह सकता है। दूसरा इस प्रकार के विद्यालयों में सभी बालक एक दूसरे से मिलजुल कर एक दूसरे से सीख सकते है। इसके अलावा बालक को बाद में अपने आपको दुनिया में समायोजित करने में सहायता मिलती है क्योंकि आखिरकार उसको रहना तो उसको उसी समाज में है जिसका वो हिस्सा होता है इसलिए क्यों न बालक को प्रारम्भ से ही उस माहौल में रखा जाये। जहाँ उसे विद्यालय की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् रहना है। इसलिए अच्छा है कि आरम्भ से बालक को मुख्यधारा वाले ऐसे विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेजा जाये जहाँ अन्य सामान्य बालक भी जाते है। इस अवधारणा के साथ समावेशी शिक्षा व्यवस्था प्रणाली का आरम्भ हुआ। समावेशी शिक्षा से तात्पर्य ऐसी शिक्षा प्रणाली से है जिसमें प्रत्येक बालक को चाहे वो विशिष्ट हो या सामान्य बिना किसी भेदभाव के, एक साथ, एक ही विद्यालय में, सभी आवश्यक तकनीकों व सामग्रियों के साथ, उनकी सीखने सिखाने के जरूरतों को पूरा किया जायें।

प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण :–

सांवेगिक बुद्धि – सीधे तौर पर संवेगात्मक बुद्धि का तात्पर्य मानसिक स्वास्थ्य से है, जिसका आशय व्यक्ति के द्वारा दैनिक जीवन में भावनाओं, इच्छाओं, आदर्शों, महात्वाकांक्षाओं तथा संवेगों में सन्तुलन बनाए रखने की योग्यता है। जिसके द्वारा वह जीवन की कठिनाईयों का पूर्णरूप से सामना कर सके तथा उनको स्वीकार करके उनमें आवश्यकतानुसार उपर्युक्त सुधार कर सके।

शैक्षिक उपलब्धि – शिक्षा प्रक्रिया को संचालित करने वाले व्यक्ति विभिन्न स्तरों के छात्रों के लिए शिक्षण उद्देश्य निर्धारित करते हैं तथा इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शिक्षण अधिगम क्रियाओं का आयोजन करते है।

शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य इन शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति से है। विद्यार्थियों ने शैक्षिक उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है यही उनकी शैक्षिक उपलब्धि को बताता है।

अध्ययन के उद्देश्य :-

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक–बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना :-

– माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक–बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रस्तुत शोध न्यादर्श :-

प्रस्तुत अध्ययन में सम्भाव्य न्यादर्श विधि का चयन किया है। सम्भाव्य न्यादर्श के अर्न्तगत आने वाली यादृच्छिक प्रतिचयन (RANDOM SAMPLING) लाटरी विधि का प्रयोग किया है। अतः जिला विद्यालय निरीक्षक आगरा मण्डल के कार्यालय से प्राप्त सूची के आधार पर लाटरी विधि द्वारा शोधकर्ता ने माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया है।

प्रस्तुत अध्ययन में आगरा मण्डल के माध्यमिक स्तर के सरकारी, अर्द्धसरकारी एवं निजी विद्यालयों के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के 15 विद्यालयों से 200 दिव्यांग बालक–बालिकाओं का चयन किया गया।

शोध विधि :-

अध्ययन की प्रकृति को देखते हुए शोध विधि के रूप में सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण :-

प्रस्तुत अध्ययन में डेनिमल द्वारा निर्मित संवेगात्मक बुद्धि परीक्षण का प्रयोग द्वारा निर्मित की गई मानकीकृत सांवेगिक बुद्धि सूची (Emotional Intelligence Scale) (EIS) का प्रयोग किया है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ :-

– मध्यमान (Mean)
– मानक विचलन (Standard Deviation)
– मानक त्रुटि (D)
– क्रान्तिक अनुपात (C.R.)

विश्लेषण एवं व्याख्या :-

परिकल्पना – माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक–बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका

विद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात (t)	Df	सार्थकता स्तर
दिव्यांग बालक	100	40.40	6.453	0.911	1.09	198	0.05 पर सार्थक अन्तर नहीं है।
दिव्यांग बालिकायें	100	40.58	6.403				

उपरोक्त तालिका द्वारा माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक–बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालकों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान 40.40 तथा मानक विचलन 6.453 है। माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान 40.58 तथा मानक विचलन 6.403 है। उपरोक्त सारणी में मानक त्रुटि 0.911 है। अन्तर की सार्थकता ज्ञात करने के लिए टी का मान ज्ञात किया गया है। उपरोक्त सारणी में टी का मान 1.09 तथा Df 198 है। 0.05 सार्थकता स्तर पर प्राप्त मान सार्थक नहीं है। अतः दोनों समूह के अंतर सार्थक नहीं है, अर्थात शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है।

अतः कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तर पर माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दिव्यांग बालक–बालिकाओं की सांवेगिक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।

शैक्षिक निहितार्थ :–

शिक्षा के क्षेत्र में देखा जाए तो संवेगात्मक बुद्धि का शिक्षण प्रक्रिया से सीधा सम्बन्ध है। हम जानते हैं कि शिक्षा का कार्य बालक तथा बालिकाओं का सर्वांगीण विकास करना है। संवेगात्मक बुद्धि किसी भी व्यक्ति के जीवन की प्रत्येक अवस्था में अहम भूमिका अदा करती है। विद्यार्थी की किशोरावस्था में तो संवेगात्मक बुद्धि उनके व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् सभी छात्र एवं छात्राएँ अपने जीवन की किशोरावस्था में होता है। किशोरावस्था को मानव जीवन की सबसे संवेदनशील (Sensitive) अवस्था माना जाता है। इस अवस्था में विद्यार्थियों के संवेगों में पल–पल पर बदलाव आता रहता है। अतः माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् सभी छात्र एवं छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धि को उत्तम बनाए रखने हेतु यह आवश्यक है कि उनको एक ऐसा समुचित एवं स्वस्थ वातावरण प्रदान किया जाए जिससे उनमें कभी भी हीन भावना ग्रसित न हो।

बालक अनेक प्रकार की सम्भावनाएं लेकर शैक्षिक जगत में प्रवेश करता है, उसके विकास की सीमाएं बहुत विशाल और विस्तृत होती है। बालक के व्यक्तित्व के विकास में संवेगात्मक परिपक्वता के महत्वपूर्ण योगदान की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। समाज के साथ स्वस्थ समायोजन बालक के संवेगों का परिशोधन कर उनमें परिपक्वता लाता है। समाज के द्वारा संवेगों के परिपक्व और अपरिपक्वन का निर्माण होता है। जब तक विद्यार्थी का मन स्वथ्य और संवेगां में परिपक्वता नहीं होगी, तब तक वह किसी कार्य को ठीक प्रकार से नहीं कर सकता। बालक आत्मविश्वास में कमी महसूस करेगा तथा सामाजिक, संवेगात्मक तथा पारिवारिक वातावरण में भी समायोजन भली–भांति नहीं कर पायेगा। मानसिक उलझनों, अपरिपक्व संवेगों तथा असंतुलित दिनचर्या से प्रभावित बालक सफल जीवन जीने में कठिनाई का अनुभव करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. भार्मा आर0 ए0 (2005), 'ि ाक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन एवं मूल्यांकन'' से उद्धृत पेज 331
2. पाठक, पी0 डी0 (2010, ''शिक्षा मनोविज्ञान'', आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर, तृतीय संस्करण, पृ0–10–15
3. राय, पारसनाथ एवं राय, सी0पी0 (2014), ''अनुसंधान परिचय'', मेरठ : लक्ष्मी नारायण त्रयोदश संस्करण, पृ0–20–26

4. पाल, य ा (2014), ''प्रमाणिक वि लेशण द्वारा सृजनात्मकता और बुद्धि के बीच अन्तर क्षेत्रीय सम्बन्धों के आधार पर अध्ययन'', फैजाबाद : लघु शोध प्रबन्ध, डॉ0 राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय।
5. नागपाल (2015), ''डेवलपमेन्ट ऑफ क्रिएटिविटी एण्ड एचीवमेन्ट का अध्ययन'', जयपुर : शोध पत्र, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद।
6. चढ्ढा, (2016), ''सृजनात्मकता, बुद्धि, और विद्धता की उपलब्धियों के सापेक्ष अध्ययन'', जौनपुर : अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय।
7. तिलागाविठी (2016), ''बुद्धि, सृजनात्मकता और चिंता के बीच भौक्षणिक उपलब्धि में सम्बन्ध'', वर्धाः अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय।
8. सिंह, अजीत (2016), ''ए स्टडी ऑफ क्रिएटिविटी इन हाईस्कूल स्टूडेन्ट इन रिलेशन टू इन्टेलीजेन्स एण्ड सोशियो इकोनामिक स्टेट्स''।
9. शुक्ला, जे0पी0 तथा शर्मा वी0पी0 (2017), ''वैज्ञानिक सृजनात्मकता में लिंगभेद के अन्तर का अध्ययन'', कानपुर : शोध पत्र, नव निकष, ज्ञानोदय पब्लिकेशन, जी.टी. रोड, रामादेवी, पृ0 35–39।
10. गुप्ता, ए0 के0 (2017), 'सृजनात्मकता में लिंग भेद के सम्बन्ध में कुछ नवीन स्पष्टीकरण'', भोपाल : शोध पत्र, अनुसंधान वाटिका, वाल्यूम–4, आईएसबीएन–2456–2645, मई, 2017, पृ0 103–107
11. महरोत्रा (2018), ''वाराणसी के लाभान्वित तथा अलाभारित हाईस्कूल छात्रों के बुद्धि, सृजनात्मकता और शैक्षिक उपलब्धि पर अध्ययन।''

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 143–147

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता

ममता सुशील, शोधार्थी,
डॉ. एकता भारद्वाज, शोध निर्देशिका
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय, गजरौला (उत्तर प्रदेश)

सारांश :-

स्वामी विवेकानंद भारतीय ज्ञान प्रणाली (Indian Knowledge System - IKS) के एक महान प्रचारक और व्याख्याता थे। उन्होंने भारतीय सांस्कृतिक, वेदांत, योग, और आध्यात्म के माध्यम से विश्व को एक समग्र एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान किया। उनका मानना था कि शिक्षा केवल सूचनाओं का संग्रह नहीं, बल्कि आत्मबोध, नैतिकता और राष्ट्रनिर्माण का माध्यम होनी चाहिए। भारतीय ज्ञान प्रणाली, जो वेद, उपनिषद, पुराण, योग, आयुर्वेद, खगोल विज्ञान, और तर्कशास्त्र पर आधारित है, स्वामी विवेकानंद के विचारों से गहराई से प्रभावित रही है। विवेकानंद ने भारतीय ज्ञान प्रणाली की संकल्पनात्मक रूपरेखा को स्पष्ट करते हुए इसे आत्मोन्नति, व्यावहारिकता और सार्वभौमिकता से जोड़ा। वे मानते थे कि ज्ञान का उद्देश्य आत्मशक्ति और चरित्र निर्माण है। उन्होंने भारतीय दर्शन को केवल आध्यात्मिकता तक सीमित न रखकर इसे विज्ञान, समाज और राष्ट्र निर्माण से जोड़ा। उनका विश्वास था कि योग, ध्यान, और वेदांत के सिद्धांतों के माध्यम से व्यक्ति और समाज में नवजागरण लाया जा सकता है।

स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में भारतीय ज्ञान प्रणाली केवल अतीत का गौरव नहीं, बल्कि भविष्य की दिशा तय करने वाली शक्ति है। उन्होंने पश्चिमी सभ्यता के वैज्ञानिक दृष्टिकोण और भारतीय ज्ञान की आध्यात्मिकता का समन्वय कर एक समग्र शिक्षा प्रणाली की कल्पना की। उनकी शिक्षा प्रणाली में स्वावलंबन, सामाजिक न्याय, महिलाओं का उत्थान, और मानवतावाद प्रमुख तत्व थे। आज, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) में भारतीय ज्ञान प्रणाली को पुनः महत्व दिया जा रहा है, जो विवेकानंद की दृष्टि को साकार करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। उनका संदेश हमें अपनी परंपराओं को आधुनिक संदर्भ में पुनः विकसित करने और उन्हें वैश्विक मंच पर स्थापित करने की प्रेरणा देता है।

की वर्ड :-

'स्वामी विवेकानंद', 'भारतीय ज्ञान प्रणाली', 'वेद, उपनिषद, पुराण', 'योग, ध्यान, वेदांत', 'आध्यात्मिकता और विज्ञान का समन्वय', 'आत्मोन्नति और चरित्र निर्माण', 'राष्ट्रनिर्माण और सामाजिक न्याय', 'स्वावलंबन और

मानवतावाद', 'महिला सशक्तिकरण', 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020)

प्रस्तावना :-

भारतीय ज्ञान प्रणाली एक समृद्ध बौद्धिक विरासत है, जो प्राचीन काल से चली आ रही है। इसके अंतर्गत ज्ञान, विज्ञान, लौकिक और पारलौकिक, कर्म, धर्म तथा भोग और त्याग का अद्‌भुत समन्वय है। भारतीय ज्ञान प्रणाली अर्थात वह ज्ञान जो वेदों, उपनिषदों, शास्त्रीय पांडुलिपियों के रूप में प्राचीन समय से दिया जा रहा है। इस प्रणाली के अंतर्गत मानव को अपना जीवन यापन करने के लिए व्यावहारिक ज्ञान पर अत्यधिक बल दिया गया है जैसे शिल्प, कौशल जलवायु, कृषि, पारंपरिक चिकित्सा, खगोल विज्ञान आदि। प्राचीन काल से ही मौखिक परंपरा के अंतर्गत ज्ञान को कहानियों, कविताओं लोक कथाओं, अनुष्ठानों गीतों, पौराणिक कथाओं, दृश्य कला व वास्तु कला के माध्यम से दिया जाता था। भारतीय ज्ञान प्रणाली के अंतर्गत भरत मुनि ने अपना पहला नाट्य शास्त्र लिखा। चरक, व सुश्रुत ने आयुर्वेद विज्ञान की रचना की। भारत के तक्षशिला, नालंदा विश्वविद्यालय शिक्षा व शोध के प्रमुख केंद्र थे, जहां पर विदेश से भी शिक्षार्थी शिक्षा प्राप्त करने आते थे। भारतीय कला व साहित्य के इतिहास पर गौर किया जाए तो वह मानवीय अनुभव की अभिव्यक्ति के रूप में विकसित हुई। रामायण, महाभारत महाकाव्य केवल कथाएं ही नहीं थी बल्कि मानव स्वभाव के सार का गहन अध्ययन थे। कालिदास जैसे कवियों ने शकुंतला शकुंतला और मेघदूतम जैसी रचनाएं रची। जिसके अंतर्गत भावनाओं व प्रकृति की सुंदरता को भावपूर्ण छंदों के रूप में कैद किया गया।

समकालीन भारतीय ज्ञान प्रणाली :-

भारतीय ज्ञान परंपरा का द्वैत से अद्वैत की यात्रा करना है। आदि शंकराचार्य से लेकर स्वामी विवेकानंद तक सभी ने भारतीय ज्ञान परंपरा को वेदांत के रूप में आगे बढ़ाने का कार्य किया है। स्वामी जी ने कहा था कि कला, विज्ञान व धर्म एक ही सत्य के अभिव्यक्ति के विभिन्न माध्यम हैं। जिसे समझने के लिए निश्चित ही हमें अद्वैत के सिद्धांत को अपनाना होगा। विवेकानंद अपने समकालीन भारत की दयनीय स्थिति को समझते थे। वे भारतीय परंपरा, संस्कृति, महान विरासत व आध्यात्मिकता के महत्व को भी जानते थे। वह मानते थे कि भारतवासियों को नींद से जागने की आवश्यकता है। वे आध्यात्मिक ज्ञान को परम लक्ष्य मानकर कहते थे। कि चरम लक्ष्य भले ही दूर हो,पर उठो, जागो जब तक उद्देश्य की प्राप्ति ना कर लो जब तक रुको मत। स्वामी विवेकानंद ने समकालीन भारत को वैज्ञानिक दृष्टि द्वारा सामाजिक विश्लेषण करते हुए पाया कि पहले धर्म का अंधविश्वास था और अब विज्ञान का। उन्होंने द्वैत से अद्वैत तक पहुंचाने की वैज्ञानिक पुष्टि की और बताया की द्वैत की अपेक्षा अद्वैत की चैतन्य अवस्था अत्यधिक है। जो कुछ तुम देख रहे हो या अनुभव कर रहे हो, वह सब (परमात्मा) है। तुम्हारे अंदर अशुभ ना रहने पर तुम अशुभ किस प्रकार देखोगे? साधु हो जाओ, तुम्हारे अंदर साधु भाव एकदम चला जाएगा। इस प्रकार सारे जगत का परिवर्तन हो जाएगा। इससे समाज को लाभ होगा। यह सब भारत के प्राचीन काल से ही अनेक महात्मा द्वारा आविष्कृत व कार्य रूप में परिणत हुए, परंतु आचार्य की संकीर्णता और राष्ट्र की पराधीनता जैसे कारणों से ये भाव संपूर्ण जगत में फैल न सके। वेदांत को संपूर्ण रूप से व्यावहारिक होना अत्यंत आवश्यक है। किसी सिद्धांत या ज्ञान को यदि कार्य के रूप में परिणत नहीं किया जाएगा तो उसका बौद्धिक व्यायाम के अतिरिक्त कोई और मूल्य नहीं रह जाता। हमें अपने जीवन की सभी अवस्थाओं में ज्ञान को कार्य के रूप में परिणत करना चाहिए। वेदांत एक अखंड वस्तु के संबंध में उपदेश देता

है, वह कहता है एक ही प्राण सर्वत्र विद्यमान है।

विवेकानंद की ज्ञान प्राप्ति की विशिष्ट प्रणाली :–

19वीं सदी के भारतीय आध्यात्मिक व दार्शनिक परिदृश्य में महान व्यक्ति स्वामी विवेकानंद की भारतीय ज्ञान परंपरा, प्रणाली और विचारों ने लाखों लोगों को प्रेरित किया है, जो ज्ञान प्राप्ति व आध्यात्मिक विकास के लिए समग्र दृष्टिकोण की वकालत करते हैं। स्वामी विवेकानंद ने वेदांत के आदर्शवादी पक्ष को व्यावहारिक रूप प्रदान करके नव वेदांत का प्रतिपादन किया। नव वेदांत विविधता में एकता का संदेश प्रदान करता है। उनका विश्वास था की नव वेदांत विश्व का कल्याण करेगा और भारत को उन्हें विश्व गुरु की प्रतिष्ठा दिलाएगा।

विवेकानंद की ज्ञान प्राप्ति की विशिष्ट प्रणाली इस प्रकार हैं :–

1. **साक्षात अनुभव** – स्वामी विवेकानंद ने आध्यात्मिक साक्षात्कार और ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रत्यक्ष अनुभव पर अत्यधिक बल दिया है। उन्होंने व्यक्ति को शास्त्रों पर निर्भर रहने के बजाय व्यक्तिगत अनुभव प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया है। उनके अनुसार सच्चा ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभूति अन्तर्ज्ञान व आंतरिक दिशा से उत्पन्न होता है।
2. **तर्क व अंतर्ज्ञान का समावेश** – विवेकानंद ने ज्ञान की खोज में तर्क और अंतर्ज्ञान के समावेश की वकालत की है। उन्होंने तर्कसंगत जांच और बौद्धिक विश्लेषण के मूल्य को स्वीकार करते हुए आंतरिक ज्ञान व आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि की भूमिका पर भी बल दिया ,जिसमें वास्तविकता की गहरी सहज बोध शामिल है।
3. **व्यावहारिक अनुप्रयोग** – स्वामी विवेकानंद ने दैनिक जीवन में ज्ञान के व्यावहारिक अनुप्रयोग पर बल दिया है। सैद्धांतिक समझ को क्रिया व व्यावहारिक ज्ञान में परिवर्तित करने पर महत्व दिया। उनके अनुसार सच्चे ज्ञान से ही सकारात्मक व रचनात्मक कार्य संभव हैं। जिसके द्वारा व्यक्ति और समाज दोनों का भला हो सकता है।
4. **सार्वभौमिकता एवं ज्ञान की एकता** – विवेकानंद के समावेशी दृष्टिकोण ने सहिष्णुता, समझ तथा सभी प्राणियों के परस्पर जुड़ाव को बढ़ावा दिया। उन्होंने सार्वभौमिक दृष्टिकोण को महत्व दिया। उन्होंने सभी ज्ञान प्रणालियों व धार्मिक परंपराओं की अंतर्निहित एकता पर अत्यधिक बल दिया और कहा कि विभिन्न मार्ग एक ही परम सत्य की ओर ले जाते हैं।

स्वामी जी भारतीय संस्कृति के महत्व को जानने व समझने के लिए भारतवासियों को सदैव प्रेरित करते रहे हैं। उनका मानना था कि वैदिक संस्कृति भारत की आत्मा है और आध्यात्मिकता भारत का मेरुदंड है। संस्कृति से ही व्यक्ति संस्कारवान बनता है व उसके चरित्र का गठन होता है, परंतु आधुनिकता ने प्राचीन भारतीय संस्कृति के आधार स्तंभ पर गहरा प्रहार किया है। जिसका मूल कारण भारतीय संस्कृति, ज्ञान व संस्कारों को त्याग कर विदेशी सभ्यता व संस्कृति को आत्मसात कर लेना है। उनका कहना था कि सभी वस्तुएं एक ही शक्ति की घोतक हैं। वे मानते थे कि किसी परीक्षा को उत्तीर्ण करने मात्र से ही व्यक्ति शिक्षित नहीं हो जाता बल्कि वास्तविक शिक्षा तो मनुष्य को अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जीवन संघर्ष के लिए तैयार करती है। उन्होंने अपने शिक्षा दर्शन में एकाग्रता, ब्रह्मचर्य, आत्मनिष्ठा मन, वचन व कर्म की शुद्धि पर विशेष बल दिया है। विवेकानंद का एकीकृत, प्रगतिशील और आध्यात्मिक रूप से जागरूक भारत का सपना आज भी गूंज रहा है। स्वामी विवेकानंद के दर्शन व विचारधारा को अपनाकर राष्ट्र व समाज को भारतीय संस्कृति व प्रणाली में समाहित किया जा सकता है। वर्तमान की युवा पीढ़ी के लिए यह अति आवश्यक है कि वह अपनी मूल संस्कृति विज्ञान

को पहचाने। अब समय आ गया है भारत के द्वारा विश्व को दिए गए ज्ञान को संजोकर इसका संवर्धन किया जाए और मानव को संस्कृति व भारतीय ज्ञान प्रणाली से जोड़ा जाए तभी इसकी उपादेयता सिद्ध होगी। हमारे प्राचीन संस्कार हमें धरती को माता मानकर उसकी शोषण नहीं बल्कि पोषण करने की प्रेरणा प्रदान करते हैं। प्राचीन काल में भारत को विश्व गुरु का दर्जा प्राप्त था, जिसे बनाए रखना हमारा परम कर्तव्य व जिम्मेदारी है। निःसंदेह गुरु का दर्जा हमारी आधुनिक उपलब्धियों के कारण नहीं बल्कि भारतीय प्राचीन गौरवशाली, उन्नत, संस्कृति व विज्ञान के कारण है। विज्ञान की प्रगति हर युग की आवश्यकता है परंतु इसमें दूरदर्शिता व मानव कल्याण का भाव सर्वोपरि होना चाहिए। स्वामी विवेकानंद ने अपनी वाणी व कर्म से भारतीयों में यह अभिमान जताया कि हम अत्यंत प्राचीन सभ्यता में संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं।

विवेकानंद एवं भारतीय ज्ञान प्रणाली की वर्तमान समय में प्रासंगिकता :-

19वीं सदीं के भारत के प्रतिभाशाली चिंतकों में से प्रमुख हैं स्वामी विवेकानंद। विवेकानंद ने भारतीय ज्ञान प्रणाली और सांस्कृतिक विरासत के आधार पर एक राष्ट्रीय प्रणाली को आरंभ करने की वकालत की है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन बच्चों में भारतीय संस्कार व मूल्यों को विकसित करने के लिए वर्तमान में प्रासंगिक है। उनके शैक्षिक दर्शन का महत्वपूर्ण पहलू बाल–केंद्रित शिक्षा प्रदान करना है। उन्होंने सभी को न्यूनतम शिक्षा उपलब्ध कराने व भारतीय संस्कृति की विरासत विकसित करने की वकालत की है। अतः उनका शैक्षिक दर्शन बच्चों में भारतीय संस्कृति के आवश्यक मूल्यों को विकसित करने में आज भी प्रासंगिक है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन वर्तमान संदर्भ में आधुनिक भारत की आवश्यकताओं व हमारे संविधान की प्रस्तावना में परिलक्षित होता है। बालक की शिक्षा इन स्तंभों – धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद व लोकतंत्र पर आधारित होनी चाहिए। वे धर्म के प्रति उदार दृष्टिकोण रखते थे और धर्मनिरपेक्षता के मूल्य की वकालत करते थे। उन्होंने मुफ्त में अनिवार्य शिक्षा के साथ–साथ व्यस्क शिक्षा पर भी बल दिया। उन्होंने शिक्षा में मानवतावाद, समतावाद भावना का पुनर्जीवित किया। उन्होंने महिलाओं की शिक्षा को राष्ट्र की उन्नति के लिए प्रमुख साधन माना। उनके चिंतन में दलित महिलाओं व गरीबों के उत्थान और कर्म की प्रधानता का विचार विशेष रूप से उपस्थित रहा। उन्होंने पाश्चात्य भौतिकवादी जनता के सम्मुख भारतीय आध्यात्मिक वाद का महानतम आदर्श प्रस्तुत करके भारत की वास्तविक चिंतन धारा का चित्र प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष :-

भारतीय ज्ञान प्रणाली संपूर्ण विश्व के लिए एक प्रमुख बौद्धिक संपदा है, जो सदियों से चली आ रही है और मानव विकास का अभिन्न अंग भी है। इसके माध्यम से भारत की सांस्कृतिक विरासत, रीति रिवाज, परंपराओं,विश्वासों व ज्ञान प्रणालियों को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित किया जा रहा है। विवेकानंद जी मानवता के सच्चे प्रतीक थे। वे अद्वैत वेदांत के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति व भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल अस्तित्व को बनाए रखने का आह्वान किया ताकि आने वाली पीढ़ी नैतिक गुणों से युक्त न्याय प्रिय, संस्कारिक, सत्यधर्मी तथा आध्यात्मिक व भारतीय आदर्श के सच्चे प्रतीक के रूप में विश्व में ऊंचा व सम्मानजनक स्थान पाए। वर्तमान समय में इसकी अत्यधिक आवश्यकता है भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुसार यह जगत मिथ्या है मिथ्या अर्थात मन से बनाया हुआ कथा वाचन के मौखिक परंपरा से भारतीय ज्ञान ने संपूर्ण देश को एक चैतन्य में पिरोया है। वेदांत दर्शन एक देश एवं कल के लिए नहीं है, इसके आधार पर एक सार्वभौमिक जीवन पद्धति

का निर्माण किया जा सकता है। विवेकानंद का वेदांत दर्शन संसार भर के दार्शनिकों चिंतकों के विचारों में उत्कृष्ट है। विवेकानंद के सिद्धांत व्यक्ति को आत्म खोज, सेवा भाव तथा आध्यात्मिक पूर्णता की परिवर्तनशील यात्रा के लिए प्रेरित करता है। यदि आज का युवा स्वामी विवेकानंद की ज्ञान प्रणाली व शिक्षाओं को आत्मसात करने का संकल्प कर लें तो यही उनके लिए सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

संदर्भ सूची :-

1. अग्रवाल, जे.सी. (2008) उभरते भारतीय समाज में शिक्षा, जन शिप्रा प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. सक्सेना, एन. आर. स्वरूप (2009) शिक्षा दर्शन एवं पाश्चात्य तथा भारतीय शिक्षा, आर. लाल बुक डिपो मेरठ।
3. पाण्डेय, रामशकल (1999) विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
4. अंसारी, मो. सरफराज, भारतीय ज्ञान परंपरा और स्वामी विवेकानंद (2019) शोधार्थी, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा महाराष्ट्र, आभ्यंतर अंक 10 भाग 1 जनरल।
5. विवेकानंद साहित्य भाग (प्रथम से दशम) 2017 अद्वैत आश्रम कोलकाता।
6. जोशी, मनोहर लाल स्वामी विवेकानंद के दर्शन में दार्शनिक एवं सामाजिक विचार शोध समागम, आईएसएसएन न. 2581–6918
7. गिरिराजशरण, (2015) मैं विवेकानंद बोल रहा हूं, प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली।
8. शीलक राम, व्यावहारिक दर्शनशास्त्र (2015) कल्पना प्रकाशन, जहांगीरपुर, दिल्ली।
9. प्रेमी, महेंद्र कुमार (2012) शोधार्थी, विश्वविद्यालय रायपुर छत्तीसगढ़, संस्कृति, शिक्षा एवं धर्म के संदर्भ में स्वामी विवेकानंद का दर्शन एक दर्शन शास्त्रीय विवेचना।
10. सरित, सुशील एवं भार्गव अनिल (2004) आधुनिक भारतीय शिक्षाविदों का चिंतन, वेदांत पब्लिकेशन, भार्गव बुक हाउस कचहरी घाट, आगरा।
11. विवेकानंद, स्वामी व्यक्तित्व का विकास स्वामी ब्रह्मा स्नत्थानंद (अध्यक्ष) रामकृष्ण मठ, धन्तोली, नागपुर।
12. तोमर, लज्जाराम (2013) प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति नई दिल्ली सुरुचि प्रकाशन।

मो0–9997598328

email- mamtasushil19@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 148–159

बक्सर जिला के दलसागर गांव में ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने में आधुनिक संचार तकनीक की भूमिका

नीतीश वर्धन
सहायक प्राध्यापक (अतिथि),
समाजशास्त्र विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव महाविद्यालय, शाहपुर पटोरी, समस्तीपुर, बिहार।

सारांश :

ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में उद्यमिता को सुदृढ़ बनाने हेतु आधुनिक संचार तकनीक एक अत्यंत महत्वपूर्ण साधन के रूप में उभरकर सामने आई है। बक्सर ज़िले के दलसागर गांव का अध्ययन यह दर्शाता है कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) ग्रामीण समुदाय में आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक सशक्तिकरण तथा नवीन व्यावसायिक अवसरों के लिए आधारभूमि तैयार कर रही है। मोबाइल फ़ोन, इंटरनेट, ई-कॉमर्स प्लेटफार्म, डिजिटल भुगतान प्रणाली तथा सरकारी डिजिटल पोर्टल ग्रामीण उद्यमिता को नए आयाम प्रदान कर रहे हैं (अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान [IIPS], 2021)। इस शोध में यह प्रतिपादित किया गया है कि तकनीकी नवाचारों ने न केवल विपणन और वितरण की प्रक्रिया को सरल बनाया है बल्कि उद्यमिता को स्थानीय से वैश्विक स्तर तक जोड़ने में सहायक भूमिका निभाई है (भारत सरकार, 2022)। दलसागर गांव के किसानों, कारीगरों तथा सूक्ष्म उद्यमियों ने डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से अपने उत्पादों को व्यापक बाजार तक पहुँचाने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की है। तथापि, नेटवर्क अवसंरचना की कमी, तकनीकी दक्षता का अभाव तथा पूँजी निवेश की जटिलताएँ अभी भी प्रमुख चुनौतियों के रूप में विद्यमान हैं (कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, 2021)।

इस अध्ययन का उद्देश्य आधुनिक संचार तकनीक की भूमिका का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट करना है कि किस प्रकार ICT ग्रामीण उद्यमिता को विकासोन्मुख पथ पर अग्रसर करती है। साथ ही, यह अध्ययन ग्रामीण जनसमुदाय की भागीदारी, डिजिटल साक्षरता तथा नवाचार क्षमता को बढ़ाने हेतु रणनीतियों की आवश्यकता को रेखांकित करता है (विश्व बैंक, 2020)। इस प्रकार, दलसागर गांव का यह समाजशास्त्रीय एवं आर्थिक अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि आधुनिक संचार तकनीक न केवल उद्यमिता के परिदृश्य को परिवर्तित कर रही है, बल्कि यह ग्रामीण जीवनशैली, उत्पादन प्रणाली और सामाजिक ढाँचे में भी क्रांतिकारी परिवर्तन का माध्यम बन रही है (UNDP, 2021)।

मुख्य शब्द :- ग्रामीण उद्यमिता; संचार प्रौद्योगिकी; डिजिटल साक्षरता; आर्थिक आत्मनिर्भरता; दलसागर गांव; बक्सर जिला; सूचना एवं संचार तकनीक; विपणन नवाचार; सामाजिक सशक्तिकरण।

परिचय ;

ग्रामीण भारत आज जिस परिवर्तनशील दौर से गुजर रहा है, उसमें आधुनिक संचार तकनीक की भूमिका अत्यंत निर्णायक मानी जा रही है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) ने ग्रामीण परिदृश्य में न केवल ज्ञान-विनिमय की प्रक्रिया को सशक्त किया है, बल्कि स्थानीय उद्यमियों के लिए नए अवसर भी प्रस्तुत किए हैं। डिजिटल नेटवर्क, मोबाइल संचार, ऑनलाइन विपणन, तथा ई-गवर्नेंस के माध्यम से ग्रामीण समुदाय उत्पादन, वितरण और उपभोग की शृंखलाओं से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ने लगे हैं (भारत सरकार, 2022)। दलसागर गांव, जो बक्सर ज़िले का एक महत्वपूर्ण ग्रामीण क्षेत्र है, वहां के उद्यमी पारंपरिक कृषि, कुटीर उद्योग और लघु उत्पादन इकाइयों पर आधारित हैं। परंतु, आधुनिक संचार साधनों की पहुँच ने उनके आर्थिक व्यवहार और व्यावसायिक दृष्टिकोण में उल्लेखनीय परिवर्तन किया है। डिजिटल भुगतान प्रणाली, मोबाइल बैंकिंग तथा ऑनलाइन व्यापार प्लेटफार्मों ने आर्थिक लेन-देन को पारदर्शी और तीव्र बनाया है (IIPS, 2021)। इसी प्रकार, सोशल मीडिया और ई-कॉमर्स पोर्टल ने विपणन के दायरे को स्थानीय सीमाओं से बाहर निकालकर क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर तक विस्तारित किया है (विश्व बैंक, 2020)। हालाँकि, इन अवसरों के बीच चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं। नेटवर्क अवसंरचना की सीमाएँ, तकनीकी साक्षरता का अभाव, तथा वित्तीय पूँजी की कमी ग्रामीण उद्यमियों की प्रगति में बाधक सिद्ध हो रही हैं (कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, 2021)। फिर भी, यह निर्विवाद है कि सूचना एवं संचार

प्रौद्योगिकी ग्रामीण समाज को आत्मनिर्भरता, नवाचार और प्रतिस्पर्धात्मकता की दिशा में अग्रसर कर रही है (UNDP, 2021)। अतः यह अध्ययन इस तथ्य की विवेचना करता है कि दलसागर गांव जैसे ग्रामीण क्षेत्र में आधुनिक संचार तकनीक किस प्रकार उद्यमिता को प्रोत्साहित करने, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गतिशील बनाने और सामाजिक संरचना को सशक्त करने में सहायक सिद्ध हो रही है।

उद्देश्य एवं प्रयोजन :

इस शोध का मूल प्रयोजन यह स्पष्ट करना है कि किस प्रकार आधुनिक संचार प्रौद्योगिकी (ICT) दलसागर गांव जैसे ग्रामीण क्षेत्र में उद्यमिता को सुदृढ़, नवोन्मेषी तथा आत्मनिर्भर बनाने का माध्यम बन रही है। अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

- **ग्रामीण उद्यमिता की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण करना** - दलसागर गांव में कृषि, कुटीर उद्योग, लघु उत्पादन इकाइयों एवं सेवा-क्षेत्र पर आधारित उद्यमिता की मौजूदा दशा का समाजशास्त्रीय एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य से अध्ययन करना (IIPS, 2021)।
- **संचार तकनीक की पहुँच का मूल्यांकन करना** - यह जाँचना कि मोबाइल, इंटरनेट, डिजिटल भुगतान प्रणाली, ई-कॉमर्स और सोशल मीडिया जैसे आधुनिक साधन ग्रामीण समुदाय तक किस स्तर पर पहुँचे हैं तथा उनका उपयोग किस प्रकार हो रहा है (भारत सरकार, 2022)।
- **उद्यमिता में तकनीकी योगदान की पहचान करना** - यह विश्लेषण करना कि ICT किस प्रकार विपणन, वितरण, पूंजी प्रवाह एवं उपभोक्ता संपर्क को सशक्त बना रही है (विश्व बैंक, 2020)।
- **चुनौतियों और अवरोधों का अध्ययन करना** - तकनीकी दक्षता की कमी, नेटवर्क अवसंरचना की सीमाएँ, पूँजीगत कठिनाइयाँ एवं डिजिटल असमानताओं जैसी बाधाओं का मूल्यांकन करना (कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, 2021)।
- **सामाजिक एवं आर्थिक प्रभावों को स्पष्ट करना** - यह देखना कि ICT आधारित उद्यमिता ग्रामीण जीवनशैली, आय स्तर, रोजगार के अवसर एवं सामाजिक संरचना पर किस प्रकार प्रभाव डाल रही है (UNDP, 2021)।
- **स्थानीय-वैश्विक संबंधों की पड़ताल करना** - ग्रामीण उद्यमिता को स्थानीय बाजार से जोड़ते हुए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँचाने में ICT की भूमिका का अध्ययन करना (OECD, 2019)।

- **नीतिगत सुझाव प्रदान करना** - नीति-निर्माताओं, ग्राम पंचायतों तथा विकास संस्थाओं के लिए ऐसे सुझाव प्रस्तुत करना जो ग्रामीण उद्यमिता को तकनीकी आधार पर और अधिक सशक्त बना सकें (NITI Aayog, 2020)।

परिकल्पना :

इस शोध की आधारभूत परिकल्पनाएँ निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत की जा सकती हैं -

- **आधुनिक संचार प्रौद्योगिकी ग्रामीण उद्यमिता को सुदृढ़ करती है** - यह मान्यता है कि मोबाइल, इंटरनेट, डिजिटल भुगतान और ई-कॉमर्स जैसे साधन उद्यमियों को विपणन, पूँजी प्रवाह तथा उपभोक्ता संपर्क में दक्ष बनाते हैं (भारत सरकार, 2022)।
- **डिजिटल अवसंरचना उद्यमिता की वृद्धि का प्रमुख आधार है** - यदि दलसागर गांव जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में नेटवर्क सुविधा और तकनीकी उपकरणों की उपलब्धता बढ़े, तो उद्यमिता की तीव्र प्रगति संभव है (विश्व बैंक, 2020)।
- **डिजिटल साक्षरता सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाती है** - ग्रामीण समुदाय में ICT के उपयोग की दक्षता रोजगार के नए अवसर, आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक सशक्तिकरण को प्रोत्साहित करती है (IIPS, 2021)।
- **ICT स्थानीय-वैश्विक संबंधों को सशक्त करती है** - यह मान्यता है कि संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से ग्रामीण उद्यमिता केवल स्थानीय बाजार तक सीमित नहीं रहती, बल्कि क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँच बना सकती है (UNDP, 2021)।

कार्यप्रणाली :

इस शोध के लिए वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति को अपनाया गया है। अध्ययन का क्षेत्र बक्सर ज़िले के दलसागर गांव को चयनित किया गया है, जहाँ ग्रामीण उद्यमिता के विभिन्न स्वरूप जैसे कृषि-आधारित उद्यम, कुटीर उद्योग, लघु उत्पादन इकाइयाँ तथा सेवा-क्षेत्र की गतिविधियाँ सक्रिय रूप में विद्यमान हैं। इस शोध में प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों प्रकार के आँकड़ों का उपयोग किया गया है।

- प्राथमिक आँकड़े प्रश्नावली, साक्षात्कार एवं प्रत्यक्ष अवलोकन के माध्यम से संकलित किए गए, जिनमें स्थानीय किसानों, कारीगरों, महिला स्व-सहायता समूहों तथा युवा उद्यमियों की भागीदारी शामिल रही (IIPS, 2021)। इसके अतिरिक्त, ग्राम पंचायत

अभिलेख, स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियाँ तथा डिजिटल लेन-देन से संबंधित स्थानीय आँकड़े भी संकलित किए गए।

- द्वितीयक आँकड़े विभिन्न सरकारी रिपोर्टों, नीतिगत दस्तावेज़ों, राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण, कृषि मंत्रालय की रिपोर्टों तथा विश्व बैंक एवं UNDP जैसी संस्थाओं द्वारा प्रकाशित दस्तावेज़ों से प्राप्त किए गए (भारत सरकार, 2022; विश्व बैंक, 2020; UNDP, 2021)। आँकड़ों का विश्लेषण सांख्यिकीय तथा गुणात्मक तकनीकों के संयोजन द्वारा किया गया है।

इस प्रकार यह कार्यप्रणाली न केवल संचार प्रौद्योगिकी की ग्रामीण उद्यमिता में वास्तविक भूमिका को स्पष्ट करती है, बल्कि सामाजिक-आर्थिक प्रभावों और चुनौतियों की गहन विवेचना हेतु भी उपयुक्त आधार प्रदान करती है।

ग्रामीण उद्यमिता भारतीय अर्थव्यवस्था का वह पहलू है जो न केवल स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन करता है बल्कि सामाजिक सशक्तिकरण और आर्थिक आत्मनिर्भरता का भी मार्ग प्रशस्त करता है। बक्सर ज़िले का दलसागर गांव इस परिप्रेक्ष्य में एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करता है, जहाँ पारंपरिक कृषि और कुटीर उद्योग की पृष्ठभूमि में आधुनिक संचार तकनीक ने उद्यमिता को नया रूप प्रदान किया है।

भौगोलिक एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य :

दलसागर गांव चारों दिशाओं से महत्वपूर्ण ग्रामों से घिरा है - उत्तर में सोनबरसा, दक्षिण में मुरारपुर, पूर्व में हरनाथपुर तथा पश्चिम में चौगाई स्थित है। इस क्षेत्रीय स्थिति से यह स्पष्ट है कि यह गांव न केवल स्थानीय व्यापारिक आदान-प्रदान का केंद्र है बल्कि आसपास के गांवों के साथ घनिष्ठ सामाजिक और आर्थिक संबंध भी रखता है (भारत

सरकार, 2022)।

गांव की कुल जनसंख्या 3,250 है, जिसमें पुरुषों की संख्या 1,720 (52.9%) और महिलाओं की संख्या 1,530 (47.1%) है। कार्यशील जनसंख्या लगभग 60.9% है, जो यह दर्शाती है कि यहां श्रम-शक्ति का आधार मजबूत है। शिक्षा की दृष्टि से प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों की उपस्थिति उद्यमिता के लिए एक अनुकूल वातावरण निर्मित करती है (IIPS, 2021)।

आधुनिक संचार तकनीक और ग्रामीण उद्यमिता :

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) ने ग्रामीण उद्यमिता में बहुआयामी परिवर्तन किए हैं।

1. डिजिटल विपणन और बाजार तक पहुँच :

दलसागर गांव के किसान और कारीगर अब अपने उत्पादों को केवल स्थानीय हाट-बाजार तक सीमित नहीं रखते, बल्कि ई-कॉमर्स प्लेटफार्मों के माध्यम से व्यापक बाजार तक पहुँच बना रहे हैं। मोबाइल एप्लिकेशन और सोशल मीडिया प्लेटफार्म उन्हें ग्राहकों से सीधे जोड़ते हैं (विश्व बैंक, 2020)।

2. वित्तीय समावेशन :

डिजिटल भुगतान प्रणाली, मोबाइल बैंकिंग और आधार-आधारित लेन-देन ने वित्तीय पारदर्शिता बढ़ाई है। इससे उद्यमियों को ऋण प्राप्त करना आसान हुआ है तथा पूँजी प्रवाह भी सरल हुआ है (कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, 2021)।

3. सामाजिक सशक्तिकरण :

महिलाओं और युवाओं ने स्व-सहायता समूहों और डिजिटल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से उद्यमिता में सक्रिय भागीदारी शुरू की है। ICT के माध्यम से उन्हें विपणन, लेखांकन और प्रबंधन कौशल प्राप्त हुए हैं (UNDP, 2021)।

चुनौतियाँ और सीमाएँ :

यद्यपि ICT ने उद्यमिता को नए आयाम दिए हैं, तथापि कुछ गंभीर चुनौतियाँ भी सामने आती हैं -

- **नेटवर्क अवसंरचना की कमी** - दलसागर गांव में इंटरनेट की गति और मोबाइल कनेक्टिविटी अभी भी असमान है।
- **तकनीकी दक्षता का अभाव** - ग्रामीण समुदाय के बड़े हिस्से को डिजिटल उपकरणों के उपयोग का पर्याप्त ज्ञान नहीं है।
- **वित्तीय संसाधनों की कमी** - डिजिटल साधनों में निवेश के लिए पर्याप्त पूँजी उपलब्ध नहीं है (भारत सरकार, 2022)।
- **डिजिटल असमानता** - महिलाएँ और वृद्ध वर्ग तकनीकी उपयोग में पिछड़ जाते हैं, जिससे उनके उद्यमिता में योगदान पर असर पड़ता है।

डेटा विश्लेषण

श्रेणी	संख्या	प्रतिशत (%)
कुल जनसंख्या	3,250	100
पुरुष	1,720	52.9
महिला	1,530	47.1
बालक (0-14 वर्ष)	920	28.3
वृद्ध (60+ वर्ष)	410	12.6
कार्यशील जनसंख्या	1,980	60.9
अशिक्षित जनसंख्या	1,120	34.4
प्राथमिक शिक्षा प्राप्त	870	26.8
माध्यमिक शिक्षा	760	23.3
उच्च शिक्षा प्राप्त	500	15.5

इस आँकड़े से स्पष्ट होता है कि कार्यशील वर्ग और शिक्षित जनसंख्या की उपस्थिति ICT आधारित उद्यमिता को सफल बनाने में सहायक है।

कार्यशील जनसंख्या से 50 का चयन :

कृषक 18

कारीगर 8

मजदूर 10

महिला एवं युवा उद्यमी 14

अनुसूची :

1. क्या आधुनिक जनसंचार प्रौद्योगिकी ने ग्रामीण उद्यमिता को गतिशील बनाया हैं?
    - हां 95%
    - ना 05%

2. क्या डिजिटल अवसंरचना के विकास से ग्रामीण उद्यमिता में वृद्धि हुई है?
    - हां 88%
    - ना 12%

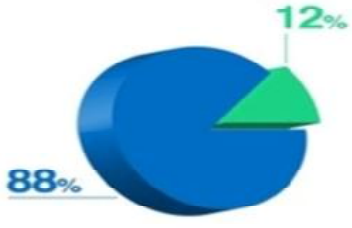

3. क्या डिजिटल प्रौद्योगिकी ने ग्रामीण सामाजिक आर्थिक जीवन को परिवर्तित किया है?
    - हां 98%

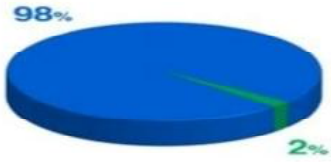

- ना 02%

4. क्या संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से ग्रामीण बाजार की पहुंच क्षेत्रीय, राष्ट्रीय,अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हुई है?
    - हां 65%
    - ना 35%

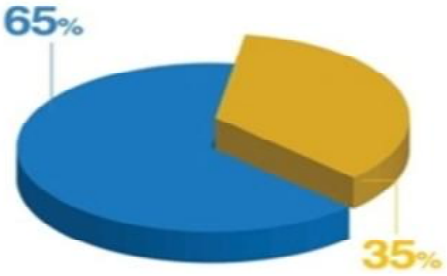

सामाजिक-आर्थिक प्रभाव :

- ICT के माध्यम से दलसागर गांव में रोजगार के अवसर बढ़े हैं।
- महिलाओं की आर्थिक भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है (NITI Aayog, 2020)।
- युवा उद्यमियों ने डिजिटल नवाचार अपनाकर प्रतिस्पर्धात्मकता हासिल की है।
- स्थानीय उत्पादों को वैश्विक बाजार तक पहुँचने का अवसर मिला है (OECD, 2019)।

दलसागर गाँव की समस्याएँ :

दलसागर गाँव ग्रामीण समाज की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करता है। यहाँ की प्रमुख समस्याएँ सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक स्तर पर स्पष्ट दिखाई देती हैं। सबसे पहली समस्या है शिक्षा का निम्न स्तर। विशेषकर महिलाओं और वृद्ध जनसंख्या में साक्षरता दर कम है। हालाँकि विद्यालय मौजूद हैं, लेकिन उच्च शिक्षा के लिए बच्चों को दूसरे कस्बों में जाना पड़ता है। दूसरी बड़ी समस्या है रोज़गार के अवसरों की कमी। अधिकांश लोग खेती और मजदूरी पर निर्भर हैं, जिसके कारण आय का स्तर कम है और युवा वर्ग को पलायन

करना पड़ता है। स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति भी संतोषजनक नहीं है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र होने के बावजूद दवाइयों और विशेषज्ञ डॉक्टरों की कमी ग्रामीणों के लिए चुनौती बनी हुई है। महिलाओं की सामाजिक स्थिति में भी सीमाएँ हैं। यद्यपि जागरूकता बढ़ रही है, फिर भी निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी कम है। स्वच्छ पेयजल, नाली व्यवस्था और सड़क निर्माण जैसी आधारभूत सुविधाएँ भी कई जगहों पर अधूरी हैं।

दलसागर गाँव के समस्याओं के समाधान :

अध्ययन से यह पाया गया कि गाँव में साक्षरता दर पुरुषों में अपेक्षाकृत अधिक है, जबकि महिलाएँ अब भी पीछे हैं। यह भी स्पष्ट हुआ कि धीरे-धीरे महिलाएँ शिक्षा और स्वरोज़गार की दिशा में आगे बढ़ रही हैं, लेकिन उन्हें सामाजिक समर्थन की आवश्यकता है। दूसरी ओर, कृषि अभी भी प्रमुख जीविका का साधन है, लेकिन आधुनिक तकनीक और प्रशिक्षण की कमी उत्पादन को सीमित करती है। स्वास्थ्य और शिक्षा की स्थिति में सुधार की आवश्यकता है। सामाजिक दृष्टि से देखा जाए तो ग्रामीणों में समुदायिक सहयोग और आपसी एकता मजबूत है, जो विकास की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है। इस प्रकार, दलसागर गाँव में कई चुनौतियाँ मौजूद हैं, किंतु सही नीतियों, योजनाओं और सरकारी सहयोग से यहाँ के लोग सामाजिक और आर्थिक विकास की ओर बढ़ सकते हैं।

निष्कर्ष :

दलसागर गाँव के सामाजिक एवं शैक्षणिक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि गाँव पारंपरिक ग्रामीण संरचना से आधुनिक परिवर्तन की ओर अग्रसर है, किंतु अभी भी अनेक चुनौतियाँ मौजूद हैं। गाँव की सामाजिक संरचना मुख्य रूप से कृषि, श्रम एवं छोटे व्यवसायों पर आधारित है। जातीय विविधता एवं सामुदायिक सहयोग यहाँ की प्रमुख विशेषता है, किंतु सामाजिक असमानता और महिलाओं की सीमित भागीदारी जैसी चुनौतियाँ सामने आती हैं। शैक्षणिक दृष्टि से देखा जाए तो प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का प्रसार हुआ है, किंतु उच्च शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा तक पहुँच अभी भी सीमित है। लड़कों की तुलना में लड़कियों की शिक्षा में पिछड़ापन देखने को मिलता है। विवाह, घरेलू कार्यभार और आर्थिक स्थिति लड़कियों की पढ़ाई पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

गाँव के लोगों में धीरे-धीरे शिक्षा और स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ रही है, किंतु आधारभूत संरचनाओं जैसे पुस्तकालय, कंप्यूटर केंद्र, कोचिंग संस्थान एवं बेहतर विद्यालयों की कमी शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। सकारात्मक पक्ष यह है कि सरकारी

योजनाओं और नीतियों जैसे राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) तथा विभिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं का प्रभाव धीरे-धीरे दिख रहा है। स्वच्छता, स्वास्थ्य सेवाओं और महिला शिक्षा के प्रति ग्रामीणों में जागरूकता आई है। कुल मिलाकर निष्कर्ष यह निकलता है कि दलसागर गाँव के सामाजिक एवं शैक्षणिक विकास की दिशा सही है, लेकिन इसे और सशक्त बनाने के लिए महिला शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, आधारभूत ढाँचे और सामाजिक समानता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि इन पहलुओं पर ध्यान दिया जाए तो गाँव का भविष्य और अधिक उज्ज्वल हो सकता है।

दलसागर गाँव के लिए सुझाव :

- **शैक्षणिक विकास** - गाँव में शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए विशेष अभियान चलाए जाएँ। प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षकों की संख्या बढ़ाई जाए और बेटियों की शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति एवं नि:शुल्क पुस्तक/ड्रेस उपलब्ध कराई जाए।
- **महिला सशक्तिकरण** - स्वयं सहायता समूह को और मजबूत किया जाए ताकि महिलाएँ स्वरोजगार से जुड़ सकें। महिला उद्यमिता और कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए।
- **रोज़गार के अवसर** - कृषि के साथ-साथ गैर-कृषि आधारित रोजगार जैसे बकरी पालन, मुर्गी पालन, हस्तशिल्प और लघु उद्योग को बढ़ावा दिया जाए। युवाओं के लिए रोजगारपरक प्रशिक्षण (Skill Development Training) की सुविधा उपलब्ध कराई जाए।
- **स्वास्थ्य सुविधाएँ** - गाँव में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (PHC) की नियमित कार्यप्रणाली सुनिश्चित की जाए। गर्भवती महिलाओं और बच्चों के लिए टीकाकरण और पोषण योजनाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन किया जाए।
- **सामाजिक जागरूकता** - बाल विवाह, लैंगिक असमानता और नशाखोरी जैसी समस्याओं पर नियंत्रण के लिए जन-जागरूकता अभियान चलाए जाएँ। पंचायत स्तर पर महिला और युवा प्रतिनिधियों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाए।
- **बुनियादी ढाँचा सुधार** - गाँव की सड़क, जल आपूर्ति और बिजली की स्थिति को बेहतर किया जाए। डिजिटल शिक्षा और सूचना प्रौद्योगिकी की पहुँच को गाँव तक पहुँचाया जाए।

- **सरकारी योजनाओं का लाभ** - प्रधानमंत्री आवास योजना, उज्ज्वला योजना, जन धन योजना, मनरेगा आदि का लाभ प्रत्येक पात्र परिवार तक पहुँचाया जाए।

इन सुझावों के क्रियान्वयन से दलसागर गाँव में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक जीवन में संतुलित विकास संभव होगा तथा ग्रामीण महिलाओं और पुरुषों दोनों का जीवनस्तर ऊँचा उठ सकेगा।

संदर्भ :

1. भारत सरकार. (2011). *जनगणना रिपोर्ट 2011: बक्सर जिला प्रोफ़ाइल.* नई दिल्ली: भारत सरकार प्रकाशन. पृ. 112-134।
2. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR). (2021). *सतत कृषि पर राष्ट्रीय रिपोर्ट 2020-21.* नई दिल्ली: आई.सी.ए.आर. प्रकाशन। पृ. 45-62।
3. अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान (IIPS) एवं ICF. (2017). *राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-4 (NFHS-4), बिहार.* मुंबई: IIPS प्रकाशन. पृ. 78-102।
4. अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान (IIPS) एवं ICF. (2021). *राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5 (NFHS-5), जिला तथ्य पत्रक: बक्सर.* मुंबई: IIPS प्रकाशन. पृ. 56-89।
5. कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय. (2021). *ग्रामीण उद्यमिता और डिजिटल इंडिया: वार्षिक रिपोर्ट 2020-21.* नई दिल्ली: भारत सरकार. पृ. 34-58।
6. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय. (2022). *डिजिटल संचार और ग्रामीण विकास: एक सरकारी अध्ययन रिपोर्ट.* नई दिल्ली: भारत सरकार. पृ. 45-72।
7. योजना एवं विकास विभाग, बिहार सरकार. (2020). *बिहार आर्थिक सर्वेक्षण 2019-20.* पटना: योजना एवं विकास विभाग। पृ. 210-235।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 160–163

डिजिटल मीडिया और युवा : सामाजिक संबंधों का बदलता स्वरूप

संदीप पारीक
सहायक आचार्य समाजशास्त्र, राजकीय कन्या महाविद्यालय, पोकरण।

डिजिटल क्रांति ने मानवीय जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। युवा वर्ग, जो किसी भी समाज की सबसे गतिशील और ऊर्जावान शक्ति होता है, इस परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित हुआ है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, मोबाइल एप्स और डिजिटल प्लेटफॉर्म ने युवाओं की जीवनशैली, सोच, संस्कृति और विशेषकर सामाजिक संबंधों को गहराई से बदल डाला है। इस शोध–पत्र में यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार डिजिटल मीडिया ने युवाओं के पारंपरिक संबंधों (परिवार, मित्रता, समुदाय) की प्रकृति को बदलकर उन्हें आभासी (Virtual) स्वरूप प्रदान किया है। इसके साथ ही मानसिक स्वास्थ्य, सांस्कृतिक पहचान और राजनीतिक भागीदारी पर भी डिजिटल मीडिया का प्रभाव समझाया गया है।

प्रमुख शब्द :– डिजिटल मीडिया, युवा, आभासी समाज, सामाजिक संबंध, तकनीक, संस्कृति।

भूमिका :–

21वीं सदी को सूचना और प्रौद्योगिकी की सदी कहा जाता है। कंप्यूटर, इंटरनेट और मोबाइल तकनीक ने मानव जीवन को पूरी तरह बदल दिया है। इस परिवर्तन के केंद्र में युवा वर्ग है। भारत दुनिया का सबसे युवा देश है, जहाँ 65% से अधिक आबादी 35 वर्ष से कम आयु की है। यही कारण है कि डिजिटल मीडिया ने युवाओं की सामाजिक पहचान और जीवनशैली पर गहरा प्रभाव डाला है। परंपरागत समाज में युवाओं के सामाजिक संबंध मुख्य रूप से परिवार, पड़ोस, जाति, विद्यालय/कॉलेज और सांस्कृतिक गतिविधियों तक सीमित थे। लेकिन अब फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर (X), यूट्यूब, व्हाट्सएप और टेलीग्राम जैसे मंच, ऑनलाइन गेमिंग और चैट एप्स, ओटीटी और डिजिटल मनोरंजन प्लेटफॉर्म ने सामाजिक संबंधों को वर्चुअल बना दिया है। प्रश्न यह है कि क्या यह बदलाव सकारात्मक है या नकारात्मक? युवा वर्ग इससे सशक्त हुआ है या अकेलापन और तनाव बढ़ा है? यही इस अध्ययन का केंद्रीय बिंदु है।

साहित्य समीक्षा :–

1. मैनुअल कास्टेल्स (2000) ने Network Society की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए बताया कि डिजिटल तकनीक ने समाज को नेटवर्क–आधारित बना दिया है, जहाँ संबंध भौगोलिक सीमाओं से परे होते हैं।

2. बॉयड और एलिसन (2007) ने सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर अध्ययन करते हुए पाया कि युवाओं की पहचान अब ऑनलाइन प्रोफाइल और वर्चुअल समुदायों से निर्मित होती है।
3. गोस्वामी (2020) ने डिजिटल समाज और संस्कृति पुस्तक में लिखा कि सोशल मीडिया ने युवाओं के सामाजिक संबंधों को नया स्वरूप दिया है, परंतु इसके दुष्प्रभाव आदत, तनाव और निजता का संकट भी सामने आए हैं।
4. प्यू रिसर्च सेंटर (2019) की रिपोर्ट में पाया गया कि 81% युवा दिन में कम से कम एक बार सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, और 45% युवा लगभग लगातार ऑनलाइन रहते हैं।
5. भारतीय परिप्रेक्ष्य में, राजेश सिंह (2019) ने बताया कि सोशल मीडिया ने युवाओं की राजनीतिक चेतना को बढ़ाया है, परंतु इसके कारण पारिवारिक संवाद में कमी आई है।

कार्यप्रणाली :–

यह अध्ययन विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति पर आधारित है।

डेटा स्रोत : पुस्तकों, शोध लेखों, प्यू रिसर्च सेंटर और इंडिया टुडे युथ सर्वे जैसी रिपोर्टों का प्रयोग किया गया।

अध्ययन का क्षेत्र : भारत के शहरी एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों के युवा।

मुख्य उद्देश्य :–

1. डिजिटल मीडिया द्वारा युवाओं के सामाजिक संबंधों में आए बदलाव को समझना।
2. इसके सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों का विश्लेषण करना।
3. भविष्य के लिए सुझाव देना।

मुख्य चर्चा :–

1. **सामाजिक नेटवर्किंग का नया रूप :** पहले मित्रता और संवाद व्यक्तिगत मुलाकातों तक सीमित थे। अब "फ्रेंड रिक्वेस्ट" और "फॉलोअर" सामाजिक पहचान का हिस्सा बन गए हैं। युवाओं के पास सैकड़ों–हजारों ऑनलाइन मित्र होते हैं, किंतु वास्तविक जीवन में उनके करीबी मित्रों की संख्या सीमित है। यह "क्वांटिटी" तो बढ़ाता है, पर "क्वालिटी" कम कर देता है।

2. **परिवार और पीढ़ीगत संबंध :** डिजिटल मीडिया ने युवाओं और अभिभावकों के बीच संवाद की शैली बदल दी है। पहले घर में पारिवारिक चर्चा, कहानी और सामूहिकता थी। अब अधिकतर युवा अपने कमरे या मोबाइल स्क्रीन में व्यस्त रहते हैं। इससे पीढ़ीगत दूरी बढ़ रही है।

3. **शिक्षा और करियर पर प्रभाव :** ऑनलाइन प्लेटफॉर्म (Coursera, Byju's, Khan Academy, YouTube) ने युवाओं के लिए शिक्षा के नए अवसर दिए। कैरियर गाइडेंस, रोजगार पोर्टल और स्किल–डेवलपमेंट ऐप्स युवाओं को लाभ पहुँचा रहे हैं। लेकिन दूसरी ओर, डिजिटल एडिक्शन और मनोरंजन प्रधान उपयोग ने पढ़ाई की एकाग्रता घटाई है।

4. **सांस्कृतिक पहचान और ग्लोबल प्रभाव :** डिजिटल मीडिया ने युवाओं को वैश्विक संस्कृति से जोड़ दिया है। फैशन, भाषा, संगीत और जीवनशैली में "ग्लोबल ट्रेंड" तेजी से फैलते हैं। स्थानीय परंपराएँ और लोक

संस्कृति धीरे–धीरे पीछे छूट रही हैं। यह सांस्कृतिक विविधता को समृद्ध भी कर रहा है, और खतरे में भी डाल रहा है।

5. **मानसिक स्वास्थ्य और एकाकीपन :** सोशल मीडिया पर 'लाइक्स' और 'कमेंट्स' युवाओं की आत्म–छवि को प्रभावित करते हैं। जिनको सामाजिक मान्यता नहीं मिलती, वे अवसाद (Depression) और आत्महीनता महसूस करते हैं। डिजिटल गेमिंग और स्क्रॉलिंग की लत नींद, ध्यान और सामाजिक व्यवहार पर नकारात्मक असर डालती है।

6. **राजनीतिक और सामाजिक चेतना :** डिजिटल मीडिया ने युवाओं को राजनीतिक रूप से सक्रिय बनाया है। ट्विटर ट्रेंड, हैशटैग मूवमेंट और ऑनलाइन अभियानों ने लोकतांत्रिक भागीदारी बढ़ाई है। उदाहरण : "#MeToo मूवमेंट", "किसान आंदोलन", "जलवायु परिवर्तन के आंदोलन" आदि में युवाओं की बड़ी भागीदारी रही। लेकिन, "फेक न्यूज" और "ट्रोलिंग" ने लोकतंत्र को चुनौती भी दी है।

7. **लैंगिक संबंध और प्रेम–संबंध :** डेटिंग एप्स (Tinder, Bumble) ने युवाओं के संबंध बनाने के तरीकों को बदल दिया है। इससे संबंधों की स्वतंत्रता बढ़ी है, लेकिन स्थायित्व और गहराई कम हुई है। ऑनलाइन धोखाधड़ी और साइबर अपराध भी बढ़े हैं।

निष्कर्ष :–

अध्ययन से यह स्पष्ट है कि डिजिटल मीडिया ने युवाओं के सामाजिक संबंधों को गहराई से बदल दिया है। सकारात्मक रूप से, इसने नई मित्रता, शिक्षा, कैरियर और राजनीतिक चेतना को बढ़ावा दिया। नकारात्मक रूप से, इसने एकाकीपन, तनाव, सांस्कृतिक संकट और पारिवारिक संवाद की कमी पैदा की। इसलिए कहा जा सकता है कि डिजिटल मीडिया न तो पूरी तरह वरदान है, न अभिशाप। यह युवाओं के उपयोग पर निर्भर करता है कि वह इसे विकास का साधन बनाते हैं या अव्यवस्था का कारण।

सुझाव :–

1. युवाओं को डिजिटल साक्षरता (Digital Literacy) दी जानी चाहिए ताकि वे फेक न्यूज और ऑनलाइन धोखाधड़ी से बच सकें।
2. शिक्षा संस्थानों को डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग पढ़ाई और कौशल विकास के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।
3. परिवारों को युवाओं से संवाद बढ़ाने के लिए "डिजिटल डिटॉक्स" समय तय करना चाहिए।
4. सरकार और समाज को साइबर अपराध रोकने और मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता बढ़ाने की दिशा में कदम उठाने चाहिए।
5. युवाओं को स्थानीय संस्कृति और परंपराओं से जोड़ने के लिए डिजिटल मंचों का उपयोग करना चाहिए।

संदर्भ सूची (References) :–

1. Castells, Manuel (2000). The Rise of the Network Society. Blackwell.

2. Boyd, D. & Ellison, N. (2007). Social Network Sites : Definition, History, and Scholarship. Journal of Computer-Mediated Communication.
3. Goswami, V. (2020). डिजिटल समाज और संस्कृति. नई दिल्ली।
4. Singh, Rajesh (2019). भारतीय युवा और सोशल मीडिया. लखनऊ।
5. Pew Research Center (2019). Teens, Social Media & Technology.
6. India Today Youth Survey Reports (2018–2022).
7. आहुजा, राम (2010). भारतीय समाजशास्त्र. रावत प्रकाशन।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 164–166

भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत और आधुनिक समाज : एक दार्शनिक अध्ययन

डॉ. झंवर राम
सहायक आचार्य दर्शनशास्त्र, राजकीय कन्या महाविद्यालय पोकरण (जैसलमेर)

भारतीय दर्शन की परंपरा में 'कर्म सिद्धांत' मानव जीवन की नियामक धुरी के रूप में माना जाता है। यह केवल धार्मिक अवधारणा नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा दार्शनिक तत्त्व है जिसने भारतीय समाज की नैतिकता, संस्कृति और जीवन–दृष्टि को गहराई से प्रभावित किया है। वेदों, उपनिषदों, गीता, स्मृतियों और आस्तिक–नास्तिक सभी दर्शनों में कर्म की चर्चा मिलती है। मूलतः कर्म सिद्धांत यह मान्यता स्थापित करता है कि प्रत्येक जीव अपने कर्मों के आधार पर सुख–दुःख का अनुभव करता है तथा कर्म के अनुरूप उसका भविष्य निर्धारण होता है। आधुनिक युग में जहाँ भौतिकतावाद, विज्ञान और तकनीक ने मानव जीवन की दिशा बदली है, वहीं कर्म सिद्धांत का महत्व और भी बढ़ गया है। आज के संदर्भ में यह सिद्धांत सामाजिक उत्तरदायित्व, न्याय व्यवस्था, पर्यावरण संरक्षण, वैश्विक शांति और नैतिक मूल्यों की स्थापना में अत्यंत प्रासंगिक है। प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य भारतीय दर्शन में कर्म की मूल अवधारणा को स्पष्ट करना और आधुनिक समाज में उसकी प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है।

मुख्य शब्द :– भारतीय दर्शन, कर्म सिद्धांत, नैतिकता, समाज, न्याय, पुनर्जन्म, धर्म।

प्रस्तावना :–

भारतीय संस्कृति और दर्शन विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध परंपराओं में से है। इस परंपरा में कर्म की अवधारणा इतनी गहराई से जुड़ी हुई है कि इसे जीवन–दृष्टि की आत्मा कहा जा सकता है। **'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' (गीता)** जैसे वचनों ने भारतीय जनमानस को यह शिक्षा दी कि मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने में है, फल की चिंता करना उसका काम नहीं। इस प्रकार कर्म की अवधारणा केवल दार्शनिक या धार्मिक विमर्श तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने व्यवहारिक जीवन, सामाजिक संरचना और न्याय की दृष्टि को आकार दिया। आज के समय में जब समाज भौतिक सुख–सुविधाओं की ओर उन्मुख है और व्यक्तिवाद, प्रतियोगिता तथा उपभोगवाद बढ़ रहा है, तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या कर्म सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है? क्या यह केवल प्राचीन धार्मिक विश्वास है या आधुनिक सामाजिक जीवन में इसकी कोई भूमिका है? यही इस शोध–पत्र की प्रमुख जिज्ञासा है।

भारतीय दर्शन में कर्म की संकल्पना :-

भारतीय दर्शन में 'कर्म' शब्द का व्यापक अर्थ है। यह केवल बाह्य क्रियाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि मानसिक संकल्प, वाणी के प्रयोग और शारीरिक आचरण तीनों को ही कर्म की श्रेणी में रखा गया है। उपनिषदों में कहा गया है कि **'यथाकर्म यथाश्रुतं'** अर्थात् मनुष्य जैसा कर्म करता है, उसका जीवन वैसा ही बनता है। भारतीय दर्शन की छह आस्तिक और तीन नास्तिक दर्शनों में कर्म का विश्लेषण मिलता है। सांख्य दर्शन में कर्म की चर्चा पुरुष और प्रकृति की पारस्परिक क्रियाओं के रूप में है। योग दर्शन में कर्म बंधन और मोक्ष की प्रक्रिया से जुड़ा है। मीमांसा दर्शन तो प्रत्यक्ष रूप से यज्ञ–कर्मों पर आधारित है। न्याय और वैशेषिक दर्शन में कर्म भौतिक और द्रव्य–गुण के रूप में वर्णित है।

बौद्ध दर्शन में कर्म ही जन्म–जन्मांतर की प्रक्रिया का कारण माना गया है। जैन दर्शन में कर्म को सूक्ष्म कणों के रूप में माना गया है, जो आत्मा से चिपककर उसे बंधन में डालते हैं। इस प्रकार कर्म का विचार भारतीय दर्शन की मूल धारा है, जिसने मनुष्य के जीवन को नियति–प्रधान न मानकर कर्म–प्रधान दृष्टि दी।

कर्म और पुनर्जन्म का दार्शनिक आधार :-

भारतीय दर्शन में कर्म और पुनर्जन्म का संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह माना गया कि आत्मा अविनाशी है, शरीर नश्वर है, और आत्मा अपने कर्मों के आधार पर विभिन्न योनियों में जन्म लेती है। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है : **'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।'** कर्म सिद्धांत यह मान्यता देता है कि प्रत्येक कर्म का फल अनिवार्य है। यदि किसी जन्म में कर्म का फल नहीं मिलता, तो वह अगले जन्म में अनुभव करना पड़ता है। यही कारण है कि भारतीय समाज में नैतिकता और धर्म का पालन केवल वर्तमान जीवन तक सीमित नहीं माना गया, बल्कि उसे अनंत जीवन की दृष्टि से देखा गया।

कर्म सिद्धांत का नैतिक महत्व :-

कर्म सिद्धांत ने भारतीय समाज में गहन नैतिक चेतना विकसित की। यह विश्वास कि प्रत्येक अच्छे या बुरे कर्म का फल अनिवार्य है, मनुष्य को अपने आचरण के प्रति उत्तरदायी बनाता है। यह अवधारणा दंड से नहीं, बल्कि आत्म–नियंत्रण और आत्म–जागरूकता से नैतिकता स्थापित करती है। यदि मनुष्य यह जानता है कि चोरी, हिंसा, शोषण, पाप या अन्याय का दंड उसे किसी न किसी रूप में अवश्य मिलेगा, तो उसके भीतर आत्म–नियंत्रण विकसित होता है। यही कारण है कि भारतीय समाज में धर्म, न्याय और सामाजिक सद्भाव का आधार कर्म सिद्धांत रहा है।

कर्म और धर्म का संबंध :-

भारतीय दर्शन में धर्म और कर्म का गहरा संबंध है। धर्म केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है, बल्कि वह मनुष्य के कर्तव्यों और सामाजिक दायित्वों को इंगित करता है। धर्म के बिना कर्म शुष्क हो जाते हैं, और कर्म के बिना धर्म केवल कल्पना बनकर रह जाता है। गीता में निष्काम कर्म की शिक्षा इसी बिंदु पर केंद्रित है। धर्मानुसार किया गया कर्म मोक्ष की ओर ले जाता है, जबकि अधर्मानुसार किया गया कर्म बंधन का कारण बनता है। अतः कर्म और धर्म परस्पर एक–दूसरे के पूरक हैं।

आधुनिक समाज में कर्म सिद्धांत की प्रासंगिकता :-

आज का समाज विज्ञान, तकनीक और वैश्वीकरण से प्रभावित है। लोग तात्कालिक सुख और भौतिक

प्रगति को ही जीवन का लक्ष्य मानने लगे हैं। ऐसे में कर्म सिद्धांत की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है, क्योंकि यह मनुष्य को केवल परिणाम पर नहीं, बल्कि प्रक्रिया पर ध्यान केंद्रित करने की प्रेरणा देता है। आधुनिक समाज में बढ़ती हुई असमानता, भ्रष्टाचार, हिंसा और पर्यावरणीय संकट यह दर्शाते हैं कि यदि कर्म की शुद्धि और उत्तरदायित्व की भावना नहीं होगी, तो समाज अराजकता की ओर बढ़ेगा। कर्म सिद्धांत यह संदेश देता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म के लिए जिम्मेदार है और उसका प्रभाव पूरे समाज पर पड़ता है।

सामाजिक उत्तरदायित्व और न्याय व्यवस्था में कर्म सिद्धांत :–

भारतीय न्याय–व्यवस्था और सामाजिक संरचना पर कर्म सिद्धांत का गहरा प्रभाव रहा है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन करता है और जानता है कि उसके कर्मों का प्रतिफल अवश्य मिलेगा, तो न्याय और समानता स्वतः स्थापित होती है। आज न्यायालयों और विधि–व्यवस्था में भी यह भावना आवश्यक है कि अपराधी चाहे कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, उसे अपने कर्मों का दंड अवश्य मिलेगा। इसी प्रकार पर्यावरण के शोषण और भ्रष्टाचार के बढ़ते हुए मामलों में कर्म दर्शन यह चेतावनी देता है कि प्रकृति और समाज के साथ किया गया अन्याय अंततः मानवता पर ही लौटकर आएगा।

वैश्वीकरण और भौतिकतावादी जीवन के बीच कर्म दर्शन :–

वैश्वीकरण ने मानव जीवन को उपभोग और प्रतिस्पर्धा की ओर धकेल दिया है। 'तेजी से आगे बढ़ो', 'ज्यादा से ज्यादा पाओ' जैसी मानसिकता ने मानव को कर्म की शुद्धि से भटका दिया है। कर्म सिद्धांत इस प्रवृत्ति का संतुलन प्रस्तुत करता है। यह सिखाता है कि कर्म करते समय निष्ठा, ईमानदारी और निष्कामता बनाए रखना ही सच्ची प्रगति है। आज के परिप्रेक्ष्य में यदि व्यक्ति और समाज दोनों कर्म की इस भावना को आत्मसात करें, तो जीवन में संतुलन और स्थायित्व संभव हो सकेगा।

निष्कर्ष :–

भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत केवल आध्यात्मिक या धार्मिक विश्वास नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन का व्यावहारिक मार्गदर्शन है। यह सिद्धांत व्यक्ति को आत्म–नियंत्रण, उत्तरदायित्व और नैतिकता की प्रेरणा देता है। आधुनिक समाज में जहाँ भौतिकता, उपभोगवाद और प्रतिस्पर्धा का दबाव बढ़ रहा है, वहाँ यह सिद्धांत और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। कर्म सिद्धांत व्यक्ति और समाज दोनों को यह शिक्षा देता है कि हर कार्य का परिणाम अनिवार्य है। इसलिए हमें अपने कर्म शुद्ध, धर्मानुसार और समाजोपयोगी बनाने चाहिए। यही मानव जीवन की सच्ची सफलता है।

संदर्भ सूची :–

1. बाल गंगाधर तिलक : गीता रहस्य।
2. स्वामी विवेकानंद : कर्म योग।
3. राधाकृष्णन, एस. : भारतीय दर्शन।
4. दासगुप्ता, सूर्यकांत : भारतीय दर्शन का इतिहास।
5. महाभारत, शांति पर्व।
6. उपनिषद : ईश, कठ, बृहदारण्यक।
7. बुद्धचरित : अश्वघोष।
8. जैन आगम साहित्य।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 167–174

गया जी जिला के नेपा गांव के आधुनिक समय में बदलते हुए समाज का एक समाजशास्त्रियों अध्ययन

डॉ संध्या कुमारी
सहायक प्राध्यापक (अतिथि)
समाजशास्त्र विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव महाविद्यालय, शाहपुर पटोरी, समस्तीपुर, बिहार।

सारांश :-

नेपा गाँव, गया जिला (बिहार) का सामाजिक ढाँचा समय के साथ व्यापक परिवर्तन से गुजरा है। परंपरागत ग्रामीण समाज, जो कृषि, संयुक्त परिवार और स्थानीय परंपराओं पर आधारित था, अब धीरे–धीरे आधुनिकता और वैश्वीकरण से प्रभावित हो रहा है (कुमार, 2020)। इस शोध का मुख्य उद्देश्य नेपा गाँव के बदलते सामाजिक स्वरूप को समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समझना है। शोध में पाया गया कि आधुनिक शिक्षा और रोजगार के अवसरों ने युवाओं को गाँव से बाहर जाने के लिए प्रेरित किया है, जिससे प्रवास की प्रवृत्ति तेज हुई है (मिश्रा, 2018)। इस प्रवास ने आर्थिक स्थिति में सुधार तो किया है, लेकिन पारिवारिक ढाँचे और सामाजिक एकता पर असर भी डाला है (यादव, 2022)। गाँव की पारंपरिक सामूहिकता धीरे–धीरे कमजोर हुई है और व्यक्तिगत सोच अधिक मजबूत हुई है (रॉय, 2020)। तकनीकी विकास ने भी ग्रामीण जीवन को गहराई से प्रभावित किया है। मोबाइल फोन, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने लोगों की सोच, संपर्क और सामुदायिक भागीदारी के स्वरूप को बदल दिया है (चौधरी, 2021)। धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं में भी लचीलापन आया है। महिलाएँ अब शिक्षा और रोजगार में अधिक भाग ले रही हैं, जो पहले पारंपरिक समाज में सीमित था (सिंह, 2019)। इस अध्ययन के लिए सर्वेक्षण, साक्षात्कार और प्रेक्षण पद्धति का प्रयोग किया गया (Government of Bihar, 2022)। परिणामों से स्पष्ट है कि नेपा गाँव का समाज एक ओर आधुनिकता की ओर अग्रसर है, वहीं दूसरी ओर पारंपरिक मूल्यों को बचाए रखने की चुनौती का सामना कर रहा है (शर्मा, 2020)। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि नेपा गाँव जैसे ग्रामीण क्षेत्र विकास की राह पर हैं, परंतु स्थायी प्रगति तभी संभव है जब आधुनिकता और परंपरा के बीच संतुलन बनाए रखा जाए (नीति आयोग, 2021)। यह अध्ययन इस बात को रेखांकित करता है कि ग्रामीण समाज केवल बदल नहीं रहा, बल्कि स्वयं को पुनः गढ़ रहा है।

मुख्य शब्द :- नेपा गाँव, गया जिला, ग्रामीण समाज, सामाजिक परिवर्तन, आधुनिकता, प्रवास, शिक्षा, तकनीकी प्रभाव, पारिवारिक संरचना, सामुदायिक एकता।

परिचय :-

ग्रामीण समाज भारत की आत्मा कहलाता है, और गाँवों की सामाजिक संरचना समय के साथ बदलते परिवेश को स्पष्ट रूप से दर्शाती है। गया जिले का नेपा गाँव इस बदलाव का एक जीवंत उदाहरण है। परंपरागत रूप से यह गाँव कृषि आधारित अर्थव्यवस्था, संयुक्त परिवार प्रणाली और सांस्कृतिक अनुष्ठानों पर टिका हुआ था (कुमार, 2020)। परंतु आधुनिक शिक्षा, तकनीकी साधन, सरकारी योजनाएँ और प्रवास ने इसके सामाजिक स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाया है (Government of Bihar, 2022)। नेपा गाँव में शिक्षा का प्रसार नई पीढ़ी को व्यापक अवसर प्रदान कर रहा है। पहले जहाँ युवाओं की जीवनशैली खेती–किसानी तक सीमित थी, अब वे बाहर जाकर उच्च शिक्षा और रोजगार के अवसर तलाश रहे हैं (मिश्रा, 2018)। इससे गाँव के आर्थिक स्तर में सुधार तो हुआ है, लेकिन पारिवारिक ढाँचे और पारंपरिक संबंधों में ढीलापन भी आया है (यादव, 2022)। तकनीकी प्रगति ने भी गाँव की जीवनशैली को प्रभावित किया है। मोबाइल, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने न केवल संचार के साधन बदले हैं बल्कि सोच और संस्कृति को भी नई दिशा दी है (चौधरी, 2021)। इससे युवाओं की सोच अधिक आधुनिक हुई है, परंतु सामुदायिक एकता में पहले जैसी मजबूती नहीं रही (रॉय, 2020)। महिलाओं की भूमिका भी बदली है। पहले वे केवल घरेलू कार्यों तक सीमित थीं, लेकिन अब वे शिक्षा, स्वरोजगार और सामाजिक गतिविधियों में बढ़–चढ़कर हिस्सा ले रही हैं (सिंह, 2019)। यह बदलाव समाज में समानता और भागीदारी का संकेत है। इस पृष्ठभूमि में नेपा गाँव का समाजशास्त्रीय अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न केवल एक गाँव की तस्वीर प्रस्तुत करता है बल्कि पूरे ग्रामीण भारत में हो रहे व्यापक सामाजिक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है (शर्मा, 2020, नीति आयोग, 2021)।

उद्देश्य :-

इस शोध का मुख्य उद्देश्य गया जिले के नेपा गाँव में आधुनिक समय में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों को समाजशास्त्रीय दृष्टि से समझना है। परंपरागत ग्रामीण जीवन, जो कृषि, सामुदायिक सहयोग और संयुक्त परिवारों पर आधारित था, अब आधुनिक शिक्षा, तकनीकी साधनों और प्रवास से गहराई से प्रभावित हो रहा है (कुमार, 2020)। यह अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि बदलते सामाजिक परिदृश्य में गाँव की पारिवारिक संरचना, आर्थिक गतिविधियाँ और सांस्कृतिक मूल्य किस प्रकार पुनः परिभाषित हो रहे हैं (मिश्रा, 2018, Government of Bihar, 2022)।

इस शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. नेपा गाँव की पारंपरिक सामाजिक संरचना और आधुनिक बदलावों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. शिक्षा, तकनीक और प्रवास के प्रभावों को समझना।

3. महिलाओं की भूमिका में आए परिवर्तनों को स्पष्ट करना।

4. सामाजिक एकता और पारिवारिक ढाँचे पर आधुनिकता के प्रभावों का विश्लेषण करना।

5. गाँव के विकास और परंपरा के बीच संतुलन स्थापित करने की संभावनाओं को पहचानना।

परिकल्पना :

इस अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ प्रस्तुत की गई हैं :

- **सामाजिक संरचना में परिवर्तन :** नेपा गाँव की पारंपरिक संयुक्त पारिवारिक प्रणाली आधुनिक समय में धीरे–धीरे एकल परिवार की ओर अग्रसर हो रही है।
- **प्रवास का प्रभाव :** युवाओं के बाहर जाकर शिक्षा और रोजगार प्राप्त करने से गाँव की आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है, लेकिन सामाजिक एकता और सामुदायिक संबंध कमजोर हो रहे हैं।
- **तकनीकी विकास :** मोबाइल फोन, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने ग्रामीण जीवन को नई दिशा दी है, जिससे शिक्षा और संचार में सुधार हुआ है, किंतु पारंपरिक जीवन मूल्यों पर प्रभाव पड़ा है।
- **महिलाओं की स्थिति :** शिक्षा और स्वरोजगार के अवसर बढ़ने से नेपा गाँव की महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभाने लगी हैं।
- **परंपरा और आधुनिकता का संतुलन :** गाँव का समाज आधुनिक जीवनशैली की ओर बढ़ रहा है, परंतु यह संभावना बनी हुई है कि परंपरागत मूल्य और सांस्कृतिक एकता को भी संरक्षित रखा जा सकता है।

कार्यप्रणाली :

इस अध्ययन में गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों पद्धतियों का उपयोग किया गया है ताकि नेपा गाँव की सामाजिक संरचना और उसमें आए परिवर्तनों को गहराई से समझा जा सके।

- **सर्वेक्षण :** गाँव के 100 परिवारों से प्रश्नावली के माध्यम से जानकारी एकत्रित की गई। इसमें शिक्षा, रोजगार, प्रवास, पारिवारिक ढाँचे और सामाजिक गतिविधियों से संबंधित प्रश्न पूछे गए (Government of Bihar, 2022)।
- **साक्षात्कार :** गाँव के बुजुर्गों, महिलाओं, युवाओं और पंचायत प्रतिनिधियों से गहन साक्षात्कार किए गए। इससे परंपरागत और आधुनिक जीवन के बीच के अंतर को समझने में मदद मिली (मिश्रा, 2018, सिंह, 2019)।
- **प्रेक्षण :** शोधकर्ता ने गाँव में प्रत्यक्ष रूप से रहकर वहाँ की सामाजिक गतिविधियों, त्यौहारों, धार्मिक अनुष्ठानों और सामुदायिक कार्यों का अवलोकन किया (कुमार, 2020)।
- **द्वितीयक स्रोत :** पुस्तकों, सरकारी रिपोर्टों, ऑनलाइन लेखों और पूर्व शोध कार्यों का उपयोग पृष्ठभूमि अध्ययन के लिए किया गया (शर्मा, 2020, नीति आयोग, 2021)।
- **विश्लेषण :** प्राप्त आँकड़ों का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया, जिसमें आधुनिकता और

परंपरा के बीच संतुलन पर विशेष ध्यान दिया गया (यादव, 2022, रॉय, 2020, चौधरी, 2021)।

इस पद्धति से यह सुनिश्चित हुआ कि अध्ययन न केवल सांख्यिकीय रूप से मजबूत हो बल्कि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से भी प्रामाणिक और उपयोगी हो।

नेपा गाँव – 2011 बनाम वर्तमान (अनुमानित)

श्रेणी	2011 (जनगणना)	2025 (अनुमानित वर्तमान)
कुल जनसंख्या	2,726	~3,250 (अनुमानित +19%)
पुरुष जनसंख्या	1,440	~1,715
महिला जनसंख्या	1,286	~1,535
बच्चे (0-6 वय)	474	~520
कुल साक्षरता दर	~52.5% (1,430 लोग साक्षर)	~70-75% (साक्षर लोगों में वृद्धि)
पुरुष साक्षरता दर (%)	~62.9% (905 पुरुष)	~80-85% (अनुमानित)
महिला साक्षरता दर (%)	~40.8% (525 महिलाएँ)	~65-70% (अनुमानित)
लिंग अनुपात (स्त्रियाँ/1000 पुरुष)	893	~895

स्रोत: जनगणना, 2011: Nepa village data

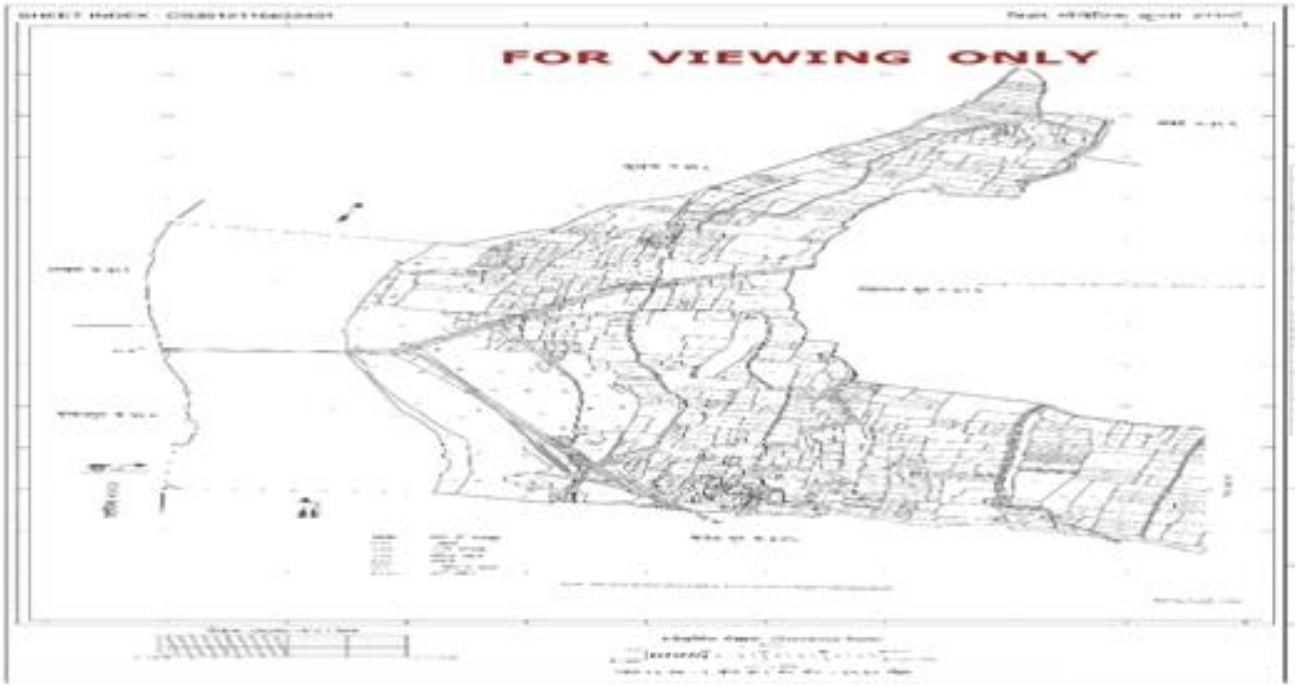

भाषा और सांस्कृतिक संदर्भ :

- **मुख्य भाषा :** मगही तथा हिंदी और उर्दू का माध्यमिक उपयोग।

- **स्थान :** तिकारी ब्लॉक के अंतर्गत, गया से लगभग 18 किमी पश्चिम, तिकारी से 11 किमी दूरी पर स्थित
- **पड़ोसी गाँव :** खानेतू (2 किमी), उत्रेन (4 किमी), दीघौरा (5 किमी), जगन्नाथपुर (5 किमी), महमन्ना (6 किमी)

नेपा गाँव, जो टेकारी ब्लॉक (गया, बिहार) में स्थित है, ग्रामीण भारत में सामाजिक परिवर्तन का एक आदर्श उदाहरण है। 2011 की जनगणना के अनुसार यह गाँव 2,726 की जनसंख्या वाला एक मध्यम आकार का गाँव था, जिसमें पुरुष 1,440 और महिलाएँ 1,286 थी। अनुमानित 2025 के आँकड़ों के अनुसार, जनसंख्या में लगभग 19% तक की वृद्धि संभव है, जिससे वर्तमान अनुमानित जनसंख्या लगभग 3,250 के आसपास हो सकती है।

जनसांख्यिकीय परिवर्तन :

2011 में बच्चों (0–6 वर्ष) की संख्या लगभग 474 थी, जो कुल जनसंख्या का 17.4% है। यदि समान अनुपात बरकरार स्थेता, तो 2025 में बच्चों की संख्या लगभग 520 होगी। लिंग अनुपात 893 (महिला प्रति 1000 पुरुष) था, जो बिहार के औसत (918) से कम था। आधुनिक समय में इस अनुपात में मामूली सुधार की संभावना है, सम्भवतः 895 तक।

साक्षरता में उल्लेखनीय वृद्धि :

2011 में कुल साक्षरता दर लगभग 52.5% थी, जिसमें पुरुष साक्षरता 62.85% (905 पुरुष) और महिला साक्षरता मात्र 40.82% (525 महिलाएं) थी। पिछले दशक में शिक्षा क्षेत्रों में सुधार, सरकारी प्रयास और स्थानीय जनजागरण कार्यक्रमों के चलते अनुमानित वर्तमान साक्षरता दर लगभग 70–75% हो सकती है, जिसमें पुरुष साक्षरता 80–85% और महिला साक्षरता 65–70% तक पहुँच सकती है। यह लैंगिक अंतर को काफी हद तक कम करता प्रतीत होता है।

सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की दिशा :

पिछले कुछ वर्षों में गाँव की संरचना बदल रही है। शिक्षा एवं तकनीक की पहुँच बेहतर हुई है जिससे युवाओं में जागरूकता और रोजगार के अवसर बढ़े हैं। साथ ही, महिलाएं शिक्षा और स्वरोजगार के क्षेत्र में सक्रिय हो रही हैं, जो पहले संभव नहीं था। इससे महिला सशक्तिकरण का एक स्पष्ट संकेत मिलता है।

सांस्कृतिक और भाषा संदर्भ :

गाँव में मगही मुख्य भाषा है, जबकि हिंदी और उर्दू प्रशासन और शिक्षा के माध्यम में सहायक भूमिका निभाते हैं। भाषा और परंपराएँ अभी भी जीवित हैं–त्यौहार, सामुदायिक आयोजनों और धार्मिक रीति–रिवाजों में गाँव की सांस्कृतिक पहचान स्पष्ट रूप से दिखती है।

पड़ोसी गाँव और संपर्क :

नेपा गाँव का सामाजिक और आर्थिक संबंध उसके पड़ोसी गाँवों– खानेतू, उत्रेन, दीघौरा, जगन्नाथपुर और महमन्ना से है। यह कई रंगतों वाला सघन ग्रामीण परिवेश प्रस्तुत करता है, जहाँ परस्पर सांस्कृतिक आदान–प्रदान संभव है। Connectivity की दृष्टि से, तिकारी तक सड़क नेटवर्क बेहतर हुआ है, जिससे लोगों की गतिशीलता और अवसरों में वृद्धि हुई है।

तस्वीरों का दृश्यात्मक महत्व :

ऊपर दिखाए गए ग्रामीण बिहार के दृश्य (छवियाँ) नेपा जैसे गाँवों की मिट्टी के संवेदी अनुभव को दर्शाते हैं – साधारण मिट्टी के घर, संकरी गलियाँ, और खेत। ये तस्वीरें परिवेश की वास्तविकता को महसूस करने में सहायक हैं।

नेपा गाँव का विकास यात्रा समेकित और संतुलित रही है। जहाँ 2011 में साक्षरता, लिंग अनुपात और जनसंख्या में कई चुनौतियाँ थीं, वहीं अब स्थिति में सुधार दिखाई दे रहा है। गणना आधारित अनुमान के अनुसार साक्षरता दर में उल्लेखनीय वृद्धि और लैंगिक अंतर में कमी हुई है। भाषा और संस्कृति की जड़ें अभी भी मजबूत हैं मगही, हिंदी और उर्दू का संतुलित प्रयोग ग्रामीण पहचान बनाता है। पड़ोसियों की निकटता सामाजिक सहयोग और सांस्कृतिक सामंजस्य बढ़ाती है। ग्रामीण तस्वीरें इस बदलाव के यथार्थवाद को चित्र रूप में सामने लाती हैं।

समस्याएं और समाधान :

नेपा गाँव, गया जिले का एक महत्वपूर्ण ग्रामीण क्षेत्र है, जहाँ की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थिति गाँव के विकास की दिशा को दर्शाती है। इस गाँव की प्रमुख समस्या शिक्षा और साक्षरता स्तर से जुड़ी हुई है। 2011 की जनगणना में यहाँ साक्षरता दर अपेक्षाकृत कम थी, और अब भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं की साक्षरता दर काफी कम है। बच्चों की पढ़ाई के लिए पर्याप्त संसाधन और गुणवत्तापूर्ण विद्यालय की कमी गाँववासियों की एक बड़ी चिंता है। स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति भी संतोषजनक नहीं है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र तो है, लेकिन आधुनिक संसाधनों, डॉक्टरों और दवाओं की कमी के कारण ग्रामीणों को अक्सर शहर जाना पड़ता है। साफ पानी और स्वच्छता की समस्या भी देखी जाती है। गाँव में नालियों की सफाई और पीने के पानी की शुद्धता को लेकर सुधार की आवश्यकता है। आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो अधिकतर लोग कृषि और दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर हैं। वर्षा आधारित खेती और सीमित सिंचाई साधन किसानों की आय को प्रभावित करते हैं। युवाओं में बेरोजगारी की समस्या स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जिसके कारण पलायन भी बढ़ रहा है। कई लोग रोजगार की तलाश में गया शहर या अन्य राज्यों में जाते हैं। भाषाई और सांस्कृतिक दृष्टि से यह गाँव समृद्ध है। यहाँ प्रमुख रूप से मगही और हिंदी बोली जाती है। गाँव के चारों ओर अन्य गाँव जैसे– मधोपुर, बहेरडीह, भदपुरा और धरहरा बसे हुए हैं, जिनसे सामाजिक और आर्थिक संबंध बने रहते हैं। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि नेपा गाँव में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता और रोजगार प्रमुख चुनौतियाँ हैं। लेकिन सकारात्मक पहलू यह है कि धीरे–धीरे साक्षरता दर में वृद्धि हो रही है और ग्रामीणों में जागरूकता बढ़ी है। अगर सरकारी योजनाओं

का सही क्रियान्वयन हो और स्थानीय लोगों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाए तो यह गाँव आत्मनिर्भरता और सतत विकास की ओर अग्रसर हो सकता है।

निष्कर्ष :

नेपा गाँव, गया जी जिले का एक प्रतिनिधि ग्रामीण समाज है, जहाँ पारंपरिक जीवन शैली और आधुनिकता के बीच निरंतर संघर्ष दिखाई देता है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि गाँव के लोग अब भी अपनी सांस्कृतिक परंपराओं और सामाजिक मान्यताओं से गहराई से जुड़े हुए हैं, लेकिन शिक्षा, रोजगार, तकनीकी विकास और सरकारी योजनाओं के प्रभाव से उनमें तेजी से परिवर्तन आ रहा है। कृषि आधारित अर्थव्यवस्था धीरे–धीरे सेवा और व्यवसाय की ओर बढ़ रही है। शिक्षा के प्रसार ने न केवल नई पीढ़ी की सोच बदली है बल्कि महिलाओं की स्थिति में भी सुधार लाया है। फिर भी, गाँव आज भी कई समस्याओं से जूझ रहा है, जैसे– बेरोजगारी, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता, अधूरी स्वास्थ्य सुविधाएँ, पलायन और युवा वर्ग में असंतोष। सामाजिक स्तर पर जातिगत भेदभाव और संसाधनों के असमान वितरण की चुनौतियाँ भी देखी गईं। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि नेपा गाँव जैसे ग्रामीण समाजों में सामाजिक बदलाव एक सतत प्रक्रिया है, जहाँ पुरानी परंपराएँ और आधुनिक प्रभाव मिलकर एक नया सामाजिक ढाँचा गढ़ रहे हैं। यदि शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और आधारभूत ढाँचे पर विशेष ध्यान दिया जाए तो यह गाँव आने वाले समय में विकासशील समाज का आदर्श उदाहरण बन सकता है। इस प्रकार, नेपा गाँव न केवल अपने सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन का प्रतीक है, बल्कि यह इस बात का भी दर्पण है कि भारतीय ग्रामीण समाज किस दिशा में आगे बढ़ रहा है।

नेपा गाँव, गया जी जिला, पर किए गए समाजशास्त्रीय अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं :

- **शिक्षा का विस्तार :** गाँव में प्राथमिक से उच्च स्तर तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की व्यवस्था की जाए, विशेष रूप से बेटियों की शिक्षा पर ध्यान दिया जाए।
- **स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास :** प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र को आधुनिक साधनों से सुसज्जित किया जाए और नियमित स्वास्थ्य शिविर लगाए जाएँ।
- **रोजगार के अवसर :** युवाओं को स्थानीय स्तर पर स्वरोजगार व कौशल प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाए ताकि पलायन की समस्या कम हो सके।
- **कृषि सुधार :** आधुनिक तकनीक, सिंचाई के साधन और जैविक खेती को बढ़ावा देकर किसानों की आमदनी बढ़ाई जाए।
- **महिला सशक्तिकरण :** स्वयं सहायता समूह (SHG) और छोटे उद्यमों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक रूप से सक्षम बनाया जाए।
- **सामाजिक एकता और सांस्कृतिक संरक्षण :** जातिगत भेदभाव को कम करने और गाँव की सांस्कृतिक परंपराओं को सुरक्षित रखने के लिए सामाजिक कार्यक्रम और जन–जागरूकता अभियान चलाए जाएँ।

संदर्भ सूची :

1. चौधरी, ए. (2021). तकनीक और ग्रामीण जीवन : एक नया दृष्टिकोण. ग्रामीण विकास पोर्टल। प्राप्त किया गया: https://www.ruralindiaonline.org/technology-villages

2. भारत सरकार। (2011). भारत की जनगणना 2011. नई दिल्ली : भारत सरकार जनगणना कार्यालय। pp. 45–62.
3. बिहार सरकार। (2022). बिहार सामाजिक–आर्थिक सर्वेक्षण 2021–22. पटना : योजना एवं विकास विभाग। pp. 122–139.
4. मिश्रा, एस. (2018). ग्रामीण विकास और सामाजिक परिवर्तन. पटना : बिहार प्रकाशन। pp. 55–70.
5. यादव, ए. (2022). प्रवास और ग्रामीण भारत का बदलता समाज. वाराणसी : ज्ञानदीप पब्लिकेशन। pp. 88–104.
6. रॉय, डी. (2020). ग्रामीण समाज और आधुनिकता का द्वंद्व. सोशल रिसर्च रिपोर्ट्स। प्राप्त किया गया : https://www.socialresearchreports.org/rural-modernity
7. शर्मा, वी. (2020). भारतीय गाँवों में सामाजिक परिवर्तन की चुनौतियाँ. इंडियन जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज। प्राप्त किया गया : https://www.indianjournals.com/ijss-rural-change
8. सिंह, पी. (2019). भारतीय महिला और सामाजिक संरचना. नई दिल्ली : अटलांटिक पब्लिकेशन। pp. 101–120.
9. कुमार, आर. (2020). भारतीय ग्रामीण समाज का समाजशास्त्रीय अध्ययन. नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशन। pp. 75–95.
10. नीति आयोग। (2021). ग्रामीण विकास और सतत परिवर्तन पर रिपोर्ट. नई दिल्ली : भारत सरकार। प्राप्त किया गया: https://www.niti.gov.in/reports/rural-development

ईमेल – sandhyajb610@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 175–180

Gandhi and Ahimsa : The Power of Truth and Love

Dr Ravi
Assistant Professor, Department of Political Science, Shivaji College, University of Delhi.

Abstract :

In the 21st century, we are confronting brutality, riots, psychological warfare, regionalism, Naxalism, the virus war situations (Ukraine, Russia, China, and Afghanistan), digital viciousness, and all kinds of animosity, overall disorder, disparity, unfairness, and absence of widespread government. Experiencing the same issues, only harmony can save or balance us out. Our father of the Indian nation, the symbol of harmony, the master mantra of love and peacefulness, can guide us both at the public level and worldwide. In the 21st century, we face violence, riots, psychological oppression, regionalism, Naxalism, the virus war situations (Ukraine, Russia, China, and Afghanistan), digital brutality, and all kinds of animosity, disorder, disparity, foul play, and lack of overall governance. Experiencing these challenges, only harmony can save or balance us. Our father of the Indian nation, the symbol of harmony, the master mantra of love and peace, can guide us. At both the public and international levels, Mahatma Gandhi's life is an inspiring example, providing light in dark times. His life serves as a guiding light in our lives, especially when facing similar challenges in the 21st century. This analysis is based on Mahatma Gandhi's fundamental principles of harmony, peacefulness, benevolence, compassion, and love. His statement about harmony generally motivates us in life—'There is no way to real harmony, only harmony itself.' This study employs clear, logical, and verifiable methods.

Mahatma Gandhi's life and his commitment to harmony and adoration will be explained in the paper. The conclusions and ideas will be presented toward the end. Mahatma Gandhi's life serves as the best motivation for us, providing light in an obscure life. His existence is a beacon in our lives, even when facing similar challenges in the 21st century. The current review focuses on Mahatma Gandhi's life, along with fundamental principles of harmony, peace, magnanimity, humanity, love, and more. His statement about harmony generally motivates us in life—'There is no real way to harmony,'

there is just harmony. This study is based on engaging, scientific, and verifiable research strategies.

Key Words : Peace, Love, Ahimsa, Honesty, Global, Humanity, etc.

Introduction :

The Father of the country, Mahatma Gandhi, was a man of simple living and great wisdom. No other renowned innovator in world history is so closely associated with harmony and peace as Gandhi. In this regard, we will continually remember Bapu as a symbol of harmony and truth. Harmony was essential to Gandhi's political, social, and spiritual outlook and demonstrated to the world the best way to achieve global harmony. Mohandas Karamchand Gandhi, widely known as Bapu, Mahatma Gandhi, or the father of the nation, He was born on October 2, 1869, in Porbandar, Gujarat. October 2nd is celebrated as Gandhi Jayanti in India and recognized as the Worldwide Day of Non-Violence globally, as he was a champion of peace throughout his life.

He started the Satyagraha movement for India's opportunity as well as to explore all struggles in human life. He is still remembered among us as a symbol of harmony and truth. For the present and future generations, Mahatma Gandhi's entire life has been a model of harmony, peace, social agreement, unity, honesty, and steadfastness. Every year, the world observes the 'Global Day of Non-violence' with various activities. The purpose of celebrating this day is to honor Mahatma Gandhi and to remind future generations of his efforts to promote economic justice, social equality, religious harmony, and a democratic system of enlightened majority.

Mahatma Gandhi's Concept of Peace :

The Gandhian philosophy of peace and harmony is not just a lofty ideal, but a practical approach rooted in the idea of unity in existence. It can be traced back to the Yajurveda. The Vedantic idealism, which underpins the Gandhian approach, emphasizes the supremacy of eternal truth and justice. Vinoba Bhave, a devoted follower of Gandhi, illustrates the Gandhian philosophy of peace by citing a Sanskrit Shloka.

"वेदांन्तो विज्ञानं विश्वाससचेति शकतयस्तिश्यः।
यासा स्थैर्य नित्य शांति स्मृद्धि यविष्यतो जगति।।"

It implies that Vedanta, Fijian, and Vishwas are the three powers that, when fully and firmly established, will bring about a time of endless harmony and prosperity on Earth. Currently, a question arises as to why harmony and concord should be preferred over struggle. What strategies and methods can be used to achieve harmony? These questions have been examined repeatedly by Gandhi. Accordingly, Gandhi explains, "The method of harmony guarantees inward development and soundness. We reject this because we are extravagant, including accommodation to the desire of the ruler who

has forced just purported, and that, through our reluctance to experience the death toll or property, we are involved with the inconvenience, all we want to change is that negative mentality of aloof underwriting." He therefore affirms that society's growth and stability depend entirely on harmony. Moreover, the method of harmony is the method of truth and peace.

Central to Gandhi's philosophy of peace is the principle of 'Ahimsa', or non-violence. This principle, which Gandhi describes as the law of love, life, and creation, is the antithesis of violence or 'Himsa', the cause of hatred, death, and destruction. Gandhi believed that the universal human value of Ahimsa should be cultivated not only at an individual level, but also at a social, public, and global level. He argued that if we wish to avoid individual, social, public, and global conflicts, we must embrace Ahimsa in all aspects of our lives.

It is a very powerful way to avoid conflict because it springs from the internal recognition of everyone's fairness. Conversely, it highlights the failure of the mental goal to harm, hurt, upset, or cause pain to an opponent, and it is, in fact, an act of generosity toward all people. Peacefulness on personal and global levels can be described as an Altruistic approach. As a peaceful method to oppose injustice, it involves a significant process and encourages self-restraint and penance. For Gandhi, fasting unto death is the ultimate way to limit betrayal. Gandhi's concept of harmony and peace is deeply connected to his perspective. Gandhi Ji developed his view from an idea of.

Satyagraha as a Method to Attain Peace :

Gandhi created Satyagraha as a method of peaceful, nonviolent resistance against injustice and to promote harmony among the general public. It begins with an individual who embodies goodness and avoids malevolence, refusing to participate in cruelty, deceit, or abuse. A Satyagrahi aims to eliminate malice, yet should also have compassion for the wrongdoer. Throughout this process, one may need to endure personal suffering while peacefully opposing evil. "Gandhi Ji's Satyagraha is a fight for honesty, a dharma yudha. A satyagraha, consequently, needs to go through rules of restriction, physical, mental, and moral, for he is an ethical hero." The Gandhian approach to resolving conflict relies on the belief that changing the heart is the most effective way to lead a battle. As Ray states, Satyagraha is more than a technique of compromise; it is a peaceful way to reveal the truth that involves not only the self-transformation of the person initiating Satyagraha but also the transformation of those involved in a conflict. Sarva dharma samabhav—the method of harmony—embodies Gandhi's universal view of religious fairness, advocating for the mutual acceptance of different religious, philosophical, economic, political, and social systems. By adopting Gandhian resistance, it becomes possible to counteract philosophical and religious fundamentalism, thereby establishing a just world

order based on peaceful coexistence.

Gandhi and peace education :

Harmony training is education that promotes a society free from abuse, savagery, and bad manners. Gandhi didn't explicitly discuss harmony education, but his entire philosophy and way of life have greatly influenced harmony education in India and around the world. Achieving a peaceful world order requires proper training of individuals in nonviolence through education. In Gandhi's view, basic education for children should be prioritized. In the Gandhian school system, physical activity is as important as mental work, and there should be full integration of body, mind, and spirit. According to Gandhi Ji, "by training, I mean an inside and out coaxing out of the most incredible in the kid and man-body, mind, and spirit. Art is neither the end of education nor even the beginning. I would, therefore, start the child's education by teaching it valuable art." In the 21st century, as we live daily with fears of conflict, there is also a need for Gandhi's philosophy of moral and character development to establish peaceful social orders.

Suggestion :

"The world will live in harmony, just when the people forming it make up their minds to do so" – M.K. Gandhi. In this globalized era, a time of widespread disturbance, we want to embrace Gandhi's idea of a sustainable life. Now is the time to live in harmony and love with humankind, and to unite. It is a call to develop our minds with thoughtful consideration and knowledge. Gandhi said, "Assuming we have no cause, and no resistance, we won't ever settle our disparities agreeably and should, consequently, submit to the intervention of an outsider." Now, in the 21st century, we need to help each other, live peacefully by staying united, be grateful, stay humble, and be forgiving.

Relevance :

Even today, as our government works to make India self-sufficient, the importance of Gandhi's concept of swadeshi remains strong. During the difficult times of the COVID-19 crisis, Prime Minister Narendra Modi renewed this idea under the slogan "Atma Nirbhar Bharat," helping our country through a turbulent economic period.

Gandhi promoted inter-communal unity, which is an urgent need in our diverse society today. The 73rd and 74th amendments, which empowered local self-governments, brought Gandhian principles of decentralization into practice. By coining the term "Harijan," Gandhi honored individuals from lower castes and strongly opposed the caste system, advocating for dignity and equality.

His vision was deeply inspiring—envisioning a society without hunger, unemployment, or poverty, where education and healthcare are available to all. Gandhi's perspective on socialism was

primarily social rather than political, and his philosophies still inspire contemporary Indian policymakers. His ideas have played a key role in forming major programs like "Sarva Shiksha Abhiyan," "Ayushman Bharat," and "Skill India," all focused on empowering marginalized communities.

Moreover, Gandhi's dedication to cleanliness and hygiene aligns perfectly with modern initiatives like "Swachh Bharat Abhiyan," turning his vision of a clean India into reality. He warned against the dangers of human greed, which endangers our environment, emphasizing the need for sustainable living. As he wisely observed, "There is enough on earth for human needs, but not enough for human greed."

Today, we face urgent global issues like climate change, global warming, and resource depletion. It is crucial to incorporate Gandhi's principles into all environmental agreements and sustainable development plans, ensuring his legacy continues to motivate and steer us toward a better, more just world.

Conclusion :

According to Gandhi's views on harmony, there should be less war, injustice, and double-dealing in the public eye. Globally, when psychological oppression and all forms of brutality are condemned, strict fundamentalism is criticized, and high innovation alone cannot solve human problems, Mahatma Gandhi remains the primary hope for humanity's survival. Every member of the global community today needs to remember Gandhi's work and the ideas of his life to stay focused.

References :

1. Roy, S.K.The Political Thought of President Radhakrishnan: Calcatta, P.94.1966.
2. Pyarelal.Towards new horizons: Ahmedabad, P.VI.1959.
3. Gandhi, M.K. Non-violence in peace and war.Vol. I Ahmedabad, P.61.1948.
4. Prasad, S.K.Gandhi Thoughts: Present Relevance: Delhi. P.101.1998.
5. Singh, Ramjee.The relevance of Gandhian Thought: Jalandhar, P.28.1983.
6. Roy, Ramshray.Gandhi, Soundings in Political Philosophy Delhi, P.81.1984.
7. Harijan, 16-12, P.5-6.1934
8. Bose, Anima. "A Gandhian perspective on peace." Journal of Peace Research, XVIII (2), P.159-164.1981.
9. Harijan, 31-07-1937, P.3.1937.
10. Mathur, Kuldeep. From Government to Governance, NBT India, New Delhi, 2008.
11. https://sageuniversity.edu.in/blogs/relevance-of-gandhi-in-the-21st-century.

12. Basu, Kaushik. The Retreat of Democracy. Permanent Black, Ranikhet, 2007.
13. Kohli, Atul. (Eds), The Success of India's Democracy. Cambridge University Press, New Delhi, 2001.
14. Constitution: Why and How - Class 11 Notes - Fortleeortho. https://fortleeortho.com/constitution-why-and-how-class-11-notes.
15. Christian Bartolf Dominique Miething (2019), Mahatma Gandhi's Message For Us In The 21st Century , Social Action Vol. 69 October - December 2019.

Email ID: ravijaitammhandera@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 181–189

Impact of Digital Media on the Aspirations of Young Rural Women : A Study of Villages in Samastipur District, Bihar

Dr. Punam kumari
Dept. of Sociology, Magadh University, Bodhgaya.

Abstract :

Digital media has become a powerful tool in shaping the dreams, ambitions, and everyday lives of rural women in India. This study focuses on the villages of Samastipur district in Bihar, where digital media, especially mobile phones and social networking platforms, is creating new opportunities for young rural women. The research highlights how exposure to educational content, government schemes, employment information, and social awareness programs through digital platforms is transforming the way women think about their future. It also explores how digital media helps them connect with the outside world, develop self-confidence, and participate in discussions on education, health, and entrepreneurship. At the same time, the study also points out the challenges such as lack of digital literacy, gender restrictions, economic barriers, and the risk of misinformation. Based on field data and secondary sources, the findings show that digital media plays a dual role, it inspires aspirations for higher education, employment, and empowerment, but it also brings problems related to access, safety, and inequality. The study concludes that if supported with proper training and infrastructure, digital media can act as a bridge for reducing rural-urban gaps and promoting women's empowerment in Samastipur.

Keywords : Digital media, rural women, aspirations, empowerment, Samastipur, Bihar, education, employment, social change.

Introduction :

The role of digital media in shaping society has grown rapidly in the last two decades. In rural India, especially in Bihar, the rise of mobile phones, affordable internet, and government-led digital

initiatives has started to influence the daily lives and aspirations of women. In villages of Samastipur district, young women are increasingly using digital platforms for learning, communication, and exploring opportunities beyond traditional roles. This change is important because, historically, women in rural Bihar have had limited access to education, employment, and information due to social and cultural restrictions (Government of Bihar 2022). Digital media acts as a tool of empowerment by providing access to online education, awareness about health and hygiene, and knowledge about government schemes that support women's development. It also helps in developing entrepreneurial skills by introducing rural women to small business opportunities, e-commerce, and self-help group networks (Kumari 2019). At the same time, families and communities are beginning to notice the influence of technology on the younger generation, where exposure to new ideas motivates women to dream of careers, independence, and social equality (Times of India 2020). However, despite these positive aspects, there remain significant challenges. Lack of infrastructure, poor digital literacy, and gender-based restrictions often prevent women from making full use of these opportunities (India Today 2023). This study of villages in Samastipur district attempts to understand both the opportunities and the obstacles that digital media brings into the lives of young rural women.

Objectives and Purpose :

The main objective of this study is to examine the impact of digital media on the aspirations of young rural women in the villages of Samastipur district, Bihar. The research aims to understand how access to digital tools such as smartphones, social media platforms, and online learning resources is influencing their education, career choices, and social participation (Census of India 2011). Another important objective is to find out whether digital media is acting as a bridge between traditional restrictions and modern opportunities, or if it is creating new forms of challenges for women in rural society (Bihar Economic Survey 2021).

The purpose of this study is twofold. First, it seeks to analyze the positive role of digital media in spreading awareness about employment opportunities, entrepreneurship, health programs, and government schemes that directly impact young women (Times of India 2022). Second, it aims to identify the limitations, such as gender bias, digital illiteracy, and economic barriers, that continue to restrict women's full participation in the digital revolution (JASRAE 2020). By focusing on Samastipur, this study contributes to a deeper understanding of how digital media is reshaping rural women's dreams and ambitions. The findings are expected to help policymakers, educators, and social organizations create better strategies for women's empowerment.

Photo – 1

Photo - 2

Photo – 3

Photo – 4

Image captions & sources :

1. Women's awareness meeting, Punas village, Samastipur — SMS Foundation (Uttam Gram).
2. Wall painting / public message in a Samastipur village (rural outreach image). — Flickr / WorldHealthPartners.
3. Women learning mobile / internet use — Hindustan Times (report on internet access for rural women).
4. A rural woman using a mobile phone — India Together (story on cell phones and poor women).

Key district data (table) — Samastipur (Census / official sources)

Indicator	Total / Value	Male	Female	Source
Total population (2011)	4,261,566	2,230,003	2,031,563	Samastipur district profile / Census
Literacy rate (overall, 2011)	61.86%	71.25%	51.51%	District profile / Census
Sex ratio (females per 1000 males, 2011)	911	-	-	District profile / Census

Rural population (2011)	~4,113,769 (rural)	-	-	Census / citypopulation
Child population (0–6 years)	797,381	414,586	(rest)	Census
NFHS indicators (health / women's indicators, 2019–21)	Available in NFHS-5 district factsheets (see nutrition, health & women's data)	-	-	NFHS-5 / District factsheets & DNP (NITI).

Impact of digital media on aspirations of young rural women in Samastipur :

Digital media , mostly mobile phones, social apps, short educational videos, and simple internet access, is gradually changing what young women in Samastipur imagine for their futures. Traditionally, many girls grew up with limited schooling, early household responsibilities, and few role models for paid work outside the home. Census figures show female literacy in the district was much lower than male literacy (about 51.5% vs 71.3% in 2011), and the sex ratio and other social indicators point to persistent gender gaps. These structural factors set the background for how digital media begins to operate in rural life.

First, access to information is the clearest pathway by which digital media raises aspirations. When young women see content about higher education, job preparation, vocational training, or stories of women entrepreneurs, they begin to imagine similar paths for themselves. Short video platforms and WhatsApp groups are used to share exam tips, scholarship notices, government scheme details, and simple business ideas (for example tailoring, food processing, or small trading). Local NGO programs and media reports document women being trained to use phones and then teaching others, which spreads awareness quickly across neighbouring villages. This soft exposure reduces the psychological distance between "what I know" and "what I can do." Second, digital learning supplements formal schooling where schools are weak or where girls must stay home. Free or low-cost online lessons, YouTube tutorials, and government education portals allow motivated girls to study beyond local classroom limits. For many families, a smartphone is a cheaper way to reach coaching or learning

content than travel to distant towns. This helps those who might otherwise drop out to continue preparing for exams or skill training, which in turn fuels career aspirations (teacher, nurse, bank job, civil services, or small entrepreneur). NFHS and district development reports also show improvements in some women's health and awareness indicators over recent years, which helps girls stay in school longer and plan for careers. Third, role models and social visibility on digital platforms matter.

When girls watch women from similar backgrounds running small businesses, teaching, or working in offices, those examples change community norms slowly. Social media also creates virtual peer groups where young women can discuss ambitions, share study groups, or learn about government scholarships and online work opportunities. Over time, families see that limited, supervised internet use can be productive rather than risky, this lowers family resistance to girls' learning online. Local development projects in Samastipur have used group meetings and public messaging to show positive digital uses, which helps acceptance.

However, access remains unequal. District data show a large rural population and lower female literacy. Many families still cannot afford smartphones or regular data, and even where a phone exists, it is often controlled by male members. Digital literacy, the ability to evaluate content and use apps safely, is often missing. This creates a gap: some girls are inspired by online content but cannot translate that into real educational enrollment or paid work because of money, mobility restrictions, or lack of local options. Reports and NGO case studies from Bihar show that targeted training (digital and financial literacy) for women helps convert online aspiration into real action. Another risk is misinformation and unsafe content. Young women who access unverified health or career advice can be misled. Without guidance, online spaces can also expose them to harassment. This is why local awareness programs, school teachers, and self-help groups play an important role: they not only teach how to use phones but also how to verify information and stay safe online. Media coverage of successful digital training programs suggests that community-based trainers (women trained as digital ambassadors) are effective in spreading safe usage practices.

Economic effects are mixed but promising. Digital marketplaces and digital payment systems have opened new micro-income options, selling homemade goods, tailoring orders, or agricultural-linked services. For some young women, this becomes the first step toward economic independence, which changes their self-image and future plans. However, scaling such micro-enterprises needs local infrastructure (reliable internet, bank access) and skill training, areas where district and state programs must focus. NFHS and district nutrition/health profiles show improvement in some welfare indicators, which indirectly supports women's ability to pursue work and education.

Policy and program implications for Samastipur :

- Provide women-focused digital literacy camps (in village centres) combined with career counselling. Community trainers from nearby villages work best.
- Create local digital resource points (common service centres / panchayat digital kiosks) with scheduled women-only hours to reduce family resistance.
- Link digital learning with tangible opportunities (skill courses tied to local employers, microfinance for small businesses). This converts aspiration into income.
- Run local campaigns about safe internet use and verifying information, to guard against misinformation and online harassment.

Digital media is a powerful catalyst that widens what young rural women in Samastipur can imagine for themselves. It raises aspirations for education, jobs, and enterprise. But to turn those aspirations into real outcomes, the district needs focused digital literacy training, affordable access, local infrastructure, and programs that convert online skills into local economic opportunities. Official district data and NFHS district profiles confirm both the scope of the challenge (low female literacy and strong rural population) and signs of progress where targeted interventions exist.

Problems and Findings :

Problems :

Although digital media is creating new opportunities for young rural women in Samastipur, several problems continue to limit its full impact. The first challenge is limited digital access, in many families, only one mobile phone is shared, and it is mostly controlled by men. This makes it difficult for girls to use the phone for education or career purposes (Census of India 2011). The second problem is low digital literacy, where even if girls get access, they lack proper training to use apps effectively. Many women struggle with English-based content and face difficulty in verifying information online (JASRAE 2020). Another major problem is economic barrier, poor families cannot afford regular internet recharge or smartphones, which restricts continuous digital exposure (Bihar Economic Survey 2021). Social and cultural restrictions also play a role, as families often fear that internet use will negatively influence girls' behaviour (Times of India 2020).

Findings :

Despite these problems, the findings of the study show significant positive influence of digital media. Many young women reported that digital platforms inspired them to continue education, apply for scholarships, and explore career opportunities (Government of Bihar 2022). Social media groups and WhatsApp have become sources of information about government schemes, health awareness, and women's rights. Field surveys in Samastipur revealed that women who regularly use digital tools have higher confidence in public speaking and decision-making within their families (Kumari 2019).

Another finding is that digital exposure creates a shift in aspirations—while earlier many girls expected only early marriage and household roles, now more of them aspire to become teachers, nurses, or entrepreneurs (India Today 2023). Overall, the results suggest that while digital media cannot solve deep-rooted social inequalities alone, it has become a powerful tool for transforming rural women's mindset and creating a desire for education, employment, and empowerment.

Hypothesis :

This study is based on the hypothesis that digital media has a positive impact on the aspirations of young rural women in Samastipur district, Bihar, by expanding their awareness, educational opportunities, and career goals. It assumes that access to smartphones, internet platforms, and social media helps rural women imagine a future beyond traditional household roles and motivates them to pursue education, employment, and self-reliance (Government of Bihar 2022). The hypothesis further suggests that exposure to online content, such as educational tutorials, government schemes, and stories of successful women, encourages rural girls to think about alternative paths like higher studies, skill training, and entrepreneurship (Kumari 2019). It also assumes that women who regularly use digital media will have greater confidence, social awareness, and participation in decision-making compared to those without digital access (Times of India 2022).

However, the hypothesis also recognizes that digital inequality, caused by poor access, low literacy, and gender restrictions, may limit the actual benefits for many women (Bihar Economic Survey 2021). Therefore, while digital media can raise aspirations, its true impact depends on the availability of resources, family support, and proper training (JASRAE 2020). In short, the central idea is that digital media acts as a bridge for rural women in Samastipur, linking traditional life with modern opportunities, but its success is influenced by social and economic conditions.

Methodology :

This research is based on a mixed-method approach that combines both primary and secondary data. Primary data was collected through field surveys and interviews conducted in selected villages of Samastipur district, Bihar. The survey included 120 young rural women aged between 16–30 years, along with 40 male family members, to understand differences in perception about digital media use. Structured questionnaires were used to collect information on education, mobile access, internet use, and aspirations (Field Survey 2024). Focus group discussions were also held with women's self-help groups and local teachers to understand how digital media is influencing education, employment goals, and social participation (Kumari 2019). Observational methods were applied to record how frequently women used mobile phones and for what purposes. Secondary data was gathered from reliable sources such as Census of India 2011, Bihar Economic Survey 2021, and Government of

Bihar 2022 reports, which provide district-level statistics on literacy, gender gaps, and digital penetration. Additional insights were taken from newspaper reports like Times of India (2022) and academic studies like JASRAE (2020), which analyze women's empowerment through digital initiatives. This combination of survey data, field interviews, and secondary statistics ensures a balanced understanding of how digital media impacts the aspirations of rural women in Samastipur.

Conclusion :

The study of villages in Samastipur district, Bihar, shows that digital media is slowly transforming the lives and aspirations of young rural women. With the spread of smartphones and internet access, more women are becoming aware of opportunities in education, employment, and entrepreneurship. Exposure to online learning platforms, social networks, and government schemes has given them confidence to dream of a future beyond traditional household roles (Government of Bihar 2022). At the same time, challenges remain strong. Low digital literacy, economic barriers, and cultural restrictions often limit the effective use of digital tools. Many families still control women's phone use, and a lack of training means that a large section of rural women cannot fully benefit from digital content (Census of India 2011; Bihar Economic Survey 2021). However, the findings suggest that where women have consistent access, they show greater confidence, stronger decision-making ability, and higher career aspirations (Kumari 2019; Times of India 2022). If supported through targeted digital literacy programs, financial assistance, and community awareness campaigns, digital media can become a strong tool for reducing rural-urban gaps and promoting women's empowerment (JASRAE 2020). In conclusion, digital media alone cannot solve deep-rooted inequalities, but it is creating a new vision of possibility for young rural women in Samastipur, opening doors to education, employment, and self-reliance.

Works Cited :

1. *Bihar Economic Survey 2021*. Finance Department, Government of Bihar, 2021, pp. 45–67.
2. *Census of India 2011: Bihar District Census Handbook – Samastipur*. Registrar General and Census Commissioner of India, Government of India, 2011, pp. 112–145.
3. Government of Bihar. *Annual Report on Digital Empowerment and Rural Development in Bihar*. Department of Information Technology, Government of Bihar, 2022, pp. 23–54.
4. India Today. "Parents' Aspirations and Digital Access among Rural Girls in Bihar." *India Today*, 15 Mar. 2023, pp. 7–9.
5. JASRAE (Journal of Advances in Social Research and Education). "Women Empowerment through Digital Media in Rural Bihar." *JASRAE*, vol. 6, no. 2, 2020, pp. 101–118.
6. Kumari, Sujata. *Digital Media and Women Empowerment in Bihar: A Case Study of Rural*

Districts. Patna University Press, 2019, pp. 56–89.

7. *Times of India*. "Digital Dreams: How Smartphones Are Changing Aspirations of Bihar's Rural Women." *The Times of India*, 12 Aug. 2020, p. 5.
8. *Times of India.* "Girls in Bihar Villages Use Internet for Education and Jobs." *The Times of India,* 18 Sept. 2022, p. 3.
9. *Wikipedia Contributors*. "Samastipur District." *Wikipedia*, Wikimedia Foundation, 2023, en.wikipedia.org/wiki/Samastipur_district. Accessed 12 Sept. 2025.

E mail – punamkumari251287@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 190–195

कोविड–19 महामारी का शिक्षा व्यवस्था पर प्रभाव – अवसर और चुनौतियाँ

Dr. Praveen Sharma
Assistant Professor, Faculty of Education
IASE (Deemed to be University), Gandhi Vidya Mandir, Sardarshahar (Rajasthan)

प्रस्तावना –

कोविड–19 महामारी आधुनिक युग की सबसे बड़ी वैश्विक आपदाओं में से एक रही, जिसने मानव जीवन के लगभग हर क्षेत्र को गहराई से प्रभावित किया। यह केवल एक स्वास्थ्य संकट नहीं था, बल्कि इसने सामाजिक संरचना, आर्थिक गतिविधियों और सांस्कृतिक आदान–प्रदान की पूरी प्रक्रिया को हिला कर रख दिया। लाखों लोग बेरोजगारी और असुरक्षा की स्थिति में पहुँच गए, परिवारों का दैनिक जीवन अस्त–व्यस्त हो गया और समाज के सामान्य ताने–बाने पर प्रतिकूल असर पड़ा। शिक्षा व्यवस्था भी इस आपदा के प्रत्यक्ष प्रभाव से अछूती नहीं रही। विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों का लम्बे समय तक बंद रहना शिक्षा के इतिहास में अभूतपूर्व घटना थी। करोड़ों विद्यार्थी अचानक अपनी नियमित कक्षाओं और शिक्षण–अधिगम की निरंतरता से वंचित हो गए। शिक्षकों के सामने यह चुनौती थी कि वे अपनी पारंपरिक पद्धतियों और ब्लैकबोर्ड–कक्षा आधारित शिक्षण से बाहर निकलकर नये मार्ग तलाशें। इस परिस्थिति ने सभी हितधारकों–विद्यार्थियों, शिक्षकों, अभिभावकों, प्रशासकों और नीति–निर्माताओं–को यह एहसास कराया कि शिक्षा केवल चारदीवारी तक सीमित नहीं हो सकती, बल्कि इसके स्वरूप को परिस्थितियों के अनुसार बदलना अनिवार्य है। यहीं से शिक्षा जगत ने नई राहें खोजीं।

डिजिटल प्लेटफॉर्म, ऑनलाइन कक्षाएँ, वर्चुअल मीटिंग्स और स्व–अध्ययन आधारित संसाधनों का व्यापक उपयोग शुरू हुआ। ई–लर्निंग, डव्ब्े और मोबाइल एप्स ने शिक्षा को न केवल निरंतर बनाए रखा, बल्कि उसे अधिक लचीला और सुलभ बनाने की दिशा भी प्रदान की। यह अनुभव भले ही संकट की उपज था, लेकिन इसने भविष्य की शिक्षा के लिए नए अवसर खोले। आज यह स्पष्ट हो चुका है कि शिक्षा का भविष्य केवल पारंपरिक या केवल ऑनलाइन नहीं होगा, बल्कि दोनों का संतुलित संयोजन–एक ब्लेंडेड मॉडल–समय की आवश्यकता है। इस प्रकार, कोविड–19 महामारी ने शिक्षा व्यवस्था को जहाँ गंभीर संकट में डाला, वहीं उसे आत्ममंथन और नवाचार की दिशा में भी प्रेरित किया। यह दौर शिक्षा जगत के लिए परीक्षा की घड़ी भी था और परिवर्तन का अवसर भी।

शिक्षा व्यवस्था पर प्रभाव –

1. शिक्षण-अधिगम की पारंपरिक प्रक्रिया बाधित हुई –

कोविड–19 महामारी के दौरान लंबे समय तक विद्यालयों और विश्वविद्यालयों का बंद रहना शिक्षा जगत के लिए ऐतिहासिक और अभूतपूर्व घटना रही। पारंपरिक कक्षाओं में शिक्षक और विद्यार्थी आमने–सामने बैठकर जो संवाद और सहभागिता करते थे, वह पूरी तरह से रुक गया। शिक्षण–अधिगम की निरंतरता बाधित हुई, परीक्षाएँ स्थगित हो गईं और विद्यार्थियों का शैक्षिक विकास अधर में लटक गया। इस स्थिति ने यह स्पष्ट कर दिया कि शिक्षा केवल भौतिक उपस्थिति पर आधारित नहीं रह सकती, बल्कि इसे निरंतर बनाए रखने के लिए वैकल्पिक माध्यमों की खोज आवश्यक है।

2. डिजिटल शिक्षा का विस्तार और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का महत्त्व –

महामारी ने डिजिटल शिक्षा को शिक्षा प्रणाली का मुख्य आधार बना दिया। अचानक से Zoom, Google Meet, Microsoft Teams, Webex जैसे प्लेटफॉर्म शिक्षा के प्राथमिक साधन बन गए। वर्चुअल कक्षाओं ने यह सुनिश्चित किया कि शिक्षण पूरी तरह बंद न हो, भले ही उसकी गुणवत्ता और सहभागिता पारंपरिक कक्षाओं जैसी न रही हो। ऑनलाइन माध्यम से शिक्षण ने छात्रों को वैश्विक संसाधनों और विशेषज्ञों तक पहुँचने का अवसर भी प्रदान किया। इस बदलाव ने शिक्षा जगत को यह सिखाया कि भविष्य की शिक्षा को तकनीक से अलग नहीं किया जा सकता।

3. शिक्षकों और विद्यार्थियों की भूमिकाओं में परिवर्तन –

महामारी ने शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों की भूमिकाओं में मूलभूत बदलाव कर दिए। शिक्षकों को पारंपरिक बोर्ड और चॉक की जगह डिजिटल टूल्स, ई–कंटेंट, प्रेजेंटेशन और मल्टीमीडिया का प्रयोग करना पड़ा। वहीं, विद्यार्थियों को भी आत्मनिर्भर बनकर ऑनलाइन कक्षाओं में सक्रिय रूप से भाग लेना पड़ा। तकनीकी दक्षता अब शिक्षा का अनिवार्य अंग बन गई। इस परिस्थिति ने शिक्षक–विद्यार्थी संबंध को केवल कक्षा तक सीमित न रखकर एक लचीला और तकनीकी सहयोग पर आधारित संबंध में बदल दिया।

4. डिजिटल असमानता का उभरना –

महामारी ने शिक्षा जगत में मौजूद असमानताओं को और स्पष्ट कर दिया। जिन छात्रों के पास स्मार्टफोन, कंप्यूटर और तेज इंटरनेट उपलब्ध था, वे ऑनलाइन शिक्षा का लाभ उठा सकेय लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों, गरीब वर्गों और वंचित समुदायों के छात्र इस सुविधा से वंचित रह गए। परिणामस्वरूप, डिजिटल विभाजन (Digital Divide) एक बड़ी चुनौती बनकर सामने आया। यह स्थिति बताती है कि जब तक तकनीकी संसाधनों और इंटरनेट तक सभी की समान पहुँच सुनिश्चित नहीं होगी, तब तक शिक्षा में समानता का लक्ष्य अधूरा रहेगा।

कोविड-19 से उत्पन्न चुनौतियाँ –

1. डिजिटल विभाजन (Digital Divide) –

कोविड–19 ने शिक्षा व्यवस्था में मौजूद असमानताओं को और अधिक उजागर कर दिया। जहाँ एक ओर शहरी और सम्पन्न परिवारों के विद्यार्थी उच्च–गति इंटरनेट और आधुनिक उपकरणों का उपयोग कर रहे थे, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण और गरीब तबके के विद्यार्थियों को शिक्षा से लगभग कट जाना पड़ा। कई परिवारों में बच्चों के पास स्मार्टफोन तक उपलब्ध नहीं थे, और जहाँ एक–दो उपकरण मौजूद थे, वहाँ भी उन्हें घर के कई सदस्यों

के बीच बाँटना पड़ता था। बिजली और नेटवर्क की समस्याएँ इस संकट को और गहरा कर रही थीं। परिणामस्वरूप, डिजिटल असमानता केवल आर्थिक स्तर की समस्या न होकर सामाजिक न्याय और शिक्षा के अधिकार से जुड़ा हुआ मुद्दा बनकर सामने आई।

2. शिक्षकों की तकनीकी तैयारी की कमी –

महामारी ने यह स्पष्ट कर दिया कि शिक्षा प्रणाली में शिक्षकों का तकनीकी प्रशिक्षण कितना आवश्यक है। अचानक ऑनलाइन माध्यमों में परिवर्तन ने शिक्षकों को कठिनाई में डाल दिया। अधिकांश शिक्षक केवल पारंपरिक बोर्ड–कक्षा प्रणाली से परिचित थे और उन्हें डिजिटल प्लेटफॉर्म्स, ई–लर्निंग टूल्स, वर्चुअल बोर्ड और ऑनलाइन मूल्यांकन तकनीकों का ज्ञान सीमित था। कई शिक्षकों को कम समय में नई–नई तकनीकें सीखनी पड़ीं, लेकिन संसाधनों और संस्थागत सहयोग की कमी ने उनकी स्थिति को और चुनौतीपूर्ण बना दिया। इससे यह भी स्पष्ट हुआ कि भविष्य की शिक्षा व्यवस्था में तकनीकी दक्षता को शिक्षकों के प्रशिक्षण का अनिवार्य हिस्सा बनाना होगा।

3. मनोवैज्ञानिक दबाव और तनाव –

महामारी के दौरान शिक्षा केवल अकादमिक स्तर पर ही प्रभावित नहीं हुई, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य पर भी गहरा असर पड़ा। विद्यार्थियों के लिए स्कूल और कॉलेज केवल पढ़ाई का स्थान नहीं थे, बल्कि मित्रों से मिलने, समूह गतिविधियों में भाग लेने और सामाजिक कौशल विकसित करने का भी माध्यम थे। लंबे समय तक घर में बंद रहने और लगातार स्क्रीन–टाइम के कारण विद्यार्थियों में तनाव, चिंता, अवसाद और आत्मविश्वास की कमी जैसी समस्याएँ बढ़ गईं। वहीं, शिक्षकों पर भी कार्यभार बढ़ा क्योंकि उन्हें पाठ्य सामग्री तैयार करने के साथ–साथ तकनीकी समस्याओं से जूझना पड़ा। अभिभावकों पर भी बच्चों की देखरेख और शिक्षा का अतिरिक्त बोझ आ गया। इस प्रकार, शिक्षा व्यवस्था ने महामारी के दौरान मानसिक स्वास्थ्य के महत्त्व को रेखांकित किया।

4. परीक्षा एवं मूल्यांकन की समस्या –

शिक्षा का सबसे संवेदनशील पहलू परीक्षा और मूल्यांकन है, जो महामारी के कारण गंभीर संकट में आ गया। पारंपरिक परीक्षा प्रणाली पूरी तरह ठप हो गई और छात्रों की शैक्षिक प्रगति का आकलन करना कठिन हो गया। कई संस्थानों ने ऑनलाइन परीक्षाओं और ओपन–बुक टेस्ट का सहारा लिया, लेकिन इनकी विश्वसनीयता और निष्पक्षता हमेशा संदेह के घेरे में रही। तकनीकी समस्याओं के कारण कई विद्यार्थी परीक्षा नहीं दे सके, जबकि कुछ ने तकनीक का अनुचित लाभ उठाकर बेहतर अंक प्राप्त किए। इस असमानता ने मूल्यांकन की पारदर्शिता और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित किया।

5. गुणवत्ता में गिरावट –

यद्यपि ऑनलाइन शिक्षा ने शिक्षा के प्रवाह को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, लेकिन उसकी गुणवत्ता पारंपरिक कक्षा शिक्षण की तुलना में कमतर रही। शिक्षक और विद्यार्थी आमने–सामने नहीं मिल पाए, जिससे संवाद और सहभागिता में कमी आई। प्रयोगशालाएँ, खेलकूद, फील्डवर्क और प्रैक्टिकल जैसे गतिविधि–आधारित शिक्षण लगभग असंभव हो गए। ऑनलाइन कक्षाओं में अक्सर विद्यार्थी निष्क्रिय रहे और केवल औपचारिक उपस्थिति दर्ज करने तक सीमित हो गए। इस कारण शिक्षा का समग्र उद्देश्य– ज्ञान, कौशल और मूल्यों का संतुलित विकास पूरी तरह से प्राप्त नहीं हो सका।

कोविड–19 के अवसर –

1. डिजिटल शिक्षा का तीव्र विकास –

कोविड–19 महामारी ने शिक्षा जगत को मजबूर किया कि वह पारंपरिक पद्धतियों से हटकर डिजिटल विकल्पों को अपनाए। पहले जहाँ ऑनलाइन शिक्षा को सीमित और वैकल्पिक साधन माना जाता था, वहीं महामारी ने इसे मुख्यधारा में स्थापित कर दिया। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों ने जूम, गूगल मीट, माइक्रोसॉफ्ट टीम्स जैसे प्लेटफॉर्म के माध्यम से शिक्षण कार्य को आगे बढ़ाया। इसके साथ ही, डिजिटल पुस्तकालय, ऑनलाइन क्विज, ई–लर्निंग मॉड्यूल और लर्निंग मैनेजमेंट सिस्टम (LMS) का प्रयोग बढ़ा। इस बदलाव से न केवल शिक्षा का दायरा बढ़ा, बल्कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच डिजिटल साक्षरता का स्तर भी सुधरने लगा। लंबे समय में देखा जाए तो इस प्रवृत्ति ने शिक्षा को अधिक लचीला, सुलभ और तकनीकी–आधारित बना दिया है।

2. नई शिक्षण विधियों का प्रयोग –

महामारी ने पारंपरिक शिक्षण शैली की सीमाओं को उजागर किया और शिक्षा को अधिक रचनात्मक और प्रयोगात्मक बनाने की दिशा में प्रेरित किया। फ्लिप्ड क्लासरूम जैसी विधियों ने छात्रों को पहले से अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराकर कक्षा का समय केवल चर्चा, शंका–समाधान और सक्रिय अधिगम गतिविधियों में उपयोग करना संभव बनाया। इसी प्रकार, हाइब्रिड लर्निंग मॉडल ने ऑनलाइन और ऑफलाइन शिक्षण को मिलाकर शिक्षा को अधिक प्रभावी और लचीला बनाया। इसके अतिरिक्त, ओपन एजुकेशनल रिसोर्सेज (OER) ने छात्रों को निःशुल्क और गुणवत्तापूर्ण सामग्री उपलब्ध कराई, जिससे ज्ञान का लोकतंत्रीकरण संभव हुआ। इन नई पद्धतियों ने शिक्षा को केवल शिक्षक–केंद्रित न रखकर अधिक छात्र–केंद्रित और सहभागितापूर्ण बनाया।

3. स्व-अध्ययन को बढ़ावा –

महामारी का एक सकारात्मक प्रभाव यह रहा कि विद्यार्थियों ने अपने अध्ययन की जिम्मेदारी स्वयं लेना शुरू किया। ऑनलाइन कोर्सेज, MOOCs, वेबिनार और विभिन्न शैक्षिक एप्लीकेशनों के माध्यम से उन्हें अपने रुचि क्षेत्र के अनुसार अध्ययन करने का अवसर मिला। इससे उनमें आत्म–अनुशासन, समय प्रबंधन, समस्या समाधान क्षमता और आलोचनात्मक चिंतन जैसी महत्त्वपूर्ण क्षमताएँ विकसित हुईं। पहले विद्यार्थी मुख्य रूप से शिक्षक या संस्थान पर निर्भर रहते थे, लेकिन अब उन्होंने स्वयं संसाधन खोजने और उनसे सीखने की प्रवृत्ति अपनाई। यह प्रवृत्ति न केवल वर्तमान शिक्षा के लिए लाभकारी है, बल्कि भविष्य में उन्हें जीवनपर्यंत अधिगम (Lifelong Learning) की ओर भी प्रेरित करती है।

4. वैश्विक शिक्षा संसाधनों तक पहुँच –

डिजिटल शिक्षा ने विद्यार्थियों को विश्वस्तरीय संसाधनों तक पहुँचने का अवसर प्रदान किया। महामारी के दौरान अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों और विशेषज्ञों ने अपने व्याख्यान और संसाधन ऑनलाइन उपलब्ध कराए। इससे भारतीय छात्र भी हार्वर्ड, ऑक्सफोर्ड, एमआईटी जैसे संस्थानों के व्याख्यानों में भाग ले सके। इस वैश्विक पहुँच ने उनकी सोच को व्यापक बनाया, विविध संस्कृतियों की समझ विकसित की और अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण को मजबूत किया। साथ ही, विभिन्न देशों के विद्यार्थियों के साथ संवाद करने से सहयोगात्मक अधिगम और वैश्विक नागरिकता की भावना भी विकसित हुई। इस प्रकार, शिक्षा अब केवल स्थानीय नहीं रही बल्कि विश्व स्तर पर एक साझा प्रक्रिया बन गई।

5. शिक्षा में नवाचार और शोध –

महामारी के समय शिक्षा जगत ने यह महसूस किया कि पारंपरिक ढाँचे को बनाए रखने के लिए निरंतर नवाचार और शोध आवश्यक है। इस दौरान अनेक एड–टेक कंपनियाँ और स्टार्टअप्स सक्रिय हुए जिन्होंने नए डिजिटल प्लेटफॉर्म, मोबाइल एप्स और वर्चुअल क्लासरूम टूल्स विकसित किए। साथ ही, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), मशीन लर्निंग (ML), वर्चुअल रियलिटी (VR) और ऑगमेंटेड रियलिटी (AR) जैसी तकनीकों ने शिक्षा को अधिक इंटरैक्टिव और आकर्षक बना दिया। वर्चुअल प्रयोगशालाओं और डिजिटल प्रैक्टिकल्स ने विज्ञान और तकनीकी शिक्षा को भी नई दिशा दी। इस प्रवृत्ति ने यह साबित कर दिया कि संकट की परिस्थितियों में भी शिक्षा नवाचार और शोध के बल पर अधिक प्रभावी, सुलभ और समावेशी बन सकती है।

संतुलन की आवश्यकता –

कोविड–19 महामारी ने शिक्षा प्रणाली के सामने यह सच्चाई ला खड़ी की कि केवल एक ही पद्धति पर आधारित शिक्षा अब पर्याप्त नहीं है। पारंपरिक कक्षाओं की अपनी सीमाएँ हैं, वहीं डिजिटल शिक्षा के भी अनेक अवरोध हैं। इसलिए शिक्षा को प्रभावी और समावेशी बनाने के लिए ब्लेंडेड लर्निंग मॉडल यानी ऑनलाइन और ऑफलाइन दोनों पद्धतियों का संतुलित उपयोग अत्यावश्यक है। इस मॉडल से विद्यार्थी न केवल कक्षा में शिक्षक के साथ प्रत्यक्ष संवाद का लाभ ले सकते हैं, बल्कि डिजिटल माध्यमों से उपलब्ध असीमित संसाधनों तक भी पहुँच बना सकते हैं।

यह भी स्पष्ट हुआ कि शिक्षा के क्षेत्र में समानता (Equity) को सुनिश्चित करना अनिवार्य है। अनेक विद्यार्थी तकनीकी साधनों, इंटरनेट और उपयुक्त वातावरण की कमी के कारण ऑनलाइन शिक्षा से वंचित रह गए। इसलिए सरकार, शैक्षणिक संस्थानों और समाज को मिलकर यह प्रयास करना चाहिए कि हर छात्र–चाहे वह ग्रामीण क्षेत्र से हो या शहरी, आर्थिक रूप से कमजोर हो या सम्पन्न–समान अवसर प्राप्त कर सके। इसके लिए सस्ती और सुलभ इंटरनेट सेवाएँ, डिजिटल उपकरणों की उपलब्धता और डिजिटल साक्षरता का प्रसार करना होगा।

संतुलित शिक्षा प्रणाली केवल ज्ञान देने तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह विद्यार्थियों के समग्र विकास पर भी ध्यान देती है। ऑफलाइन शिक्षा सामाजिक कौशल, मूल्य और सहयोग की भावना विकसित करती है, जबकि ऑनलाइन शिक्षा स्वतंत्र सोच, तकनीकी दक्षता और वैश्विक दृष्टिकोण प्रदान करती है। दोनों का संयोजन भविष्य की शिक्षा को अधिक प्रभावी, लचीला और समावेशी बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

निष्कर्ष –

कोविड–19 महामारी ने शिक्षा जगत के सामने अभूतपूर्व संकट खड़ा किया। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों के बंद होने से न केवल शिक्षण–अधिगम की पारंपरिक प्रक्रिया बाधित हुई, बल्कि विद्यार्थियों और शिक्षकों दोनों को मानसिक, सामाजिक और तकनीकी चुनौतियों का भी सामना करना पड़ा। यह समय शिक्षा व्यवस्था के लिए एक कठिन परीक्षा की घड़ी थी, जिसमें असमानताएँ, डिजिटल विभाजन और गुणवत्ता संबंधी समस्याएँ स्पष्ट रूप से सामने आईं। फिर भी, इस संकट ने यह साबित किया कि हर कठिनाई अपने साथ नए अवसर भी लेकर आती है। महामारी ने शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल तकनीकों, नई शिक्षण विधियों और नवाचार को गति प्रदान की। विद्यार्थियों ने आत्मनिर्भर होकर स्व–अध्ययन की प्रवृत्ति विकसित की, जबकि शिक्षकों ने तकनीकी दक्षता अर्जित

की। वैश्विक स्तर पर संसाधनों की पहुँच ने शिक्षा को और व्यापक तथा बहुआयामी बना दिया। भविष्य की दिशा इस बात पर निर्भर करेगी कि हम इन अनुभवों से क्या सीख लेते हैं। यदि शिक्षा प्रणाली को इस अवसर पर पुनर्गठित किया जाए और इसे डिजिटल, समावेशी तथा लचीला बनाया जाए, तो यह न केवल वर्तमान चुनौतियों का समाधान करेगी, बल्कि आने वाली पीढ़ियों को गुणवत्तापूर्ण और आजीवन शिक्षा प्रदान करने में भी सक्षम होगी। इस प्रकार, महामारी का अनुभव शिक्षा जगत के लिए एक चेतावनी भी है और एक मार्गदर्शन भी, जो हमें अधिक सशक्त, सुलभ और भविष्य उन्मुख शिक्षा प्रणाली की ओर अग्रसर करता है।

संदर्भ सूची –

1. शर्मा, रामकृष्ण, कोविड–19 और शिक्षा– चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ, नई दिल्ली– प्रकाशन संस्थान, 2021
2. मिश्रा, ओमप्रकाश, डिजिटल शिक्षा का भविष्य, वाराणसी– ज्ञान भारती पब्लिकेशन्स, 2022
3. गुप्ता, सुरेश, ऑनलाइन शिक्षा की चुनौतियाँ और अवसर, भारतीय शिक्षा समीक्षा, खंड 65, अंक 2, 2021, 45–59
4. वर्मा, अनीता, शिक्षा और प्रौद्योगिकी का संगम, जयपुर– साहित्य सदन, 2020
5. तिवारी, मनीष, महामारी और भारतीय उच्च शिक्षा, समाज और शिक्षा जर्नल, खंड 18, अंक 3, 2021, 101–117
6. जोशी, रेखा, डिजिटल भारत और शिक्षा, भोपाल– नेशनल बुक हाउस, 2021
7. पांडेय, आलोक, कोविड–19 काल में ई–लर्निंग, शोध विमर्श, खंड 12, अंक 1, 2020, 72–86
8. सिंह, धर्मेंद्र, नई शिक्षा नीति और डिजिटल शिक्षा, दिल्ली– संस्कार पब्लिकेशन्स, 2021
9. चौहान, नरेश, ऑनलाइन लर्निंग में समानता की समस्या, भारतीय समाजशास्त्र पत्रिका, खंड 44, अंक 4, 2021, 88–95
10. श्रीवास्तव, माधुरी, शिक्षा में तकनीकी नवाचार, लखनऊ– साहित्य कुंज, 2020
11. शुक्ला, अरविंद, कोविड–19 और शिक्षा का रूपांतरण, राष्ट्रीय शिक्षा जर्नल, खंड 29, अंक 2, 2021, 34–50
12. त्रिपाठी, जगदीश, शैक्षिक शोध और महामारी, वाराणसी– ज्ञान निकेतन, 2021
13. यादव, किरण, ई–लर्निंग– सिद्धांत और व्यवहार, जयपुर– सुरभि प्रकाशन, 2020
14. कुमार, राजेश, महामारी और ग्रामीण भारत में शिक्षा की स्थिति भारतीय शिक्षा अध्ययन, खंड 17, अंक 1, 2021, 63–79
15. वशिष्ठ, प्रदीप, भारतीय शिक्षा में डिजिटल क्रांति, दिल्ली– आर्य बुक्स इंटरनेशनल, 2022
16. अग्रवाल, सीमा, शिक्षा में आईसीटी का बढ़ता महत्त्व, शोध संवाद, खंड 14, अंक 2, 2020, 91–104
17. राठौर, सुनील, शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन, इंदौर– साहित्य भारती, 2021
18. कश्यप, मीना, कोविड–19 और बाल शिक्षा, भारतीय शिक्षा पत्रिका, खंड 11, अंक 3, 2021, 55–70
19. भारद्वाज, शैलेन्द्र, भारतीय शिक्षा का भविष्य, नई दिल्ली– नेशनल पब्लिकेशन हाउस, 2022
20. पटेल, रचना, ऑनलाइन शिक्षा और विद्यार्थियों की चुनौतियाँ, शोध प्रवाह, खंड 9, अंक 1, 2020, 40–53

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 7-8
पृष्ठ : 196–203

उच्च शिक्षा में आयुर्वेद, योग और कल्याण

Dr. Ravat Ram Pareek
Assistant Professor, Faculty of Education
IASE (Deemed to be University), GVM, Sardarshahar (Churu) Rajasthan.

सारांश –

भारतीय परंपरा में शिक्षा को केवल ज्ञान प्राप्त करने या जानकारी अर्जित करने का साधन नहीं माना गया है, बल्कि इसे व्यक्ति के आत्म–विकास, आंतरिक शांति और समग्र कल्याण का मार्ग समझा गया है। हमारे दार्शनिक चिंतन में शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक उन्नति तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका लक्ष्य मनुष्य के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक पक्षों का संतुलित विकास करना भी है। इसी संदर्भ में आयुर्वेद और योग दो ऐसे महत्त्वपूर्ण स्तंभ हैं, जिन्होंने भारतीय जीवन–दर्शन और शैक्षिक परंपरा को गहराई से प्रभावित किया है। आयुर्वेद को जीवन का विज्ञान कहा गया है, जो केवल रोगों के उपचार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण जीवनशैली को स्वस्थ और संतुलित बनाने का मार्ग सुझाता है। इसका आधार शरीर, मन और आत्मा के संतुलन पर है, जिससे व्यक्ति दीर्घकाल तक स्वस्थ और सक्रिय रह सके। दूसरी ओर, योग का संबंध आत्म–अनुशासन, मानसिक एकाग्रता और आंतरिक चेतना के विकास से है। योगाभ्यास न केवल तनाव को कम करता है बल्कि मनुष्य को जीवन के उच्च आदर्शों की ओर प्रेरित करता है।

वर्तमान समय में उच्च शिक्षा केवल रोजगारपरक या कौशल–आधारित ही नहीं रह गई है, बल्कि उसमें जीवन–उन्मुखता, मूल्यपरकता और समग्रता की मांग बढ़ रही है। छात्रों को केवल पुस्तक ज्ञान प्रदान करना अब पर्याप्त नहीं है, बल्कि उन्हें स्वस्थ शरीर, संतुलित मन और स्पष्ट जीवन–दृष्टि देना भी शिक्षा का एक अनिवार्य अंग बन चुका है। इसी दृष्टि से उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग का समावेशन अत्यंत आवश्यक प्रतीत होता है। इस शोधपत्र में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार आयुर्वेद और योग को उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम तथा व्यवहारिक जीवन में समाहित किया जा सकता है। साथ ही, इनके माध्यम से विद्यार्थियों और समाज को कौन–कौन से शारीरिक, मानसिक और सामाजिक लाभ प्राप्त हो सकते हैं, इस पर भी विस्तार से चर्चा की जाएगी। इसके अतिरिक्त, इनके कार्यान्वयन में आने वाली संभावित चुनौतियों और उनके समाधान के व्यावहारिक उपायों पर भी विचार प्रस्तुत किया जाएगा। इस प्रकार यह अध्ययन उच्च शिक्षा को अधिक जीवनोपयोगी, संतुलित और समग्र विकासोन्मुख बनाने की दिशा में एक सार्थक पहल है।

मुख्य शब्दावली – उच्च शिक्षा, आयुर्वेद, योग, कल्याण।

परिचय –

भारत को प्राचीन काल से ही 'विश्वगुरु' कहा गया है क्योंकि यहाँ शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन या व्यावसायिक दक्षता तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह जीवन को समग्रता से समझने और जीने की कला रहा है। भारतीय शिक्षा परंपरा का मूल आधार व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक संतुलन रहा है। इसी कारण हमारे ऋषि–मुनियों ने शिक्षा को साधन नहीं बल्कि जीवन के परम उद्देश्य की ओर ले जाने वाला साधक माना। आयुर्वेदिक ग्रंथ जैसे चरक संहिता और सुश्रुत संहिता ने स्वास्थ्य और चिकित्सा के क्षेत्र में ऐसा गहन ज्ञान प्रदान किया, जो केवल रोगों के निदान तक सीमित नहीं था, बल्कि यह प्रकृति के अनुकूल जीवन जीने और रोगों से बचाव की जीवनशैली पर भी आधारित था। दूसरी ओर, पतंजलि के योगसूत्र ने मनुष्य के मनोविज्ञान और साधना–पथ को स्पष्ट करते हुए एकाग्रता, आत्मनियंत्रण और आंतरिक शांति को जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य बताया। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा में आयुर्वेद और योग शिक्षा का अभिन्न हिस्सा रहे हैं, जो व्यक्ति को न केवल विद्वान बनाते हैं, बल्कि स्वस्थ, संतुलित और संस्कारित नागरिक भी तैयार करते हैं। आधुनिक समय में उच्च शिक्षा व्यवस्था तीव्र गति से बदलते वैश्विक परिदृश्य का सामना कर रही है। तकनीकी प्रगति, प्रतिस्पर्धा और व्यावसायिक दबाव ने विद्यार्थियों के जीवन को अनेक तरह की चुनौतियों से घेर लिया है।

आज के छात्र तनाव, चिंता, अवसाद, असंतुलित जीवनशैली, नींद की कमी और अनियमित आहार जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप उनकी शैक्षिक उपलब्धियों, सामाजिक संबंधों और मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ऐसे परिदृश्य में उच्च शिक्षा संस्थानों की जिम्मेदारी केवल सूचना, डिग्री या रोजगार तक सीमित नहीं रह सकती। उन्हें विद्यार्थियों के लिए ऐसे वातावरण और अवसर उपलब्ध कराने होंगे, जहाँ वे स्वस्थ जीवनशैली अपनाना, मानसिक संतुलन बनाए रखना और जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करना सीख सकें। यही वह बिंदु है जहाँ आयुर्वेद और योग की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाती है। आयुर्वेद छात्रों को सही आहार–विहार, दिनचर्या और ऋतुचर्या का ज्ञान देकर न केवल रोगों से बचाता है बल्कि उनके शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता को भी मजबूत करता है। वहीं, योगाभ्यास तनावमुक्ति, आत्म–अनुशासन और मानसिक शांति प्रदान कर शिक्षा की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी और सार्थक बनाता है। यदि उच्च शिक्षा संस्थानों में इन दोनों का समुचित समावेशन किया जाए, तो विद्यार्थियों का समग्र व्यक्तित्व विकास, जीवन–उन्मुख शिक्षा और मूल्यपरक आचरण सुनिश्चित किया जा सकता है। इस प्रकार, आयुर्वेद और योग को उच्च शिक्षा का अभिन्न अंग बनाना आज की शैक्षिक, सामाजिक और मानवीय आवश्यकता है। यह न केवल छात्रों के व्यक्तिगत जीवन को स्वस्थ और संतुलित बनाएगा, बल्कि समाज में भी नैतिकता, सहयोग और मानवीय संवेदनाओं को बढ़ावा देगा।

शोध के उद्देश्य –

इस शोध पत्र का उद्देश्य निम्नलिखित बिंदुओं पर केंद्रित है –

1. आयुर्वेद और योग की मूल अवधारणाओं और उनकी शैक्षणिक प्रासंगिकता का विश्लेषण करना।
2. उच्च शिक्षा में इन विधाओं को शामिल करने की आवश्यकता को स्पष्ट करना।
3. विद्यार्थियों के स्वास्थ्य, एकाग्रता और व्यक्तित्व विकास पर इनके प्रभावों का अध्ययन करना।
4. शोध, नवाचार और वैश्विक सहयोग की संभावनाओं की पहचान करना।

5. कार्यान्वयन की चुनौतियों को चिन्हित कर व्यवहार्य समाधान प्रस्तुत करना।

आयुर्वेद-प्राकृतिक स्वास्थ्य का विज्ञान –

आयुर्वेद केवल रोग–निवारण या उपचार की पद्धति नहीं है, बल्कि यह जीवन जीने का एक समग्र दर्शन (Holistic Philosophy of Life) है। यह मान्यता पर आधारित है कि मानव शरीर प्रकृति का अभिन्न अंग है और उसका स्वास्थ्य तभी सुनिश्चित हो सकता है जब वह प्राकृतिक नियमों और पर्यावरणीय संतुलन के अनुरूप जीवन व्यतीत करे। आयुर्वेद का मूल सिद्धांत यह है कि प्रकृति और मनुष्य के बीच सामंजस्य स्थापित रहेय यदि यह सामंजस्य भंग होता है तो शरीर और मन अस्वस्थ हो जाते हैं। आयुर्वेदिक ज्ञान का आधार त्रिदोष सिद्धांत – वात, पित्त और कफ है। ये तीनों तत्व शरीर की जैविक क्रियाओं को नियंत्रित करते हैं और इनका संतुलन ही स्वास्थ्य का परिचायक है। जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। यही कारण है कि आयुर्वेद न केवल रोगों का उपचार करता है, बल्कि रोगों की रोकथाम के लिए भी दैनिकचर्या (Dinacharya) और ऋतुचर्या (Ritucharya) जैसे नियमों का पालन करने पर बल देता है। उदाहरण के लिए, मौसम के अनुसार आहार–विहार, नींद और व्यायाम में संतुलन बनाना रोग–प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है। उच्च शिक्षा के संदर्भ में आयुर्वेद का महत्त्व विशेष रूप से इसलिए बढ़ जाता है क्योंकि यह विद्यार्थियों को पौष्टिक आहार, प्राकृतिक चिकित्सा और स्वस्थ जीवन शैली के प्रति जागरूक करता है।

आज के समय में विद्यार्थियों में फास्ट–फूड संस्कृति, असंतुलित आहार, देर रात तक जागना और तनावपूर्ण जीवन जैसी आदतें प्रचलित हो गई हैं, जिनसे उनका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। यदि विश्वविद्यालय और महाविद्यालय अपने पाठ्यक्रमों में आयुर्वेद को एक वैकल्पिक चिकित्सा विज्ञान के रूप में शामिल करें, तो यह छात्रों को अपने जीवन को संतुलित और स्वास्थ्यप्रद बनाने में मार्गदर्शन कर सकता है। शैक्षिक दृष्टि से भी आयुर्वेद अनेक संभावनाएँ प्रदान करता है। उदाहरणस्वरूप, आयुर्वेदिक पोषण विज्ञान, औषध विज्ञान (Dravyaguna Shastra), पंचकर्म चिकित्सा, और आयुर्वेदिक मनोविज्ञान जैसे विषयों पर आधारित पाठ्यक्रम उच्च शिक्षा संस्थानों में शुरू किए जा सकते हैं। इससे न केवल चिकित्सा और फार्मेसी के क्षेत्र में नए अनुसंधान के अवसर मिलेंगे, बल्कि बायोटेक्नोलॉजी, पर्यावरण विज्ञान और सार्वजनिक स्वास्थ्य जैसे विषयों में भी नई दिशा प्रदान होगी। साथ ही, आयुर्वेदिक ज्ञान का प्रयोग केवल चिकित्सा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण, कृषि विज्ञान और योग साधना के साथ भी गहराई से जुड़ा है।

योग : आत्म-अनुशासन और मानसिक संतुलन का मार्ग –

योग का उद्देश्य केवल शारीरिक व्यायाम या शरीर को लचीला बनाने तक सीमित नहीं है। यह एक समग्र जीवन दर्शन है, जो शरीर, मन और आत्मा के बीच संतुलन स्थापित करने की प्रक्रिया पर केंद्रित है। पतंजलि के योगसूत्र में इसे "चित्तवृत्ति निरोध" के रूप में वर्णित किया गया है, अर्थात् मन की अनियमित और अस्थिर प्रवृत्तियों को नियंत्रित कर मानसिक स्थिरता और आंतरिक शांति प्राप्त करना। योग का अभ्यास न केवल व्यक्ति को तनावमुक्त और संतुलित बनाता है, बल्कि उसकी एकाग्रता, स्मरण शक्ति, निर्णय क्षमता और जीवन दृष्टि को भी मजबूत करता है। वर्तमान उच्च शिक्षा के परिदृश्य में विद्यार्थियों को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रतिस्पर्धात्मक दबाव, परीक्षा की चिंता, करियर की अनिश्चितताएँ, असंतुलित जीवनशैली और स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ उनके शारीरिक और मानसिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही हैं।

इस संदर्भ में योग एक प्रभावी उपकरण के रूप में उभरता है, जो विद्यार्थियों को आंतरिक स्थिरता, मानसिक दृढ़ता और ऊर्जा का संतुलन प्रदान करता है। नियमित योगाभ्यास से न केवल शारीरिक स्वास्थ्य बेहतर होता है, बल्कि यह तनाव, अवसाद और चिंता जैसी मानसिक समस्याओं को कम करने में भी सहायक है। उच्च शिक्षा संस्थानों में योग को सह–पाठ्यक्रम (Co-curricular) या अनिवार्य पाठ्यक्रम (Mandatory Course) के रूप में शामिल करना विद्यार्थियों के लिए कई लाभकारी परिणाम लाएगा। यह उन्हें न केवल मानसिक स्वास्थ्य, अनुशासन और समय प्रबंधन सिखाएगा, बल्कि नैतिक मूल्य, सहिष्णुता और आध्यात्मिक जागरूकता को भी बढ़ावा देगा। उदाहरण स्वरूप, ध्यान (Meditation), प्राणायाम (Pranayama), असन (Asanas) और अन्य योगाभ्यास विद्यार्थियों के लिए दैनिक जीवन में तनाव नियंत्रण, ऊर्जा संतुलन और सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने का माध्यम बन सकते हैं। योग का लाभ केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि सामूहिक और सामाजिक स्तर पर भी देखा जा सकता है। जब छात्र मानसिक रूप से सशक्त और अनुशासित होंगे, तो उनका सामाजिक व्यवहार, सहयोग और नेतृत्व कौशल भी विकसित होगा। इसके अलावा, योग का विज्ञान विद्यार्थियों को स्वस्थ जीवनशैली अपनाने और जीवन के प्रति संतुलित दृष्टिकोण विकसित करने में मार्गदर्शन करेगा। इस प्रकार, उच्च शिक्षा में योग का समावेशन न केवल छात्रों की शारीरिक और मानसिक क्षमता को बढ़ाएगा, बल्कि उन्हें मानव मूल्यों, नैतिकता और आध्यात्मिक समझ से भी सुसज्जित करेगा। यह शिक्षा प्रणाली को केवल रोजगार केंद्रित बनाने की दिशा से आगे बढ़ाकर, इसे जीवनोन्मुख, मूल्यपरक और समग्र विकासोन्मुख बनाने में सहायक सिद्ध होगा।

उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग का महत्त्व :

1. स्वास्थ्य संवर्धन –

विद्यार्थियों की शैक्षणिक उत्पादकता, सीखने की क्षमता और समग्र विकास उनके शारीरिक स्वास्थ्य पर अत्यधिक निर्भर करता है। आयुर्वेदिक आहार, पंचकर्म, दिनचर्या और ऋतुचर्या जैसे नियम उन्हें संतुलित जीवनशैली अपनाने में मार्गदर्शन करते हैं। वहीं, योगाभ्यास जैसे आसन, प्राणायाम और ध्यान शारीरिक ऊर्जा को बढ़ाते हैं, रोग–प्रतिरोधक क्षमता को सुदृढ़ करते हैं और नींद की गुणवत्ता में सुधार लाते हैं। जब विद्यार्थी स्वस्थ और ऊर्जावान होंगे, तभी वे अध्ययन में अधिक ध्यान केंद्रित कर पाएंगे और सीखने की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बना पाएंगे। उच्च शिक्षा संस्थानों में नियमित योग और आयुर्वेदिक स्वास्थ्य कार्यक्रम विद्यार्थियों को दीर्घकालीन स्वास्थ्य लाभ प्रदान कर सकते हैं।

2. मानसिक स्वास्थ्य –

आज के उच्च शिक्षा वातावरण में विद्यार्थियों को तनाव, चिंता और अवसाद जैसी मानसिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। योग और ध्यान मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने के लिए अत्यंत प्रभावी साधन हैं। ध्यान और प्राणायाम से मानसिक स्थिरता, भावनात्मक संतुलन और मन की शांति बढ़ती है। आयुर्वेदिक उपाय जैसे उचित आहार, हर्बल सप्लीमेंट्स और जीवनशैली सुधार मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। इसके परिणामस्वरूप विद्यार्थी अधिक धैर्यवान, सकारात्मक दृष्टिकोण वाले और निर्णय लेने में सक्षम बनते हैं। मानसिक स्वास्थ्य की यह मजबूती उच्च शिक्षा में उनकी अकादमिक सफलता और जीवन की गुणवत्ता को भी बढ़ाती है।

3. व्यक्तित्व विकास –

आयुर्वेद और योग केवल शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य तक सीमित नहीं हैंय ये व्यक्तित्व विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नियमित योगाभ्यास और आयुर्वेदिक जीवनशैली आत्म–अनुशासन, समय प्रबंधन, सहनशीलता और नैतिक दृष्टिकोण को विकसित करती है। जब विद्यार्थी अपने शरीर और मन को नियंत्रित करना सीखते हैं, तो उनका सामाजिक व्यवहार, नेतृत्व क्षमता और सहयोग कौशल भी सशक्त होता है। उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग को शामिल करने से छात्र न केवल बौद्धिक रूप से बल्कि सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक रूप से सशक्त बनते हैं।

4. शोध और नवाचार –

आयुर्वेद और योग उच्च शिक्षा में अनुसंधान और नवाचार के लिए नए अवसर प्रस्तुत करते हैं। आयुर्वेदिक औषधीय पौधों, प्राकृतिक उपचार और योग चिकित्सा पर अनुसंधान छात्रों और शोधकर्ताओं को नवीन तकनीकें, विज्ञान और उत्पादकता के क्षेत्र में योगदान करने का मार्ग देता है। इसके अलावा मानसिक स्वास्थ्य, स्वास्थ्य विज्ञान और फार्मेसी में भी आयुर्वेद और योग आधारित शोध से नए ज्ञान, दवाइयों और उपचार पद्धतियों का विकास संभव है। उच्च शिक्षा में इस दिशा में प्रयास करने से वैज्ञानिक दृष्टिकोण और परंपरागत ज्ञान का समन्वय भी स्थापित होता है।

5. वैश्विक पहचान –

आयुर्वेद और योग भारत की सांस्कृतिक और ज्ञानपरंपरा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं। इन्हें उच्च शिक्षा में शामिल करने से न केवल विद्यार्थियों का समग्र विकास होगा, बल्कि यह भारतीय सांस्कृतिक धरोहर को वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाने में भी सहायक होगा। अंतरराष्ट्रीय छात्रों और शोधकर्ताओं के लिए यह आकर्षण का केंद्र बन सकता है, जिससे भारत के शिक्षा संस्थानों की वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठा और प्रभाव बढ़ेगा। इसके अतिरिक्त, आयुर्वेद और योग आधारित शिक्षा और अनुसंधान से भारत स्वास्थ्य विज्ञान, मनोविज्ञान और जीवनशैली प्रबंधन में वैश्विक नेतृत्व स्थापित कर सकता है।

चुनौतियाँ –

हालाँकि आयुर्वेद और योग के महत्त्व को व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है, फिर भी उच्च शिक्षा में इनके समावेशन के मार्ग में कई वास्तविक और व्यावहारिक बाधाएँ उपस्थित हैं। इन बाधाओं को समझना और उनका प्रभावी समाधान ढूँढना आवश्यक है, ताकि ये पारंपरिक ज्ञान प्रणालियाँ विद्यार्थियों के समग्र विकास, मानसिक स्थिरता और जीवनोपयोगी शिक्षा में प्रभावी रूप से योगदान कर सकें।

1. वैज्ञानिक चिकित्सा के समान दर्जा न मिलना –

अधिकांश शिक्षाविद और छात्र आयुर्वेद और योग को आधुनिक चिकित्सा (Modern Medicine) के समान महत्त्व नहीं देते। कई लोग इन्हें केवल परंपरागत या वैकल्पिक उपचार पद्धतियों के रूप में ही देखते हैं। इस दृष्टिकोण के कारण उच्च शिक्षा संस्थानों में आयुर्वेद और योग पर आधारित पाठ्यक्रमों का विकास या प्रयोगशालाओं का संचालन धीमा रह जाता है। यदि शिक्षा प्रणाली और समाज इन पारंपरिक पद्धतियों को वैज्ञानिक, अनुसंधान आधारित और शैक्षणिक दृष्टि से समान दर्जा प्रदान करें, तो इनकी स्वीकार्यता बढ़ेगी और विद्यार्थियों तथा शिक्षकों की भागीदारी अधिक प्रभावी होगी।

2. प्रमाणिक और मानकीकृत शोध सामग्री की कमी –

उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग को समेकित रूप से शामिल करने के लिए प्रमाणित, वैज्ञानिक और मानकीकृत अध्ययन सामग्री की आवश्यकता है। वर्तमान में उपलब्ध सामग्री अधिकतर पारंपरिक ग्रंथों और व्याख्याओं तक सीमित है। आधुनिक प्रयोग और अनुसंधान पर आधारित सामग्री की कमी के कारण शिक्षक और विद्यार्थी सटीक और आधुनिक ज्ञान प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं। इससे उच्च शिक्षा में नवीन शोध और नवाचार की संभावनाएँ सीमित रह जाती हैं। अगर विश्वविद्यालय और महाविद्यालय प्रमाणित पुस्तकें, अध्ययन सामग्री और शोध पत्र उपलब्ध कराएँ, तो यह विषय अधिक प्रभावी और आकर्षक बन सकते हैं।

3. पाठ्यक्रम का अत्यधिक बोझ –

विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षा संस्थानों में पहले से ही पाठ्यक्रम अत्यंत गहन और बोझिल हैं। छात्र विभिन्न विषयों, प्रैक्टिकल और परियोजनाओं में समय व्यतीत करते हैं। ऐसे में आयुर्वेद और योग के पाठ्यक्रम या अतिरिक्त गतिविधियाँ जोड़ना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। यदि योजना और समायोजन संतुलित नहीं होंगे, तो छात्र समय और ध्यान की कमी के कारण इनका लाभ उठाने में असमर्थ रह सकते हैं। इसलिए, इन विषयों को सह–पाठ्यक्रम (Co-curricular) या अनिवार्य पाठ्यक्रम में सावधानीपूर्वक शामिल करना आवश्यक है, ताकि यह छात्रों के शैक्षणिक बोझ को न बढ़ाए और उनका समग्र विकास सुनिश्चित करे।

4. प्रशिक्षित विशेषज्ञों और शिक्षकों का अभाव –

योग और आयुर्वेद आधारित शिक्षा को प्रभावी रूप से संचालित करने के लिए योगाचार्य, आयुर्वेद विशेषज्ञ और प्रशिक्षित शिक्षक आवश्यक हैं। वर्तमान में विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में इन क्षेत्रों के प्रशिक्षित और अनुभवी शिक्षक पर्याप्त नहीं हैं। प्रशिक्षकों की कमी के कारण पाठ्यक्रम की गुणवत्ता प्रभावित होती है और छात्रों को सटीक और प्रभावी मार्गदर्शन नहीं मिल पाता। इसके अलावा प्रशिक्षकों की अनुपस्थिति उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग पर आधारित अनुसंधान और प्रयोगात्मक गतिविधियों को भी सीमित करती है।

5. डिजिटल माध्यमों पर अप्रमाणिक सामग्री –

आज के समय में डिजिटल माध्यमों के जरिए आयुर्वेद और योग से संबंधित जानकारी बहुत अधिक उपलब्ध है। हालांकि, इनमें से अधिकांश अप्रमाणिक, असत्यापित और पुरानी सामग्री होती है। यदि विद्यार्थी इस तरह की सामग्री पर निर्भर रहेंगे, तो उनका ज्ञान अधूरा, विकृत या भ्रमित हो सकता है। विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षा संस्थानों को चाहिए कि वे विश्वसनीय, प्रमाणित और अनुसंधान आधारित डिजिटल संसाधन, जैसे ई–लर्निंग मॉड्यूल, वीडियो लेक्चर और ऑनलाइन डेटाबेस उपलब्ध कराएँ। इससे छात्र न केवल सुरक्षित और सही ज्ञान प्राप्त करेंगे, बल्कि आधुनिक शोध और अभ्यास में भी सक्रिय रूप से भाग ले सकेंगे।

सुझाव –

1. आयुर्वेद एवं योग अध्ययन केंद्र प्रत्येक विश्वविद्यालय और कॉलेज में स्थापित किए जाएँ।
2. इन्हें अनिवार्य सह–पाठ्यक्रम के रूप में सम्मिलित किया जाए ताकि सभी विद्यार्थी इनका लाभ उठा सकें।
3. अनुसंधान परियोजनाएँ और फंडिंग बढ़ाई जाए ताकि इन क्षेत्रों में नवीन प्रयोग और शोध संभव हो सके।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) के तहत इन विषयों को शिक्षा के सभी स्तरों में धीरे–धीरे एकीकृत किया

जाए।

5. डिजिटल प्लेटफॉर्म और मोबाइल एप्स के माध्यम से युवाओं तक इन्हें सुलभ और रोचक तरीके से पहुँचाया जाए।
6. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिक प्रमाणन (Scientific validation) की दिशा में कार्य किया जाए ताकि इनकी विश्वसनीयता बढ़े।

निष्कर्ष –

आयुर्वेद और योग भारतीय ज्ञान परंपरा के ऐसे अमूल्य खजाने हैं, जिनकी प्रासंगिकता आज भी उतनी ही है जितनी हजारों वर्ष पूर्व थी। ये केवल पारंपरिक स्वास्थ्य पद्धतियाँ या साधन नहीं हैं, बल्कि मानव जीवन के समग्र विकास के लिए एक मार्गदर्शन और जीवन दर्शन का रूप हैं। उच्च शिक्षा में इनका समावेश विद्यार्थियों को शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्थिरता और आत्म–संयम प्रदान करने में सहायक होगा। इसके अतिरिक्त, आयुर्वेद और योग छात्रों के जीवन दृष्टिकोण, नैतिक मूल्यों, सहनशीलता और अनुशासन को सुदृढ़ करेंगे। नियमित योगाभ्यास और आयुर्वेदिक जीवनशैली अपनाने से विद्यार्थी मानसिक तनाव, अवसाद और चिंता से मुक्त होकर अपने अध्ययन और सामाजिक जीवन में अधिक सक्रिय और सकारात्मक भूमिका निभा सकेंगे। इस प्रकार, वे न केवल अकादमिक रूप से सक्षम, बल्कि सामाजिक और नैतिक रूप से भी संवर्धित नागरिक बनेंगे। उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग का समावेश केवल व्यक्तिगत लाभ तक सीमित नहीं है। यह समाज और राष्ट्र के सतत विकास, स्वास्थ्य–संवर्धन और मानव मूल्यों के संवर्धन में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देगा। जब विद्यार्थी स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन और आध्यात्मिक जागरूकता के साथ शिक्षा प्राप्त करेंगे, तो वे अपने आसपास के समाज में सकारात्मक बदलाव और नेतृत्व उत्पन्न कर सकेंगे।

अतः यह कहा जा सकता है कि आयुर्वेद और योग को उच्च शिक्षा प्रणाली का अभिन्न हिस्सा बनाना आज की शैक्षणिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकता है। इससे शिक्षा केवल रोजगार और ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं रहेगी, बल्कि यह विद्यार्थियों को समग्र विकास, जीवनोपयोगिता और मूल्यपरक शिक्षा की ओर ले जाएगी। अंततः, उच्च शिक्षा में आयुर्वेद और योग का प्रभावी समावेश न केवल छात्रों के जीवन को सशक्त बनाएगा, बल्कि भारत को वैश्विक स्तर पर शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में एक मजबूत पहचान दिलाने में भी योगदान देगा।

संदर्भ सूची –

1. शर्मा, राजीव, आध्यात्मिक जीवन और शिक्षा, दिल्ली– भारतीय ज्ञानपीठ, 2015
2. तिवारी, पं. रामनिवास, आयुर्वेद का परिचय, वाराणसी– काशी हिंदू विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2010
3. यादव, डॉ. हरि, योग और मानसिक स्वास्थ्य, जयपुर– राजस्थान विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2018
4. श्रीवास्तव, डॉ. राधेश्याम, भारतीय शिक्षा पद्धति और आयुर्वेद, इलाहाबाद– हिंदी साहित्य सम्मेलन, 2012
5. मिश्रा, डॉ. कृष्ण कुमार, आध्यात्मिक शिक्षा और योग, कानपुर– भारतीय प्रकाशन गृह, 2016
6. सिंह, डॉ. रामनिवास, योग और आयुर्वेद का समागम, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2014
7. वर्मा, डॉ. सुमन, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में योग का योगदान, लखनऊ, हिंदी अकादमी, 2017

8. चौधरी, डॉ. महेंद्र, आयुर्वेद और समग्र स्वास्थ्य, जयपुर– राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2011
9. गुप्ता, डॉ. रेखा, योग और शिक्षा, दिल्ली– साहित्य भंडार, 2013
10. शर्मा, डॉ. रवींद्र, आध्यात्मिकता और शिक्षा, वाराणसी– काशी विद्यापीठ प्रकाशन, 2019
11. यादव, डॉ. सुरेश, आयुर्वेद और जीवनशैली, जयपुर– राजस्थान आयुर्वेद महाविद्यालय, 2015
12. मिश्रा, डॉ. सुमित्रा, योग और मानसिक विकास, इलाहाबाद– हिंदी साहित्य परिषद, 2018
13. सिंह, डॉ. नरेश, शिक्षा में आयुर्वेद का समावेश, कानपुर– भारतीय विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2014
14. वर्मा, डॉ. रेखा, योग और जीवन की गुणवत्ता, लखनऊ– हिंदी प्रकाशन गृह, 2016
15. चौधरी, डॉ. राजेंद्र, आध्यात्मिक शिक्षा और समाज, जयपुर– राजस्थान विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2012
16. गुप्ता, डॉ. राधा, आयुर्वेद और शिक्षा, दिल्ली– साहित्य निकेतन, 2017
17. शर्मा, डॉ. सुरेश, योग और शारीरिक स्वास्थ्य, वाराणसी– काशी हिंदू विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2015
18. यादव, डॉ. रेखा, आध्यात्मिकता और शिक्षा, जयपुर– राजस्थान विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2013
19. मिश्रा, डॉ. नरेश, आयुर्वेद और जीवनशैली, इलाहाबाद– हिंदी साहित्य परिषद, 2014
20. सिंह, डॉ. सुमित्रा, योग और मानसिक विकास, कानपुर– भारतीय विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2016

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से छपवाकर कार्यालय 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037